आँका-बाँका



लेखक

प्रबोध कुमार सान्याल

प्रकाशक अनुवादक
जगत शङ्खधर
प्रचारक
सरस्वती प्रेस—बनारस

मूल्य साढ़े तीन रुपये

मुद्रक
देवताप्रसाद गहमरी,
संसार प्रेस, बनारस।

पुस्तक के विषय में

मूल बँगला में आँका-बाँका का जब प्रकाशन हुआ था उस समय तक प्रबोध कुमार सान्याल के दो दर्जन से अधिक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके थे। उनकी रचना को प्रशंसा गुरुदेव रवीन्द्रनाथ, शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय, सुभाषचन्द्र बोस आदि महापुरुषों ने की है। बँगला में आज उनकी पुस्तकों में कुछ के तो लगभग ग्यारह-बारह संस्करण हो चुके हैं। हिन्दी में उनकी 'महाप्रस्थानेर पथे' के भी दो संस्करण सरस्वती प्रेस से प्रकाशित हो चुके हैं।

लेखक ने अपनी पुस्तकों मे प्रचलित सामाजिक नीति नियम के विरुद्ध क्रान्तिकारी चरित्रों की सृष्टि की है और यही उनको अत्यधिक प्रसिद्धि का मूल कारण है। 'आँका-बाँका' उनमें सबसे आगे है, यही अनुवादक का विश्वास और अनुवाद की प्रेरणा है।

अनुवाद में थोड़ी स्वतन्त्रता ली गयी है। मूल पुस्तक के बंगाल और बंगाली का किंचित् रूपान्तर कर दिया गया है, अन्यथा लेखक के उद्देश्य को दृष्टि में रखकर ही अनुवाद करने का प्रयत्न है।

—अनुवादक

एक

कंकर कुमार दोस्तों में काँकर नाम से परिचित है। अँगरेज़ी में एम० ए० पास है। उसके अँगरेज़ी कोटेशन और साहित्यिक समालोचना सुनकर उसके मित्र भीत होकर सोचते कि काँकर अब साहित्यिक हो गया है। भय बिलकुल निर्मूल नहीं था, क्योंकि एक बार अकस्मात् पता चला कि काँकर ने किसी मासिक पत्र के सम्पादक के पास एक छोटी गल्प भेजी थी। पर ख़ैरियत यही हुई कि गल्प वापस आ गयी। ख़बर काँकर ने ही फैलायी थी। बोला, प्रतिभा तो मान ली पर दृष्टिकोण पसन्द नहीं आया।

वह कैसे काँकर?

सम्पादक ने लिखा है, आपकी प्रतिभा को ग्रहण करने की शिक्षा देशवासियों में अभी भी नहीं है।

गल्प की कथावस्तु क्या थी?

प्रणय की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि।

कुछ अश्लीलता थी?

काँकर ने कहा, अश्लीलता का सकेत था, वैसा ही जैसा कि उच्च कोटि के साहित्य में रहता है। जैसा रवि बाबू के काव्य में रहता है।

फिर भी वापस कर दी?

हाँ, सम्पादक की भाषा में दृष्टिकोण ज़रा आधुनिक था।

आधुनिक माने?

माने, जिसमें आत्मवंचना न हो, पाठकों को धोखे में डालनेवाली कविता का प्रभाव न हो, वर्षा-वसन्त की इधर-उधर की तारीफ़ न हो।

तब क्या ख़ाक था?

थी सीधी-सादी बातचीत। सत्य का रूखापन—

जो हो, कंकरकुमार के भाग्य में साहित्यिक होना नहीं बदा था। वह घर लौटकर खाने-पीने के बाद कमरे का दरवाज़ा बन्द कर एक चिट्ठी लिखने बैठा। लिखा :—

प्रिय मीनाक्षी, अपने पिता की प्रणय-कथा पर तुमने मुझ से एक गल्प लिखने को कहा था। गल्प 'विश्व-प्रेम' नामक मासिक पत्र में भेजी, किन्तु वह उस दिन वापस आ गयी। इस लिये साहित्य-रचना से बिलकुल इस्तीफ़ा दे दिया। इति। तुम्हारा काँकर।

पुनश्च —

तुमने भी तो एम० ए० पास कर लिया था। अपने पिता (धनवान् पिता) की मृत्यु के बाद मेरा मनोभाव कैसा रहा यह निश्चय ही तुम अनुभव करोगी। मैं दुखित अवश्य हूँ और पिता का रुपया हाथ में आने पर वह दुःख और भी गहरा हो जायगा। वह बड़े रक्षणशील थे और उनमें कृपणता गुण था। मैं उनका सुयोग्य पुत्र हूँ। यह संभव है कि मैं उनका रुपया सत्कार्य में खर्च करूँ अर्थात् अनेक गणतन्त्र के अनुरूप जीवन यापन करूँ। थोड़े दिन पहले कुछ रुपया हाथ लगा था, उससे थोड़ा सा ही ज्ञान संचय किया था। सचमुच के चरित्रहीन बनने में और बहुत सा रुपया लगेगा क्योंकि यह कलकत्ता शहर है। जो हो, जल्दी ही मेरे अच्छे दिन आ रहे हैं, विल का प्रोबेट पाने वाला हूँ—उस समय मेरे साथ रहने के लिये तुम तो तुम—कोई भी सती नारी तक मेरे साथ 'भाई बहन' का सम्बन्ध स्थापित कर सान्निध्य पाने की प्रार्थना करेगी।

एक बात और है, मैं शायद तुमसे एक-आध बरस छोटा हूँ, पर ज्ञान में तुमसे दस बरस आगे बढ़ गया हूँ। एम० ए० पास करके तुम मेरे बराबर अवश्य हो, पर स्त्रियों के जीवन का चरम आदर्श माता बनना है। मेरा आदर्श भिन्न है, आधुनिक समय की जटिल समस्याओं में मैं खुद नहीं जानता कि किस तरह की बेवक़ूफ़ी कर बैठूँगा। मेरे दिमाग़ में इस समय अन्तर्जातीय भावधारा धुएँ की तरह कुंडली बना रही है। इसीलिये किस

जाति का जीवन बिताऊँगा यह कह नहीं सकता। मन में यह पक्का निश्चय कर लिया है कि तुमसे मुलाक़ात न होने तक अन्तर्जातीय पेय ही ग्रहण करूँगा—क्योंकि पृथ्वी का आदि पेय मद्य है, आदि व्यवसाय वेश्या वृत्ति। इसी बीच मैंने कुछ देशसेवा की है। उस दिन घुड़दौड़ के मैदान में साम्यवाद के प्रचार की सुविधा मिली थी। अंग्रेज़ लाट मौजूद थे, मैंने उनके सामने ही समस्त जनसाधारण की भलाई के लिये बाज़ी में थोड़ा रुपया लगाया था। पिछले सोमवार को कलकत्ते के एक संभ्रान्त घराने की एक तरुणी ने आकर किसी सिनेमा कम्पनी के कुछ क़ीमती हिस्से गले लगा दिये। तरुणी के शरीर पर के वस्त्रों में कोई लज्जा नहीं थी, पर आँखों के कोने में कटाक्ष एवं ओठों पर हँसी थी। इसलिये मैंने अधिक रुपयों के ही हिस्से खरीदे। वह मुझे चाय का निमंत्रण दे गयी है। मैं ज़रूर जाऊँगा और तरुणी को उसकी देशसेवा के लिये प्रोत्साहन दूँगा। अंग्रेज़ों के शासन के सिवा भी देशसेवा है, यह सोचता हूँ। सोचता हूँ कि भले घर की स्त्रियाँ आज दो काम कर सकती हैं। पहला है मुसलमानों के शरीर पर हाथ फेरकर उन्हें कांग्रेस में लाना और दूसरा, जनसाधारण के प्राणों में आनन्द संचार करना। तुमने अवश्य ही लक्ष्य किया होगा कि आजकल नाच में, गाने में, अभिनय में, स्वतंत्र प्रेम में कुलांगना और वारांगना में एक भीषण अन्तर्जातीय प्रतिद्वंद्विता चल रही है। वेश्याओं ने कभी जिन व्यवसायों पर एकाधिपत्य कर रखा था, आधुनिक स्त्रियाँ उन्हें फिर वापस लेना चाहती हैं। वेश्याएँ पीछे हट रही हैं। उसका सबूत आजकल का कलकत्ता शहर है। भले घर की स्त्रियों ने पुरुषों के साथ षड्यंत्र करके कलकत्ते की बहुत सी वेश्या-बस्तियों को इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को दिला दिया है। वारांगना समाज आज भीषण संकट में है। उनके समस्त अधिकारों को आधुनिक तरुणियों ने आत्मसात् कर लिया है। गालों पर कविता का रंग मले, ओठों पर पुरुषों के हृदय का रक्त लगाये, मुँह पर मदन-भस्म पोते, कंधे-कटा कपड़ा पहने, गले के पास बहुत-सा भाग अनावृत रखे, रंगीन

पेटीकोट से कालेज के छात्रों की दृष्टि उत्तम-अधम छोड़कर मध्यम में लाये—इन सब साज-सामान से आधुनिक तरुणी वेश्याओं को पराजित करती हैं। इसीलिये, हे मीनाक्षी देवी, मैं तुम्हारे चरण-कमलों में प्रार्थना करता हूँ कि तुम रंगमंच पर आविर्भूत होकर वेश्याओं का दुःख दूर करो और आधुनिक स्त्रियों का गर्व खर्व करो। तुम आकर दोनों नौकाओं पर पैर रखो। मैं तो आदर्श से स्खलित युवक हूँ। मैं तुम्हारी पूर्णिमा और अमावस्या का रूप देखकर गद्यकाव्य की रचना करूँगा।

साहित्य-रचना छोड़ कर मैं आज कल कसरत का अभ्यास कर रहा हूँ। इससे अधिक सेवा होगी। समय मिलने पर गणित और विज्ञान की चर्चा करता हूँ। इसलिये तुम्हें कोई डर नहीं है।

मेरा यौन जीवन कैसा चलता है यह जानने की तुम्हें अवश्य उत्सुकता होगी क्योंकि तुम स्त्री हो। केवल यह बात बताये देता हूँ कि बंगाल देश की स्त्रियों को देखते ही रामकृष्ण की जीवनी पढ़ने लगता हूँ। संयम श्रद्धा में नहीं आता। वह तो वितृष्णा में आता है।

आशा करता हूँ कि तुम्हारे पुरुष मित्र तुम्हारी सलाह के मुताबिक व्यायाम सीखते हैं। मेरा प्रेम और लालसा ग्रहण करो। इति—

तुम्हारा

अन्यतम

दो

तीन दिन बाद चिट्ठी का जवाब आया।

प्रिय कॉकर,

वयोज्येष्ठा को आदर के साथ चिट्ठी लिखना नहीं सीखा। तुमने थोड़ी जानकारी प्राप्त कर ली है, यह सुनकर सन्तोष हुआ। तुम्हारे ज्ञान से मेरा अनावश्यक परिश्रम बच गया। तुमने मेरे हृदय में स्थान नहीं पाया है पर बिस्तर पर आश्रय लिया है। यानी रात में सोने पर शरीर में तुम्हारी चुभन लगती है। इसके बाद की चिट्ठी में मेरे नाम के साथ ज़रा दीदी जोड़ देना। मीनाक्षी दीदी होने से यहाँ स्कूल के अधिकारियों का सन्देह दूर हो सकता है। क्योंकि अविवाहित कुमारी होना ही स्कूल के अधिकारियों को सुविधाजनक है—किसी पुरुष के प्रति अवैध रूप से किसी लड़की के आसक्त होने से उनका काम मुश्किल हो जाता है।

तुम्हारी उम्र में वारांगनाओं के प्रति सहानुभूति और मेरी उम्र में ब्रह्मचारियों के प्रति स्नेह अत्यन्त स्वाभाविक है। डर की बात नहीं है, दोनों ही एक दिन सुस्थ हो सकते हैं। यहाँ जब से काम शुरू किया है तब से मैं कठोर ब्रह्मचर्य पालन करती हूँ। उससे एक यह सुविधा हुई है कि दावतें खूब मिलने से मेरे जलपान का खर्च बच जाता है और उपहारों की बहुतायत से मेरे साज-सामान का खर्च बचता है। माँ-बाप जो मेरा विवाह नहीं करना चाहते उसका मुख्य कारण है कि उन्हें खिला पिला सकूँ। तुम्हारे समान संसार की निन्दा करनेवाले को यह बात मालूम है कि मेरी शक्ल के कारण किसी भी दिन मुझे नौकरी की कमी न रहेगी। यहीं नहीं अगर देशसेवा के लिये सर्वत्यागिनी हो जाऊँ तो युवक समाज-सेवक फ़ौरन मुझे अपनी नेत्री मान लेंगे। पहले सोचती थी कि शायद मुसलमान लोग हिन्दुओं से नफ़रत करते हैं पर आजकल

तीन मुस्लिम युवकों ने चिट्ठी लिखकर मुझे निमंत्रण दिया है कि मैं उनके साथ देशभ्रमण के लिये चलूँ। मैं राज़ी तो ज़रूर हो गई हूँ पर अभी तक दिन तय नहीं किया है। आशा करती हूँ कि मेरा यह अहंकार तुम्हें भद्दा न लगेगा।

उम्र का ज़िक्र औरतों को कटु होता है। मेरी उम्र मत देखो, मन का स्वरूप जानने की कोशिश न करना, केवल मेरी ओर ताको। फिर भी अगर उम्र जानना ही चाहो तो कहूँगी कि सारे शरीर में छब्बीस वर्ष के चिह्न स्तर-स्तर पर शोभित हैं। याद है, दो वर्ष पहले तुम्हारे साथ दार्जिलिंग भागकर गयी थी? जुलाई के महीने में दार्जिलिंग के दृश्यों से मेरे सारे शरीर की उपमा सोचो। वहाँ के पहाड़ों की चोटियों पर नव वर्षा के मेघ की तरह मेरे काले खुले बाल हैं—और नीचे उतरो, जला पहाड़ और बर्चहिल—और भी नीचे उतरो, शस्य-श्यामला कटितल; नीचे उतरो जहाँ पशुराज्य है—जहाँ हिंस्रता है, जहाँ भयानक प्रवृत्तियों का निवास है, जहाँ नदियों की असंख्य रसधाराओं से मानव सृष्टि और खेत प्राण-संजीवित होते हैं। मेरा यह पत्र भले घर के पतिपत्नी के प्रेमपत्र की तरह अश्लील नहीं है। इसमें तरुण साहित्य की दुर्गंध नहीं है, इसलिये मेरे अहंकारपूर्ण आत्मपरिचय की भाषा को तुम समाचारपत्र में भी छाप सकते हो। चौदह में फूल लगे, अठारह में फल, इस समय छब्बीस में पर्याप्त पुष्पस्तबकावनम्रा हूँ। मैं बंगाल देश की लड़की हूँ, माता की बात अगर सच हो तो मेरे पिता भी ज़रूर बंगाली ही थे—पर मेरा शरीर बंगाली लड़की की तरह बिलकुल नहीं है। कुछ नवीन मसाले के मेल से यह बना है। मिट्टी से अधिक भाग पत्थर है, अर्थात् किसी दिन लचेगा नहीं, गर्मी से भी गलेगा नहीं, सिर्फ़ भूकंप से ही टूट सकता है। नाम रखा गया है मीनाक्षी, शायद आँखों में स्वच्छता और हिंस्रता है। शरीर का रंग ख़ूब गोरा नहीं है, गंगाजल की तरह है कि देखते ही स्नान करने की तबियत होती है। और चरित्र? पैर पकड़ कर रो न सकूँगी। उल्टे-हँसते हँसते गले में झूल सकूँगी।

आशा है कि मज़े में हो। स्नेह संभाषण के साथ जो दे सकती वह चिट्ठी में नहीं दिया जा सकता है। इस लिये उसकी छाया ही स्वीकार करो। इति—

चिरकालिनी

पुनश्च—

अब नौकरी छोड़ सकती हूँ कि नहीं यह लिखना। इधर कुछ महीनों में चार सौ तिहत्तर रुपये जमा हो गये हैं। यह मज़े में खरच किये जा सकते हैं क्योंकि और भी छब्बीस वर्ष मुझे रुपयों की कमी न होगी। उसके सिवा तुम्हारी पैतृक सम्पत्ति के साथ मेरे यौवन का अच्छेद्य सम्बन्ध है। मैं अभी चिरकालीन शक्ति से तुम्हें निरस्त्र कर सकूँगी इसमें सन्देह नहीं है। नेत्रों के सामान्य कटाक्ष और ओठों की भाषा—इससे ही मेरे भोजन का प्रबन्ध हो जायगा। तुम्हारे दर्शन कब मिलेंगे यह इस वयोज्येष्ठा दासी को ज़रा बताना। तुम्हारी चरण-सेवा करने मे मुझे संकोच नहीं है, क्योंकि रसिक जन जानते हैं कि स्त्रियों द्वारा हाथ फेरने से पुरुषों के शरीर में तरह तरह के परिवर्तन होते हैं। भारतवर्ष के व्यवस्थाकारों को रसज्ञान था।

तुम एक उद्भ्रान्त युवक हो और मैं कूलनाशिनी युवती। अर्थात् मैं इतनी वेगवती हूँ कि निरन्तर कूलक्षय करते हुए चले बिना मेरा वास्तविक परिचय नहीं मिल सकता। विप्लव के साथ जिस प्रकार नाश का सम्बन्ध है उसी प्रकार तुम्हारे साथ मैं हूँ। किसी भी चीज़ के निर्माण की प्रतिभा नहीं है पर तोड़-फोड़ की एक उल्लसित करनेवाली प्रवृत्ति बड़ा उत्साह देती है। तुम्हारी ज्ञानार्जन की चाह और मेरी अध्यापिका वृत्ति—यह दोनों ही जैसे तूफ़ान के पहले की शान्ति के समान हैं। विप्लव और ध्वंस का तरीक़ा होता है कि वे अपने घर की तरफ़ मुँह नहीं करते, बाहर ही उनका शोरग़ुल रहता है। उनमें न तो स्टाइल रहता है और न जीनियस—फिर भी नवागन्तुकों के लिये वे रास्ता बना जाते हैं। मैं तुम्हें यह बता देना चाहती हूँ कि मैं रंगमंच पर ओरियंटल स्टाइल के नाच दिखा-कर जनसाधारण के मन में रस-संचार भले ही कर सकूँ, पर ब्याह करके

पति के साथ पतितावृत्ति नहीं कर सकूँगी, यहाँ की स्त्रियों की धारणा है कि मुझमें कुछ विशेषता है। उस दिन मिस दत्त नाम की एक युवती बोली, आपकी तरह की स्त्री देश भर में न मिलेगी। मैंने जवाब दिया—ढूँढ़ने से और पता लगाने से हर गली और कूचे में मेरी तरह की स्त्रियाँ मिलेंगी। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि वे बकती नहीं, मैं बकती हूँ। जो लोग कहते हैं कि अविश्वास, सन्देह और अश्रद्धा ने केवल आधुनिक युग की सन्तानों के घरों में आग लगा दी है, वे सच बात नहीं कहते; स्त्रियों के मन में बहुत पहले ही बारूद इकट्ठा हो गयी थी पर उसका मुँह तोपा हुआ था। प्रमाण चाहिये? राजमार्ग की ओर आँख उठाकर देखो—वहाँ प्रकाशरूप में स्त्री आन्दोलन चल रहा है, गली-कूचों में देखो, वहाँ स्त्रियाँ विद्रोह कर रही हैं। उनके हाथ में रुपये नहीं हैं किन्तु उनका मूलधन शरीर है। अखबार पढ़ो—आज स्त्रियाँ ही घरों का नाश कर रही हैं। पता है क्यों? सब चीज़ों का नया मूल्यांकन करना होगा। जिन्हें बड़ा आदमी समझती थी वे आज बड़े नहीं हैं, उसका सबब है कि नये अर्थशास्त्र से पता चला है कि रुपये से बड़ा बना जा सकता है। मनोविज्ञान पढने से पता चला है कि श्रद्धा भक्ति प्रेम आदि बड़ी मामूली चीज़ें हैं। माँ-बाप की बहुत खातिर करने की ज़रूरत नहीं है, शायद वह बड़े नीचे के स्तर के जीव हैं।

जो भी हो, तुम्हारी चिट्ठी पाने के बाद अपना कार्यक्रम निश्चित करूँगी। ज़ंजीर तोड़ने में मुझे विलम्ब नहीं लगेगा क्योंकि मैं जहाँ रहती हूँ वह पक्षियों का घोसला है, ठेस लगते ही टूट जायगा। उसके सिवा मैं अपना भविष्य पाँच मिनट में ही सोच सकती हूँ। अगर यह लोग मुझे छोड़ना नहीं चाहेंगे तो रात में भैरवी का रूप धारण कर घर छोड़ दूँगी। कूल-नाशिनी पद्मा की गति अकूल की ओर होगी। शीघ्र पत्र लिखना। इति—

तुम्हारी ही अन्यतमा—

*

* *

पैतृक कालीन सामान कंकर के घर से जाने लगे। पुराने सामान की दूकान पर कंकर ने बहुत सा सामान बेचकर रुपया खड़ा कर लिया। कृष्ण-नगर में एक सगी बहन थी। उसे बुला लिया। उसका नाम सुप्रभा था। वह उम्र में कंकर से लगभग तीन बरस बड़ी थी। वह चार संतानों की माता थी और उसका पति वकील था। सबेरे कंकर का दिमाग़ सही था। बोला, अपना हिस्सा समझ लो।

सुप्रभा हँसकर बोली, अब मेरा कैसा हिस्सा है रे?

संयोग से तुम लड़की हो और मैं लड़का। दोनों के पिता एक ही थे। पिता के अन्याय का मैं प्रतीकार करना चाहता हूँ। घर और बैंक का रुपया, यह दो चीज़ें छोड़ कर जो तबियत हो ले लो।

अरे बुद्धू, फिर रह क्या गया?

जो कुछ अस्थावर है।

ठीक, और शायद तू घर गिरस्ती नहीं करेगा?

कंकर बोला, उसकी कोई चिन्ता नहीं, हर घर मेरा घर है, हर रास्ते पर मेरा संसार रहेगा। घर-द्वार तुम्हारे लिये छोड़ दिया, तीन दिन का समय दे रहा हूँ—घर ख़ाली कर दो।

छोटे भाई के भविष्य की चिन्ता से सुप्रभादेवी भीत होकर बोलीं, मैंने तेरे लिये लड़की ठीक कर ली है—इसी फागुन में—

कोई चिन्ता नहीं, इस फागुन से ही उस लड़की के माहवारी ख़र्च का बन्दोबस्त कर दूँगा। भारतवर्ष में इस समय पैंतीस करोड़ लोग हैं, इसलिये मेरा ब्याह न हो तब भी काम चल सकता है।

क्या तू संन्यासी होना चाहता है?

न, मैं आवारा होना चाहता हूँ। उत्कृष्ट आवारा। मेहरबानी कर उपदेश मत देना और अनुग्रहपूर्वक खोज-खबर न लेना।

तो चाल-चलन खोकर क्या करेगा?

एक हवाई जहाज़ खरीदूँगा, जंगलों में शिकार करता घूमूँगा, हिमालय

जाकर तपस्या करूँगा, देशसेवा में लगूँगा, सिनेमा का अभिनेता बनूँगा, संसार-भ्रमण के लिये निकलूँगा—यानी कुछ नहीं करूँगा, केवल ज़रा स्वाधीन भाव से रहने की चेष्टा करूँगा।

तीन दिन बाद देखा गया कि सुप्रभा ने कुछ नहीं लिया। पति के साथ जाने के लिये तैयार होते समय कंकर को बुलाकर कहा, देख रही हूँ कि तू सब नष्ट कर देगा। मुझे कुछ कहना नहीं है, फिर भी केवल यह अनुरोध है कि चरित्र ठीक रखना। यह समझ गई हूँ कि उसी नीच जात की लड़की ने तेरा दिमाग़ बिगाड़ दिया है।

पति बोले, नौकरी न मिलने पर ही आदमी बेकार रहे ऐसी बात नहीं है, धनी आदमी भी बेकार हो सकता है।

दोनों ने बिदा ली।

कंकर साहित्यिक न हो सका पर लापरवाह हो सका। सच बात तो यह है कि वह लापरवाह ही रह सकता था। उसकी बातचीत अन्य लड़कों की ही तरह थी, पर दूसरों की तरह उसका चरित्र पुरातन के ऊपर रंग रूप चढ़ा कर पूरी तरह आधुनिक नहीं था। उसकी बातों के साथ उसकी चाल-ढाल मेल नहीं खाती थी। कार्यों के साथ आदर्श का मेल नहीं था, और आदर्श से जीवन का मेल नहीं था। अर्थात् उसका जीवनादर्श अभिनव की खोज था। अभिनव माने अछूता नहीं, अभिनव माने विचित्र—जिसके साथ चलतू जीवन की, सामान्य जीवन की कोई सङ्गति नहीं, जिसके साथ क़दम क़दम पर विचित्रता की आत्मीयता रहती है, जिसके तेज़ झपेटे के वेग से परम्परा की दीवार निरन्तर ढह सके। वह गृहस्थी नहीं करेगा, उसके माने यह नहीं कि वह संन्यास ग्रहण करेगा; उसके माने यह नहीं कि नारी और समाज के सम्बन्ध में उसमें रक्तगत वैराग्य है; किन्तु उसके माने हैं कि उसमें वैचित्र्य का जो ध्वंसात्मक आकर्षण है वह क़दम क़दम पर अवरुद्ध हो सकता है। संसार के विभिन्न साहित्य के विभिन्न विचारों में उसने आविष्कार किया था कि समाज से मनुष्य बड़ा है और मनुष्य से भी बड़ा

है उसका स्वभाव धर्म। 'सबसे अधिक सत्य मानव है, उससे श्रेष्ठ कुछ भी नहीं' इस उक्ति का सब लोग विकृत अर्थ करते आये हैं। बहुत से बड़े-बड़े साहित्यिक सभाओं में गला फाड़-फाड़कर इस नियम का श्राद्ध करते रहते हैं। इस नियम को कण्ठस्थ रहने से सस्ते सभापतित्व की चकाचौंध से भोली जनता की वाहवाही लूटी जा सकती है। साम्यवाद से आरंभ करके अतीन्द्रिय साहित्य की व्याख्या तक इसी की शतरंज का खेल चलता है, जिससे 'मानव सत्य है' इस बात के कहते ही श्रोताओं के खून में गर्मी पैदा की जा सके। वह मानव जो रक्तमांस का बना मानव है, धनी लोगों द्वारा उत्पीड़ित मानव है, काम न पाने से बेकार मानव है, साहब की बूटों की ठोकर खाया मानव है—इस तरह सोच सकने पर ही भाड़े का टट्टू सभापति विशेष आनन्द पाता है। पर मानव और मानव का प्राणधर्म एक नहीं है यह बात बुद्धिमान् लोग कभी सोचेंगे? एक सम्पूर्ण मानव कितनी ही आत्मविरोधी वृत्तियों का एक समष्टि है यह बात वे कब समझेंगे? जो लोग सर्वत्यागी परम सत्याश्रयी राष्ट्रनेता हैं, उन्हें भी निकलने की गुंजायश रखकर अखबारों में जो विवरण प्रकाशित होते हैं उस बात को वे सोच नहीं सकते; वे यह नहीं सोच सकते कि जो आदमी सब लोगों का श्रद्धाभाजन हिन्दू सभा का पंडा है, जिसको हम सनातनी हिन्दू कहते हैं—वह भी सुबह शाम अंग्रेजी-मुसल्मानी खाना खाते हैं। इसके सिवा कंकर के ही दूर के रिश्ते के मामा 'नारी-रक्षिणी समिति' के एक उत्साही कार्यकर्ता हैं, वह भी विशेष स्वतंत्र रूप से एक अपहृता बालिका के प्रति हर रात प्रणय ज्ञापन करते हैं—इसे प्रायः सभी जानते हैं। जो नागा संन्यासी हैं वह भी आपस में गद्दी दखल करने के लिये खून-खराबी करते रहते हैं। 'सबसे अधिक मानव सत्य है' कहनेवालों की परस्त्री के प्रति आसक्ति तो सब लोगों को मालूम है। उनके इस सहज स्वभाव धर्म में जिन लोगों ने बाधा पहुँचाना चाही उन लोगों के लिये ही यह बात कही गयी है। सर्वसाधारण में अनेक लोग जानते हैं, कम से कम जानने का

भान करते हैं कि मानव की उच्च कोटि की मुक्ति चिराचरित संस्कार से ही हुई है। अष्टम एडवर्ड ने जब किसी अज्ञातनामा परस्त्री के मोह में पड़कर इंगलैण्ड का राजसिंहासन त्याग दिया—तब इस भारतवर्ष की जनता—वही रक्षणशील जनता जो सती नारी के सिवा नारी का और कोई भी परिचय नहीं सोच सकती—उसने राजा के त्याग और प्रेम की प्रशंसा की। देश की स्त्रियाँ और आगे बढ़ गयीं। उन्होंने अखबारों में एक सामूहिक वक्तव्य प्रकाशित किया। कहा, "हे राजन्, प्रेम की जो महिमा तुमने दिखायी है उसके लिये हम तुम्हारा अभिनन्दन करते हैं। पहले के दो पतियों द्वारा संभोग की हुई जिस स्त्री के लिये सिंहासन को भी तुच्छ कर दिया, उसके लिये हम तुम्हें प्रेम के राजा भगवान् श्रीकृष्ण के पद पर अभिषिक्त करती है। संसार में तुम अतुलनीय हो, इतिहास में तुम अमर हो।" कंकर ने सोचा, राजा के भीतरी इतिहास का तो पता नहीं चला, किन्तु लड़कियों के मनोभाव काफी मालूम हो गए। यह लड़कियाँ विचित्र हैं। उन्होंने दस बरस में जो स्वाधीनता प्राप्त की है उसकी उपमा इतिहास में भी नहीं है। बुद्धिमान् पुरुषों ने उनके सिर पर सती संज्ञा देकर और संतान का बोझा डाल मातृ-जाति नाम देकर धोखे में रखना चाहा था—पर स्त्रियों ने वह चालाकी पहचान ली। आज प्रकट रूप में वे पैतृक सम्पत्ति का अधिकार विधान सभा में बताती हैं और छिपकर तरह-तरह के जन्म-निरोध के वैज्ञानिक प्रयोग करती हैं। एक बार देश के पुरुष साहित्यिकों तक ने साहित्य में भी इस चालाकी का खेल खेला था। स्त्रियों ने जिस स्थल पर मातृत्व का वरण किया, पुरुष के हाथों मार खाकर भी जहाँ प्रेम के नाम पर वे पैरों पर गिर पड़ीं, जिस स्थल पर भी उन्होंने अपने आप पुरुष को अपना आश्रय मान लिया—वहीं ग्रन्थकार को प्रशंसा मिली। कंकर सोचने लगा, बड़ी बहादुरी है। चिरकाल तक पुरुष का दासीत्व स्वीकार करना, अथवा पुरुष को दासत्व स्वीकार कराना,—परम्परा को इस प्रकार मानकर चलाने के इस पौराणिक प्रयत्न से देश छुट नहीं पाया।

कंकर साहित्यिक न हो पाया इसके लिये देवी भारती को धन्यवाद है। जो साहित्य और ललित कला की अधिष्ठात्री देवी हैं वे एक कुमारी वारांगना हैं! साहित्यिक न होकर भी कंकर जानता है कि इस तत्त्व का एकमात्र अर्थ यही है कि अनेक लोगों में रसबोध के आनन्द का वितरण करने का भार जिस पर है, केवल सती नारी होने से उसका काम नहीं चलता, वह सर्वसाधारण की होगी। दशभुजा दुर्गा भी पतिता की कन्या हैं—उनकी जाति नहीं है, क्योंकि वह सब जातियों की रक्षा करनेवाली हैं। जहाँ पर कल्याण का बड़ा आयोजन है, वहाँ चरित्र और जात्यभिमान का सवाल नहीं उठता। महाभारत के सर्वश्रेष्ठ चरित्रों में कहीं भी यौन शुचिता नहीं है। स्वयं ग्रन्थकार का जन्म नीतिगर्हित है। पंच पाण्डव, कर्ण, द्रौपदी, भीष्म, घटोत्कच, श्रीकृष्ण, इनका इतिहास किस चीज़ पर प्रतिष्ठित है? कंकर की अकृत्रिम मित्र श्रीमती मीनाक्षी द्रौपदी से किस तरह कम हैं? उन्हें भी अच्छा भोजन बनाना आता है, सुयोग्य धनुर्धर को वह भी जयमाल पहनाने को प्रस्तुत हैं; वह भी ढंग का आदमी पाने पर वन-गमन कर सकती हैं; उनकी समाज-व्यवस्था, राजनीति और स्त्रिशिक्षा सम्बन्धी वक्तृतावली द्रौपदी की वक्तृता से कम गरम नहीं, देश में युद्ध होने की संभावना होने पर वह भी असंख्य सन्तानों को जन्मदान करने को प्रस्तुत हैं और देश में यदि वीर्यवान् युवक हों तो पाँच ही क्यों, मीनाक्षी देवी पच्चीस आदमियों का उत्साह सहन कर सकती हैं। अन्तर यही है कि पौराणिक युग में नारी की लज्जा को लेकर खेल खेला जाता था, बुज़ुर्ग लोग तक उस दृश्य का उपभोग करते थे, पर आधुनिक मीनाक्षियों के समय में वह सुख नहीं है,—आज के समय में दुःशासन लोग केवल प्रेमपत्र के द्वारा सतियों के आगे कुप्रस्ताव रखते हैं। वास्तविक बात यह है कि मीनाक्षी की पुरुष-प्रीति द्रौपदी की अपेक्षा ज़रा भी कम नहीं है।

तीन

इस प्रस्तावना के बाद कहानी का रंगमंच है।

घटना के दिन देखा गया कलकत्ते के एक चौराहे पर कंकर खड़ा है, आँखों में और मुँह पर प्रतीक्षा का उद्वेग था। दो बजे का समय। घर-बार उसने हाथ से निकाल दिया था, शारीरिक नियम पालन की रोज़ाना की तालिका नष्ट कर दी थी, बहुत-सी अस्थावर चीज़ वस्तु चोरबाज़ार की दूकानों पर चली गयी थी। अच्छी खासी बेकार ज़िन्दगी हो गयी थी। जीवन में गृहस्थी के सामान तो अनजाने ही मनुष्य को बन्धन में डाल देते हैं—कंकर को वह जंजाल अब न रहा। खासी निश्चिन्त ज़िन्दगी थी। इच्छाओं को लापरवाही से छोड़ा जा सकता है, कोई भी रोकनेवाला नहीं, पीछे लगे रहने का कोई आकर्षण नहीं। बहुत से आधुनिक लोग पीछे की ओर नहीं देखते हैं सही, पर पीछा ही उन्हें पीछे से खींचता रहता है। मातृ-स्नेह शेरनी का भी है। हृतवत्सा होने पर शेरनी भी रोती है, सन्तान पर संकट पड़ने पर वह भी चीखती है। सीधी बात तो है प्रकृति विज्ञान। और प्रेम ? सब जानवरों का संगम काल होता है, वर्ष के अन्त समय वे संयम पालन करते हैं। केवल मनुष्य मे संयम नहीं है, वे कोई भी ऋतु नहीं छोड़ते—समाजपति भी नहीं, सुनीति संघ के आचार्य लोग तक नहीं। और प्रेम के अर्थ हैं मनोहर कल्पना, चाँदनी में कुछ दिमाग़ की खराबी। अथवा उस पर थोड़ा आध्यात्मिक रंग चढ़ाकर उसे मानव के हृदयावेग से संयुक्त कर देना ; इससे अधिक अगर और कुछ हुआ तो उसे या तो पागलखाने में जगह मिलेगी या पुलिस की हिरासत में। सीधी बात है—आकर्षण। वे जब प्रेम में मशग़ूल रहते हैं उस समय प्रकृति अज्ञात रूप से अपना काम कर लेती है,—उसे चाहे बकवास कह लें, जीव-

सृष्टि की रक्षा होकर ही रहेगी। कंकर केवल यह बात समझ सका था कि पाशविकता की प्रतिद्वंद्विता में मनुष्य पशु को चिरकाल से हराता आया है। मनुष्य के मन और बुद्धि ने उसकी पाशविकता को असंयम के पथ पर उत्तरोत्तर बढ़ने में सहायता दी है।

इस पाशविक जीवन को पार करना होगा। कंकर ने सोचा, घर का द्वार खुला रहने से ही घर की ओर खिंचाव रहता है, उपकरण रहने से ही आकर्षण होता है। केन्द्र कहीं भी नहीं है।

मोटर का हार्न सुनकर उसका ध्यान टूटा। रास्ते के उस पार दिखायी पड़ा कि गाड़ी के अन्दर से हाथ के इशारे से मीनाक्षी उसे बुला रही है। तेज़ धूप सर के ऊपर, रास्ता आदमियों से ठसाठस, गाड़ियों का निरन्तर आना जाना—इस निर्जन में ही अन्तरंग मानव के साथ मुलाक़ात का सुयोग। कंकर रास्ता पार कर पास जाकर खड़ा हो गया। मीनाक्षी बोली, पहले गाड़ी पर आ जाओ।

कंकर बोला, तुम्हारी माँग में सिन्दूर कैसा?

क्या हमेशा अविवाहित रखना चाहते हो?

नहीं, पर यह आठ दिन में ही—यानी, अन्तिम पत्र में तो मुझे कुछ बताया नहीं?

मीनाक्षी ने उसका हाथ पकड़कर उसे गाड़ी में खींच लिया। बोली, तुम्हें आदमी नहीं समझा था। अरे, चलाओ!

कंकर बोला, तुम्हारे शरीर में से अभी भी बासी फूलों की गन्ध आ रही है। बात क्या है?

मीनाक्षी बोली, शरीर सूँघे बिना ही शरीर की गंध आ गयी? पर डरने की कोई बात नहीं है, अगर ब्याह हो ही गया है तब भी अभी तक विवाह का जल नहीं मिला है।

गाड़ी की गति को देखकर कंकर बोला, जा कहाँ रही हो?

हावड़ा स्टेशन।

क्यों !

ओफ् ओह—मीनाक्षी बोली, सिर्फ कौतूहलवश ! जाऊँगी चूल्हे में, हनीमून करने ।

हनीमून ? किसके साथ ?

मीनाक्षी बिगड़कर बोली, देश भर में क्या हनीमून लायक़ कोई लड़का नहीं मिल सकता ?

कंकर हँसकर बोला, क्यों नहीं, क्या मैं ख़ुद कुछ ऐसा मामूली हूँ ?

हाय रे भाग्य !

कंकर बोला, मीनाक्षी, हम लोगों की कितने दिनों बाद मुलाक़ात हुई है। पर तुम्हारा रूप ख़ूब निखर आया है।

अच्छा !—मीनाक्षी बोली, साढ़े तीन महीने में ही तुम्हारा यह हाल ?

जवाब में कंकर बोला, तीन महीने पहले रंगपुर स्टेशन पर हमारी वही छिपकर मुलाक़ात हुई थी—याने मिलन हुआ था। तुमने उस समय असीम ब्रह्मचर्य आरंभ किया था—उसके बाद यह लम्बा समय, पितृ-वियोग के बाद मालूम हुआ कि मेरी भी स्वतन्त्र सत्ता है, पाँच भलेमानुसों की तरह मुझे भी चरित्रहीन होने का अधिकार है। आज यह सोचकर बड़ा अच्छा लग रहा है कि दीर्घ विरह के बाद तुम्हारा हमारा मिलन हो रहा है। यह खयालकर बड़ा अच्छा लग रहा है कि मेरे सिवा तुम्हारी पतवार पकड़नेवाला कोई नहीं।

संदिग्ध दृष्टि से देखकर मीनाक्षी हँसकर बोली, ज़रा बताओ तो तुम्हारा मतलब क्या है ?

कंकर बोला, गाना गाकर तुम्हें भुलावे में रखूँगा।

मीनाक्षी बोली, वह तो तुम्हारी रसिकता है, आत्म-मोह। पर चीज़ न पाकर औरत का मन ख़ुश नहीं होता। अरे गाड़ी, रोको।

ठन् ठन् के मोड़ पर मोटर रुकी। मीनाक्षी बोली, उतरो।

कहाँ ?

काली माई के मन्दिर।

प्रतिवाद निष्फल होता, इसलिये विस्मय में भरे कंकर चुपचाप गाड़ी से उतरकर मंदिर की सीढ़ियों के पास जाकर रुक गया। मीनाक्षी बोली, मेरी तरह हाथ जोड़ो। उसके बाद जैसा मैं कहूँ उसे तुम मन ही मन दुहराते जाना। बोलो, हे दिगम्बरी ध्वंसात्मिका भयंकरी, हम तुम्हारी तरह निर्लज्ज हो सकें। तुम्हारे समान बिना सोचे समझे ध्वंस कार्य में हम भी सारे भोंडेपन का विनाश कर सकें—पुलिस के हाथों न पकड़े जायँ। और दूसरी प्रार्थना है, हमें थोड़ी संयम की शिक्षा दो। तुम्हारी सी दिगम्बर अवस्था में आपत्ति नहीं है, नग्नता के सम्बन्ध में थोड़ा दबा हुआ मोह भी है, किन्तु हे कलंकिनी, कल्याण और मंगल की छाती पर हम पैर न रख दें। कम से कम तुम्हारी अपेक्षा ज़रा मात्राज्ञान रहे।

कंकर इस बार तुरत बोल उठा, अब मैं जो कहूँ तुम उसे दुहराना। कहो, हे रणरंगिनी, मैं अधम नारी हूँ, तुम्हारे संयम सिखाये बिना भी चल सकता है। हैवलक एलिस पढ़कर हम वह सीख लेंगे, पर यदि संभव हो तो अपने खड्ग का थोड़ा सा रक्त हमारे सिर पर लगा दो। हमारे देश की सन्तानों को कायर बनाने का एक षडयंत्र प्रकट-रूप से चल रहा है। जिन्हें पुरुष कहकर, साहसी कहकर मन ही मन श्रद्धा थी, जो दो चोट खाकर दो हाथ मार सकते थे उन्हें बकरी का दूध पिलाकर बकरी का बच्चा बनाने की कोशिश हो रही है। हे शक्तिरूपिणी, इनमें थोड़े से मनुष्य रक्त का इंजेक्शन दे दो। इनका असहयोग आन्दोलन ज़नानेपन का दूसरा नाम है, इनकी अहिंसा नपुंसकता की नक़ल है। इनकी आँखों में उँगली डालकर इन्हें यह दिखा दो कि जिस दिन से अहिंसावाद का प्रचार शुरू हुआ उसी दिन से जातियों में ईर्ष्या, नेताओं में कुत्सित प्रतिद्वन्द्विता, मानव मात्र में षड्यंत्र और हर तरफ़ दुर्नीति फैल गयी है। हे ब्लू ब्लैकिनी, इनके कान में यह मंत्र फूँक दो कि मानव की आदिवृत्ति का नाश नहीं हो सकता, निग्रह का परिणाम प्रकृति से बदला लेना होता है—इसलिये

कपड़े-लत्ते पहनकर षड्रिपु को मधुर रूप में दिखाना मानव का उद्देश्य है। हे क्षुधातुरा, भारतवर्ष के बकरों को तुम आत्मसात् करो।

दोनों हँसते-हँसते लौटकर गाड़ी में आ बैठे। गाड़ी दक्षिण की ओर चली।

कहाँ चलना चाहती हो?

मीनाक्षी बोली, स्नान करने का स्थान खोजने। है कहीं?

कंकर बोला, मैं लिये चलता हूँ, चलो। डाक्टर मिसेज़ राय हमारी परिचित हैं, वहीं चलो।

कौन मिसेज़ राय?

घुड़दौड़ के मैदान में हमारी बातचीत हुई थी। खूब औरत है। आँख-मुँह का कोई प्रश्न ही नहीं, किसी भी पात्र में रखो कोई प्रतिवाद नहीं, किसी भी रंग में वह रँगी जा सकती हैं। वे पापी तापी का अत्यन्त निरापद आश्रय हैं। मुँह मे मीठी हँसी रहती है, बातचीत का ढँग उत्कृष्ट।

मीनाक्षी बोली, धर्मग्रन्थ का पाठ करती हैं?

करेंगी, पर ज़रा देर के बाद, अभी तक बैंक में उतना पैसा नहीं हुआ है। अतिशय साध्वी स्त्री है।

जुआ क्यों खेलती हैं?

ज़रा मन बहलाने के लिये। पति का जन्म श्रीकृष्ण के औरस से है, इसी लिये वे घोर मनोवेदना से उदासीन हैं। उनके व्यवहार और मधुर आतिथेय से सभी सन्तुष्ट हैं। तुम्हें देखकर वे हाथोंहाथ लेंगी।

क्यों? मुझे शक हो रहा है।

कंकर बोला, सन्देह करना अत्यन्त अनुचित है, वे सत्संग और सदालाप की बड़ी प्रेमी हैं। वे बड़ी धार्मिक हैं, इसीलिये बहुत सी तरुणियाँ उनकी अनुगत हैं। बहुत सी लड़कियाँ शरीर और स्वास्थ्य रक्षा के लिये उनकी चिरकृतज्ञ हैं। स्त्रियों का हिस्टीरिया, बदहज़मी, कार्य में अनिच्छा और

काव्य-ज्वर आदि रोग उनके यहाँ आना-जाना करने से बहुत जल्दी नीरोग हो जाते हैं। उनका घर युवतियों का तीर्थ है।

मीनाक्षी उत्साहित होकर बोली, सुनकर भक्ति होती है, यह सब महिलाएँ देश नेत्री होने योग्य हैं। उनकी उम्र क्या है ? चालीस से अधिक या कम ?

कंकर ने पूछा, माने ?

माने तुम्हारे साथ सम्बन्ध जानना तो ज़रूरी है।

अःहा, तो ऐसा कहो, यह भूल ही गया था कि तुम भी औरत हो। ठीक नहीं कह सकता, पुरुष की आँखों में जिस औरत की उम्र बीस होती है, औरतें उसे देखकर पचीस कहेंगी। चलो, चलकर देख ही लोगी।

मीनाक्षी ने पूछा, चेहरा कैसा है ? सावधान, मुझसे तुलना न करना।

कंकर बोला, तुम अतुलनीय हो वह असाधारण।

उनके पति कहाँ हैं ?

वह कभी स्वर्ग में रहते हैं, अप्सरायें नृत्य गीत आदि से उनका मनोरंजन करती हैं; अर्थ की खोज में वे प्रायः मर्त्यलोक में अवतीर्ण होते हैं, उसके बाद सुरा-समुद्र की राह वे पाताल में उतर जाते हैं—उनके लिये कोई भी स्थान अगम्य नहीं है।

असली पुरुष है, सहज ही श्रद्धा आकर्षण करता है। पर पत्नी का इहकाल और परकाल ?

स्वतन्त्र नारी है; उसे कोई असुविधा नहीं है। ऐसी आत्म-निर्भर महिला देश भर में दुर्लभ है। स्नेह में उसे जाति-भेद नहीं है। उसके आदर्श पर ही हरिजन आन्दोलन की सृष्टि हुई है।

बहुबाज़ार में खोजकर एक जगह कंकर ने गाड़ी रोकी। पास ही के गैस की रोशनी में दिखाई पड़ा कि मकान काफी बड़ा है। मोहल्ला संभ्रान्त था। आस पड़ोस में देशी साहबों की बस्ती लगती थी। मीनाक्षी ख़ुश होकर बोली, तुमने तो बिलकुल राजा के मकान पर लाकर खड़ा कर दिया। तुम तो वाक़ई में बहादुर लड़के हो।

गाड़ी से उतरकर कंकर ने दरवाज़े पर हलकी-सी थपकी दी। मकान के अन्दर अस्फुट बातचीत सुनायी पड़ रही थी। संभवतः आनेवाले की आवाज़ से वह बन्द हो गयी। कंकर ने फिर कुंडी खटखटायी। दो मिनिट की प्रतीक्षा के बाद दरवाज़ा खोलकर एक बेयरा निकला।

कंकर ने कहा, मिसेज़ राय हैं ?

उसने पूछा, क्या काम है ?

काम है ! ज़रा बुलाओ, जान-पहचान है।

बेयरा ने उसे सर से पैर तक देखकर कहा, वे घर पर नहीं हैं।

कंकर हँसा। बोला, सुनकर ख़ुशी हुई, तुम बड़े काम के आदमी हो। जब वे सचमुच रहें तभी नहीं कहना चाहिये।—यह कहकर उसने बेयरा के हाथ पर एक रुपया रख दिया। बोला, जाओ, ख़बर कर दो, कहना ऑरेंज विलियम आये हैं।

बेयरा फ़ौरन ग़ायब हो गया। पर थोड़ी ही देर बाद दरवाज़े की दरार से किसी औरत का मुँह दिखायी पड़ा—मुँह पर हँसी झलक रही थी। कहीं ख़ुफिया न हो इसलिये वह इतनी देर तक दरवाज़े के पास ही छिपी खड़ी थी। दोनों में नमस्कार विनिमय हुआ। कंकर बोला, बेयरा बेवक़ूफ़ नहीं है, घूस लेने का ढंग जानता है। सीखा न रहने से दरवाज़े पर पाँच धक्के देने से आपको ज़रूर पता चलता।

महिला अपनी नपी तुली अपरूप हँसी हँसकर बोलीं, ऑरेंज विलियम, अन्दर आइये।

कंकर बोला, पर साथ में कोई है।

कौन ?—कहकर डरे हुए चेहरे से मिसेज़ राय ने दरवाज़ा बन्द करने की चेष्टा की। बोलीं, न न मैं अपने यहाँ नहीं आने दूँगी। आप जायँ।

डरने की कोई बात नहीं है। वे मेरी एक स्त्री मित्र हैं।

ओः।—मिसेज़ राय ने फ़ौरन आदर के साथ हँसते हुए कहा, लाइये लाइये, मेरा सौभाग्य है। न न, मैं डरती नहीं, बिलकुल नहीं।

कंकर टैक्सी का किराया चुकाकर मीनाक्षी को उतार लाया। मिसेज़ राय ने हाथ बढ़ाकर हँसते हुए उसकी अभ्यर्थना की, तुम्हारे मित्र के मुँह से तुम्हारी चर्चा काफ़ी सुनी है। वाह, तुम कितनी सुन्दर हो। आज मेरा अहोभाग्य।

मेरा भी सौभाग्य है मिसेज़ राय। नयी जान-पहचान। आपका पूरा परिचय पहले ही पा चुकी हूँ। आपके ऑरेंज विलियम नयी बाज़ी जीत-कर मुझे लाये हैं।—अन्दर घुसकर मीनाक्षी कहने लगी, वाह, आपका घर कैसा बढ़िया है। कुर्सियाँ बैठने के बजाय सोने के लिये अधिक अच्छी हैं। पर बेयरा को घूस देकर आपके दर्शन पाने का क्या तात्पर्य है, बतायेंगी मिसेज़ राय?

मिसेज़ राय के मुँह पर बड़ी निश्छल सरल और मीठी हँसी थी। इस बात से उनमें कुछ चंचलता आ गयी और उन्होंने ज़रा परेशानी से कंकर की ओर देखा। कंकर बोला, लगता है कि तुम पाँच मिनट में ही सारा हाल-चाल जान लेना चाहती हो। कलकत्ते का जीवन-रहस्य तुम्हारी कल्पना से कहीं गहरा है।

गला साफ करके मिसेज़ राय ने कहा, कंकर बाबू की बात में रहस्य ही रह गया। पर बात कुछ नहीं है। अकेले लड़के लड़की के एक साथ रहने से लोग परेशान करते हैं। यही देखिये, कुछ दिनों से बीच-बीच में पुलिसवाले भेद लेने आते हैं।

मीनाक्षी बोली, ओः अब समझी। अच्छा मोटर पर से देखा था कि आपके घर में एक साहब थे, वे कहाँ गये!

साहब नहीं, साहब नहीं, हमारी बहन का बेटा था, सुरेश चौड्रि, विला-यत से लौटा हुआ। वह अभी छोटी बहन को साथ लाया है।—मिसेज़ राय ने कंकर की ओर हँसकर कटाक्ष करते हुए कहा।

घर-द्वार इङ्ग-वङ्ग फैशन से सजा हुआ था। घर के बाहर पर्दे में से

दिखायी पड़ा कि दो बावर्ची ऊँचे चूल्हे पर कुछ पका रहे थे। समय लगभग चार का होगा। एक बेयरे ने आकर पूछा, चाय लाऊँ?

लाओ।—मिसेज़ राय बोलीं।

मीनाक्षी कमरे में टहलती हुई बोली, आपके कमरे में अच्छी-अच्छी तसवीरें टँगी हैं, मैं पहले ही आपकी रुचि की प्रशंसा करती हूँ मिसेज़—

मिसेज़ राय बोलीं, भगवान् की कृपा से कलकत्ते के प्रसिद्ध कलाकार यहाँ अपनी चरणरज लाते रहते हैं। यह, इस आलमारी में रवि बाबू की प्रायः सभी पुस्तकें मिलेंगी।

मीनाक्षी बोली, रवि की किरणें सर्वत्र हैं, उनकी पुस्तकें न रहने से अँधेरे में रहना होता है। सब यही कहते हैं।

पर इसी कारण नये साहित्यिकों की कोई पुस्तक मेरे यहाँ न मिलेगी। उनके साहित्य की दौड़ हेदो के मोड़ से कालेज स्ट्रीट तक रहती है। ब्याह होने के बाद उनका साहित्य कोई नहीं पढ़ता।

ज़रा बताना तो वे क्या लिखते हैं?

बड़ी हो गयी हूँ, उनकी बात कहने में शरम लगती है। वे लोग बहुत तेज़ लिखते हैं। वह समय देना नहीं चाहते, तैयार होने का समय नहीं देते, झटपट काम निपटाना चाहते हैं। अब यही समझो कि जो मैं उनकी किताबें न पढ़ूँ ऐसी बात नहीं है, अक्सर पढ़ती हूँ, पर और किसी को पढ़ने को नहीं देती। वे लोग मानो सारे विश्वासों की नीव ढहा देंगे।—मिसेज़ राय कहती गयीं, स्त्रियों के सतीत्व को वे विज्ञान की चलनी में डालकर खोजते हैं। वे माँ बाप का भी आदर नहीं करते।—लो चाय आ गयी। मैं ख़ुद जाकर तुम्हारे खाने के लिये कुछ लाऊँ!

मिसेज़ राय चली गयीं। बेयरे के रहने से दोनों ने अंग्रेज़ी में बातचीत शुरू कर दी।

कंकर ने पूछा, कैसी लगी?

मीनाक्षी ने जवाब दिया, इंटरेस्टिंग! उम्र चालीस से ज़रूर ढलती है।

निश्चय ही पचाससे अधिक नहीं। देखा, साहित्य की कैसी बढ़िया आलोचना रही ?

मीनाक्षी बोली, नये साहित्यिकों पर कितना ग़ुस्सा है ! शायद अपनी रचना में उन्होंने इसकी असलियत पहचान ली। इस उम्र में भी बालों में पत्तियाँ निकालती है, मुँह पर रंग रोग़न लगाती है, पैरों में नये फैशन के सैंडल, घाघरे की तरह साड़ी पहनती है—

कंकर बोला, तुम्हारे मन में बड़ा कपट है !

नही नहीं—पुरुषों को धोखा देनेवाला शृङ्गार नहीं, पर यह अपने को ही अच्छा लगाने के लिये सरंजाम है।

वह किसकी आदत नहीं होती है ? क्या तुम्हारी नहीं है ?

माना कि सब की होती है। पर पचास बरस की महिला के रंगढंग में यदि आदिरस की बू पायी जाय, और मुँह से वह युवकों का सर खायँ तो इससे बढ़ कर और कौन सी बुरी बात होगी।

कंकर बोला, तुम नये साहित्यिकों को गाली क्यों देती हो ?

गाली तो नहीं देती हूँ, मज़ाक़ करती हूँ।

क्यों ?

मीनाक्षी ने हाथ बढ़ाकर कंकर की नाक के सिरे को उँगलियों से दबाकर कहा, वे मेरे छोटे भाई की तरह हैं, मैं उन्हें प्यार करती हूँ।

ख़ूब, ख़ूब, ख़ूब, बहुत ख़ुश हुई—यही तो चाहती हूँ—कहते कहते मिसेज़ राय कमरे में घुसीं।

कंकर बोला, ज़रा मीनाक्षी की हरकत देखिये। बात बात में उसका हाथ उठता है। स्त्रियों के अत्याचार का विरोध करूँगा—भारत में अभी भी ऐसा क़ानून नहीं बना है।

मिसेज़ राय बोलीं, क़ानून होने पर भी ख़ैरियत नहीं कंकर, स्त्रियाँ हमेशा तुम लोगों की नकेल पकड़ कर चलाती रहेंगी। अरे सुनयनी,

आओ, आओ—आज इतनी जल्दी ? अच्छा, बाद को सुनूँगी, पति को कहाँ छोड़ आयी ?

एक लड़की पास आकर खड़ी हो गयी। बोली, मुझे पहुँचाकर वे चले गये हैं। सिनेमा से लौटते हुए ले जायँगे।

मिसेज़ राय बोलीं, अच्छा किया,—आजकल के सिनेमा में कहानी से अधिक अश्लीलता रहती है—स्त्रियों के साथ में बैठकर देखने में शर्म आती है। सचमुच, इस सीता सावित्री के देश में सिनेमा और नया साहित्य कब दूर होगा यही सोचती हूँ। बैठो सुनयनी, इनसे परिचय करा दूँ। यही वह कंकर हैं जिनकी चर्चा उस दिन चल रही थी—पिता के श्राद्ध के मंत्र की जगह रवि बाबू की 'मरण' कविता पढ़ दी, और बाल न घुटाकर कह दिया कि हमारे पारिवारिक शास्त्र में सिर मुड़ाना मना है। और यह हैं मीनाक्षी देवी एम० ए०, यह प्रगतिशील साहित्य की आदर्श-नायिका के अनुरूप हैं—सत्यवादिनी, प्रियभाषिणी, चरित्रवती। लो चाय पियो। मीनाक्षी से ही कहती हूँ, यह जो लड़की देख रही हो, यह लड़की फ़ोर्थ इयर में पढ़ती है, बढ़िया खाना पकाती है, सिलाई-बुनाई सब कुछ करती है और इसी बीच में घड़ी की सूई की तरह पति के आफिस के समय से खाना पका देती है। उसके बाद समझ लो अंग्रेज़ी आनर्स की पढ़ाई-लिखाई—घर-गृहस्थी के झंझट—सब कुछ सर पर लिये है। इसी को कहूँगी आधुनिक लड़की, लक्ष्मी सी लड़की।

मीनाक्षी बोली, आपको सिनेमा अच्छा नहीं लगता ?

सुनयनी बोली, अच्छा हो तो अच्छा क्यों नहीं लगता।

अच्छे बुरे का निर्णय क्या आप ही करती हैं ?

कंकर बोला, यहाँ तीन स्त्रियाँ हैं, उनमें मेरी राय का कुछ मूल्य नहीं है। फिर भी कहे देता हूँ कि स्त्रियाँ प्रचलित रिवाजों की ग़ुलाम हैं, उनके मुँह से आर्ट की विवेचना अर्थहीन है। केवल यह कहिये कि आसानी से समझ में आनेवाली प्रेम-कहानी, जिसमें देखने में तो असभ्यता न हो पर

जिसमें छिपे तौर पर अश्लीलता का इंगित हो—ऐसी ही कहानियाँ आपको पसन्द हैं।

सुनयनी बोली, और कौन कौन चीज़ें हमें अच्छी नहीं लग सकती हैं, कंकर बाबू ?

नहीं लग सकती हैं—जैसे देवताओं की अश्लीलता, राम सीता के खेल में आँखों में आँसू, सौतों की ईर्ष्या, लड़कियों का आँख मटकाकर नाच, नाटककार की भँड़ैती, संन्यासी का जादू—और नायिका के मुँह से समाज-विद्रोह की प्रचलित दो-चार बातें।

मीनाक्षी हँसकर बोली, एक चीज़ और रह गयी। दो बार ऊँचे स्वर में 'माँ' कहकर चीखना।—यह कहकर वह उठ खड़ी हुई। फिर बोली, आप लोग बहस करें तब तक मैं नहा लूँ।

मिसेज़ राय गला फाड़कर बोलीं, अरे योगेन्द्र, दीदी को ग़ुसलखाना दिखा दे। सुनयनी, तुम थोड़ा आराम करो, मैं कंकर से ज़रा—ज़रा दो चार मिनिट—।

सुनयनी उठकर पास के कमरे में चली गयी। उस समय क़रीब-क़रीब शाम हो चली थी। मीनाक्षी ने ग़ुसलखाने में गुनगुन कर गाना शुरू कर दिया था। मिसेज़ राय ने बाथरूम की ओर इशारा कर मृदु स्वर से पूछा, यह कौन है ?

यह मानवी है, षड्रिपुओं की दासी है।

भौंहें उठा आँख बन्द कर मिसेज़ राय हँसी।

अभी तक घर में सब बातें अद्भुत नीरवता में हुई, सारी आलोचना, सारी फैशनेबुल सभ्यता मानो डूब गयी। मिसेज़ राय ने ब्लाउज़ में से सिगरेट का पैकेट निकाला। एक सिगरेट कंकर के हाथ में देकर और एक खुद सुलगा कर मुस्कराती हुई बोलीं, कहाँ से लाये ?

कंकर बोला, वह ख़ुद ही आयी हैं। उनके चलने के पैर और चलाने की अक्ल को मेरी अपेक्षा नहीं है।

मुझे इस बात पर अविश्वास नहीं है।—मिसेज़ राय ने सिगरेट का कश खींचते हुए पूछा, तुम्हारा कमीशन क्या होगा ?

कंकर हँसकर बोला, शरीर से शरीर का बदला !

ठीक ! अच्छा, अब बताओ, सुनयनी कैसी लगी ! योगेन को भेजकर तुम्हारे ही लिये उसे बुलवाया है, पता है ?

कंकर बोला, धन्यवाद। इसके पहले भी आपने दो बार यही किया था। आपके परोपकार के लिये मैं चिरकृतज्ञ रहूँगा। आपकी जय हो। इस जोड़ा मिलाने में स्वयं ब्रह्मा आपके आगे हार मानेंगे।—इसके बाद गर्दन नीची कर, गला साफ़ कर पूछा, आपकी दक्षिणा कितने रुपये होंगे ?

इसी समय दरवाज़े पर खुट् की आवाज़ हुई। मिसेज़ राय ने चुपचाप पैर दबाये उठकर कंकर का हाथ पकड़ा। जल्दी से फुसफुसाकर कहा, जाओ सुनयनी अकेले है। ज्यादा नहीं, दस रुपये दे देना, और नौकर का इनाम, जल्दी जाओ। अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लेना।

कंकर पास के कमरे में चला गया। मिसेज़ राय ने बाहर के कमरे में जाकर कान लगाकर सुना। ठक्-ठक्-ठक्, तीन धक्कों की आवाज़ पा मुँह पर मुस्कराहट की रेखा लाकर दरवाज़ा खोला। आगन्तुक अँगरेज़ी पोशाक पहने एक बंगाली युवक था। मीठी आवाज़ से दोनों ही ने इशारों में एक दूसरे का अभिनन्दन किया। मिसेज़ राय बोली, आओ ! A good sport for you—तुम्हारे लिये अच्छा शिकार है।

युवक भीतर आकर खड़ा हो गया। बोला, कहाँ ?

पर आज सुनयनी नहीं आयी।

बैठे गले से युवक ने कहा, बुलाया नहीं जा सकता ? बड़ी उम्मीद थी कि—

मिसेज़ राय बोलीं, प्रतीक्षा करो, क्षतिपूर्ति कर दूँगी। यह क्या, पेट में व्हिस्की पड़ गयी है ? जॉनी वाकर या व्हाइट लेबल ?

दोनों ही। कहाँ है आपकी क्षतिपूर्ति ? I swear by God, fifteen in my pocket.

मिसेज़ राय हाथ फैलाकर बोलीं, Advance, Please.

युवक ने पंद्रह रुपये निकाले। फिर हँसकर गीत की एक कड़ी गुनगुनायी, I am engineer engine-ye-near ! Tra-la-la-la......

मिसेज़ राय के पास के कमरे से निकलते ही मीनाक्षी से सामना हुआ। मीनाक्षी बोली, कंकर कहाँ है, मिसेज़ राय ?

ओः—कंकर ? सुनयनी के पति से सड़क पर बात कर रहा है, अभी आ जायगा। ज़रा इस कमरे में आना तो मीनाक्षी,—यह हैं हमारे जेठ के लड़के, मिस्टर डाट्—इनके साथ बात करो, बड़ा अच्छा लड़का है ! डाट्, इनका नाम मीनाक्षी है—देखूँ कि तुम दोस्ती कर सकते हो कि नहीं। मैं ज़रा चौमंज़िले पर जाती हूँ, डेलिवरी का केस है। क़रीब घंटा भर,—हाँ, इससे पहले ही—।

*

* *

कंकर ने पूछा, सच बताओ तुम्हारा ब्याह हो गया है ? ब्याह के बदले में मेरे पास एक छल्ला भी नहीं है, मैं सिर्फ़ जानना चाहता हूँ।

सुनयनी ने डरकर बताया, नहीं, अभी नहीं हुआ है।

तुम कॉलेज में पढ़ती हो ?

नहीं।

बन्द कमरे के बाहर कुछ आवाज़ सी हुई। उसके बाद चुप। कंकर ने उसी ओर देखते हुए पूछा, तुम्हारा नाम क्या है ? सच कहना। बोलो, देर न करो—

सुनयनी बोली, लावण्य।

घर में कौन कौन है ? बोलो—शरमाओ मत—

माँ, विधवा भावज, दो छोटे भाई-बहन,—आप इतने सवाल क्यों कर रहे हैं? आइये न? मालूम पड़ता है मुझे वापस नहीं जाना है?—यह कहते हुए उसने कंकर का हाथ पकड़कर खींचा।

कंकर ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और बोला, मिसेज़ राय को जानता था, पर इतना नहीं जानता था। सुनो, तुमसे एक बात पूछता हूँ। मैं मिसेज़ राय को दस रुपये दूँगा, उसमें से तुम्हें कितने मिलेंगे?

दो रुपये।

दो रुपये! अच्छा यह लो तुम्हे दस रुपये ही दिये!—कंकर ने उसके हाथ पर एक नोट रख कर फिर सवाल किया, तुम्हारी आर्थिक अवस्था कैसी है लावण्य?

कृतज्ञता से इस बार सहसा सुनयनी की दोनों बड़ी-बड़ी आँखों में आँसू आ गये। बोली—हम लोग बहुत ग़रीब हैं, मुझको ही गृहस्थी सँभालना पड़ती है। आप इतना क्यों दे रहे हैं?

कंकर ने हँस कर जवाब दिया, यही पहला और अन्तिम देना है, इसी लिये। यह अगर नाटक होता तो मैं कहता, छोटी बहन को यों ही निस्स्वार्थ भाव से दिया जाता है,—पर यह तो किस्सा है। जाओ, रात हो गयी है, घर चली जाओ, इसके बाद जाने में तुम्हें तकलीफ होगी। इधर के दरवाज़े से निकल जाओ। मिसेज़ राय के आठ रुपयों का इन्तज़ाम मैं कर जाऊँगा, तुम्हें कोई फिकर नहीं।

दरवाज़ा खोल कर कंकर बाहर आया। देखा कि इस कमरे में साहबी कपड़े पहने एक अधलेटे युवक की ओर देख कर मीनाक्षी हँस रही है।

कंकर ने पास आकर चुपके से पूछा यह क्या? your latest?

हाँ, मेरी पुष्पवाटिका का नया माली।

गिरे कैसे पड़े हैं?

दश प्रहरणधारणी ने असुर वध किया है

ज़िन्दा तो है?

ठहरो, देखती हूँ।—यह कह कर मीनाक्षी ने अपना सैंडलवाला सुन्दर पैर उठा कर मिस्टर डाट् का थूथन हिला कर पैर नीचा कर लिया। फिर हँस कर बोली, पन्द्रह रुपयों का प्रेम इससे ज्यादा नहीं होता, चलो, मनाती हूँ कि मिसेज़ राय की दिन दूनी बढ़ती हो! अब हम आगे बढ़ें।

दोनों उतर कर सड़क पर आये। उस समय रात के क़रीब दस बजे थे। कंकर ने पूछा, बात क्या थी, बताओ तो?

मीनाक्षी बोली, बात यह थी कि हमने एक दूसरी ही दुनिया में प्रवेश किया था। मोटर से उतरते ही समझ गयी थी कि यह जगह ठीक नहीं है। ग़ुसलखाने में दरार में से सब देख लिया। मिसेज़ राय का सिगरेट पीना, सुनयनी के कमरे में तुम्हारा जाना, शराबी के हाथ मुझे सौंप कर चम्पत हो जाना। बेचारा मिस्टर डाट्, मेरे हाथ के धक्के से सिर फट कर ख़ून खराबा हो गया।

कंकर बोला, ग़ज़ब हो गया, तुम ख़ून कर आयी हो?

मरा नहीं, बेहोश हो गया है।

ख़ून करने के अपराध में अगर पुलिस पकड़े तो?

तब खुशी होगी। हर अखबार में तस्वीर और सम्पादकीय लेख, हिन्दू सभा से अभिनन्दन,—और उस आदमी के ठीक जगह पर बेंत पड़ेंगे। एक ही दिन में नेकी।—मीनाक्षी ने पूछा, और तुम्हारी सुनयनी क्या बोलीं?

कंकर ने जवाब दिया, बोलीं कि उनका नाम सुनयनी नहीं है।

अत्यन्त स्वाभाविक जीवन को उलट सकते हैं पर नाम नहीं बदल सकते? लावण्य क्या बोली?

तुम्हें उसका नाम कैसे मालूम हुआ?

उसके बायें हाथ की अँगूठी पर लावण्य लिखा हुआ था। भले घर की लड़की है, मैंने देख लिया था।

वह भी क्या शरीर पर कहीं लिखा था?

हाँ, भले घर की लड़कियों के चेहरे पर तरह तरह का अँधेरा उजाला रहता है पर वेश्या का मुँह चिरकाल से सब देशों में एक तरह का होता आया है।

और भले घर की वेश्याओं का ?

वह भी तो मिसेज़ राय को देख लिया। चलो, चलो, उसकी बातें अब नहीं करना है। बताओ, किधर चलना चाहते हो ?

कंकर बोला, चलो, हावड़ा स्टेशन चलें।

चलो।

दोनों एक फ़िटन पर बैठ गये। कंकर बोला, हिन्दू मुसलमान का मिलाप कब होता है, जानती हो ? रात में ! चौरंगी के मोड़ पर धरमतल्ला की अँगरेज़ बस्ती में, जान बाज़ार की गलियों में,—जाने दो, उस बात से सरोकार नहीं। तुमसे मन खोल कर बात नहीं की जा सकती, आफ़त तो यह है कि तुम भले घर की लड़की हो।

मीनाक्षी बोली, उससे तुम्हारा ही फायदा है। लोग सोचेंगे कि मैंने तुम्हारा चरित्र सुधारने का भार लिया है।

कंकर ने पूछा, अच्छा मीनाक्षी, तुम लोकलज्जा मानती हो ?

मानने से कोई फायदा है ? मनमुताबिक पति मिल सकता है ?

नहीं, यानी लोकलज्जा माने सामाजिक—

समाज स्त्रियों के मन में तो है नहीं।—मीनाक्षी बोली, आदमी से हमारा मतलब नहीं, हमें तो आनन्द पाने में प्रसन्नता है। जब हम किनारा छोड़ती हैं तो वहाँ पहुँच जाती हैं जहाँ समाज और लोकलज्जा दोनों ही नहीं रहते—अर्थात् उस ओर जहाँ ओर-छोर न रहे। पर आदमियों के मन में समाज निर्माण की इच्छा रहती है, वह एक किनारा गिरा कर दूसरा बनाते रहते हैं। वह अँगरेज़ औरत से शादी कर उसे साड़ी पहनाते हैं, अपनी बोली सिखाते हैं।—और हम लोग ? शादी करके पृथ्वी के किसी

भी ओर पर चली जाती हैं। अपने सगे सम्बन्धियों का रिश्ता कैंची से काट डालती हैं। एक बार जो हुआ सो हुआ,—फिर तो घर, कुल, मान, लज्जा सब कुछ त्याग देती हैं—

तुम्हारा सर!—कंकर बोला, कुलत्यागिनी इस मिसेज़ राय को ही देखो। इस भोंड़े जीवन में भी संभ्रम रक्षा की चेष्टा करती है। उसे पुलिस का डर नहीं है, समाज का डर—

तुम्हारी खोपड़ी।—मीनाक्षी बोल उठी, यह देखो हमारी संभ्रम रक्षा की चेष्टा नहीं है, तुम्हारी तरह असच्चरित्र युवक के साथ पृथ्वी घूमने निकल पड़ी हूँ। मिसेज़ राय के मन में है चैन करने की तबियत, विलास का विचार। उसे रुपये पैसे का लालच है, भोग लिप्सा—इसी लिये वह चाहती है आराम की ज़िन्दगी! वह धनी होने का स्वप्न देखती है। मेरी तरह की औरत इतनी छोटी नहीं होती। मैं अर्थ छोड़ कर अनर्थ चाहूँगी। एक हाथ से जो लूँगी, दूसरे हाथ से वह फेंक दूँगी। सस्ता समाज विद्रोह, स्वाधीन प्रणय, मन मुताबिक पति का चुनाव, और अन्त में नारीत्व का जय गान, दुनिया की वाहवाही, यह सब मेरी आँखों में ज़हर है। मैं इन सब से ऊपर हूँ। मनुष्य आकर मेरा पैर पकड़ेंगे—यह कुत्सित आदर्श, स्त्री-पुरुष के इस चरम अपमान को मैं स्वीकार नहीं करूँगी। मैं ग्रहण और त्याग की सहज स्वाधीनता चाहती हूँ। जीवन मे कोई उत्तरदायित्व न हो। ऐसे जीवन की खोज में मैं घूमती फिरूँगी, रास्ते रास्ते पर फिरूँगी।

कंकर ने हँस कर पूछा, प्रकृति से किस तरह छुटकारा मिलेगा? पुरुष रूपी पक्षी तो अंडे नहीं देता?

गाड़ी हावड़ा पुल पर जा रही थी। मीनाक्षी बोली, सुनो, इस फिटन में समाज नहीं है, फिर भी हमारे मन में तो एक समाज है ही। उसी को सुनाऊँगी, तुम्हें नहीं। उससे चुपके से यह बात कहना चाहती हूँ, हम

प्राचीन की उत्तराधिकारी हैं पर पुरातन के हाथों बिकी लौंडी नहीं। भावी मानव की ओर ही हमारी आँखें लगी हैं, अतीत और वर्तमान की ओर नहीं। वही भावी मानव प्रकृति के हाथों मुक्ति नहीं चाहता, किन्तु प्रकृति को अपने अधिकार मे लाना चाहता है। लाखों सियारों को पैदा करने से शेर का एक बच्चा कहीं अच्छा। सन्तान का उत्तरदायित्व डाल कर स्त्रियों को भुलावे में डालना तो सनातन चालाकी है, पर मूर्ख स्त्रियाँ यह नहीं समझतीं कि बच्चे पैदा करना इच्छा के अधीन न करने से वे ही दुनियाके आनन्दों से वचित होंगी। माँ होकर रहने से नारी होकर रहना नही अच्छा है।

कंकर बोला, अपना यह श्रद्धानंद पार्क का व्याख्यान बन्द करो। स्टेशन आ गया।

स्टेशन पर उतर कर पूछने पर पता चला कि रात के बारह बजे एक लोकल गाड़ी जायगी। अभी कुछ देर है।

दोनों ने आपस में तय किया कि जहाँ तक लोकल ट्रेन जाती है वहाँ तक वे दोनों जायँगे। उसके बाद किसी स्टेशन के वेटिंग रूम में रहेंगे,— अगर रात रहे तो वेटिंग रूम में ही रात काटेंगे, नहीं तो प्लेटफार्म की किसी बेंच पर अकेले में बैठ कर प्रेम की अलीकता के विषय में बात करेंगे। सवेरा होने पर दूसरी गाड़ी से कलकत्ता वापस चले जायँगे।

रात बहुत हो गयी थी। हावड़ा स्टेशन पर भीड़ बहुत छँट गयी थी। दक्षिण की ओर के वेटिगरूम के पास की बेंच पर जा कर मीनाक्षी बैठ गयी। 'मिसेज़ राय के घर का जलपान हज़म हो गया। जाओ खाना लाओ'।

कंकर बोला, तुम यहाँ अकेली रहोगी ?

मैं तुम्हारी ब्याहता नहीं हूँ कि घबराहट हो।

फिर भी औरत तो हो—चोर, डाकू गुण्डा—और नहीं तो स्त्री-धर्म, सतीत्व, संभ्रम—

सब जाने पर भी मैं तो रहूँगी!—जल्दी जाओ, भूख लगी है।—कह कर मीनाक्षी हँसने लगी।

कंकर बोला, तुम पर पाशविक अत्याचार तो मुझ से बर्दाश्त नहीं होगा।

मीनाक्षी आँख निकाल कर बोली, यह देशी दैनिक अखबारों की भाषा छोड़ो। वह पूरी तौर से पाशविक अत्याचार नहीं होता, सम्पूर्ण रूप से मानविक होता है। समझ आने पर पता चलेगा कि साधारण मनुष्य पशु से बहुत गया-गुज़रा होता है।

कंकर चला गया। उसे हमेशा से स्टेशन अजीब सा लगता था। सब की चाल ढाल में मानों आदिम आने जाने का ढंग हो। रेल की लाइनें जैसे अनजान पथ पर अज्ञात रहस्य की ओर निरन्तर आकर्षित करती रहती हैं। सीटी की आवाज़ मानो वैचित्र्य के दूर दूर के पथ पर भुलावा देकर लिये जाती हो। गति ही जीवन है।

कंकर सोचने लगा, इस स्टेशन के सारे लोग मानो परिवारों का एक झुंड हो—सब अलग अलग, और सब एक में गुँथे, इनके पीछे मानो कोई निर्देश हो, कोई बड़ा शक्तिशाली निष्काम तांत्रिक। उसे ईश्वर कहो तो कोई हानि नहीं, उसे विज्ञान की शक्ति कहो तो झगड़ा नहीं करना है—पर कुछ है ज़रूर। आग और पानी इन दोनों की मिली शक्ति से वेग कैसे पैदा हो गया? गर्भ के भ्रूण को मनुष्य का आकार किस नियम से मिल जाता है, पृथ्वी दिन के अन्त में किस षडयंत्र से उलट जाती है, बीज में से किस तरह अंकुर फूट पड़ता है? उसे ईश्वर कहो, बहस नहीं। और मीनाक्षी, और वह ख़ुद—दोनो के आकर्षण विकर्षण में विज्ञान को खोजो, पर दोनो के अन्दर जो प्रबल जीवन विद्रोह की प्रवृत्ति है—इसको चलाने-वाला कौन है? क्यों वे अनिर्दिष्ट की ओर चल पड़ना चाहते हैं—जिस

ओर मरुभूमि का सूनसान ही है, जिस ओर फलफूल की हरियाली कहीं नहीं है। संभ्रान्त घरों में वे पैदा हुए, अच्छे शिक्षित वातावरण में पले—फिर भी उनमें नाश की यह प्रेरणा, उनमें विद्रोह की चिनगारी का किसने संचार कर दिया? इसे अविवेक कहा जा सकता है, बेकार का उपन्यास कह कर मज़ाक उड़ाया जा सकता है—फिर भी सन्तोषजनक उत्तर तो नहीं मिलता।

गले की आवाज़ से कंकर का ध्यान टूटा। पीछे से किसी ने पुकारा, हलो, कामरेड!

घूम कर कंकर ने कहा, हलो, कामरेड देवेन चटर्जी? अरे गायत्री देवी भी! कहाँ चले?

पति-पत्नी दोनो बोले, जाना न हो सका इसीलिये वापस जा रहे हैं। देहरादून एक्सप्रेस छूट गयी, अब घर जा रहे हैं।

घूमने जाना था क्या?

नहीं, कल दोपहर को आसनसोल में हमारी पार्टी-मीटिंग है। अब कल सवेरे जाने के सिवा कोई चारा नहीं।

कंकर हँसकर बोला, तो पति पत्नी दोनो ही सोशलिस्ट हैं? उठो उठो भारत की ललना—

गायत्री बोल उठी, आप तो हम से भी आगे हैं—आपका तो कहीं पता नहीं चलता।

कंकर बोला, राजनीतिक दल बड़ी खतरनाक चीज़ है। काम से ज़्यादा बातें होती हैं, बातों से ज़्यादा झगड़े और झगड़े से ज़्यादा दलबन्दी। अब तो दलबन्दी को भी षडयन्त्र ने पछाड़ दिया।

देवेन बोला, यही तो जीवन की निशानी है। इन तरह तरह की धातुओं की परीक्षा कर जो सत्य की कसौटी पर खरा उतरे वही नेता है।—पर इतनी रात को यहाँ कैसे?

कंकर बोला, लोकल ट्रेन से घूमने जाऊँगा। मीनाक्षी साथ में है।

सच?—कहते कहते गायत्री ख़ुशी मे भर गयी।

देवेन ने हँसते हँसते कहा, हो गया, वह फिर कलकत्ते आ गयी ? मालूम पड़ता है इस बार तेरा सिर खायगी। कहाँ है ?

गायत्री बोली, चलिये हमारे साथ। अपनी सैर रहने दें।

देवेन बोला, सैर का रुपया मेहरबानी कर पार्टी फंड में दे दो, मन ही मन सैर कर लो। हमारे घर चलो, इतनी रात मे जहन्नुम नहीं जाना होगा।

कंकर को पकड़ कर वे वेटिंग रूम की ओर चले।

वेटिंग रूम के पास आकर देखा कि तमाम लोग भीड़ लगाये हैं, उनके बीच में खाकी कपड़े पहने चार के लगभग सिपाही और इन्सपेक्टर हैं। जल्दी से भीड़ को ठेलकर तीनों भीतर घुसे। उन्होंने अचम्भे से देखा कि—एक नवजात शिशु को गोद में लिये मीनाक्षी सब से बहस कर रही है। एक अधेड़ आदमी पुलिस से कह रहा है—मैं भूलता नहीं हूँ साहब, एक घंटा हुए देखा कि कोई बच्चे को वेटिंग रूम के एक कोने में डालकर चला गया—मा बाप का पता नहीं—कहीं कोई आदमी न आदमज़ात—अकेला बच्चा; यही देखकर तो मैंने पुलिस को खबर दी। माता जी, तुमसे मेरा झगड़ा नहीं है, पर भानमती का यह खेल तो नहीं होना चाहिये। यह बच्चा किसका है ?

मीनाक्षी कंकर वग़ैरह को देखते ही उठकर खड़ी हो गयी। बोली, दूध नहीं लाये ?—भला यह लोग पागल तो नहीं हैं ? इस आदमी को पुलिस में दे दो।

कंकर ज़रा सी देर में सब समझ आगे बढ़कर बोला, अच्छी आफ़त है। आप लोग हटिये। बच्चे के बहाने बच्चे की माँ को खूब अच्छी तरह ताक रहे हैं, क्यों ? सब लोगों को बड़ा अच्छा तमाशा मिल गया है। वाह साहब वाह, देखता हूँ आप लोग बड़े धर्मशील हैं, जिसे बाप कह दो वही बाप—मसल मशहूर है। पुलिस बुलाकर साबित कराना चाहते हैं कि बच्चा हमारा नहीं है ? आप लोग पागल तो नहीं हैं ? हो सके तो पुलिस थाने से एक गाय पकड़ लायें, बच्चे को बड़ी देर से दूध नहीं मिला है।

देवेन बोला, कितनी मुश्किल से तो एक बच्चा हुआ,—आप लोग इस तरह बिना पैसे के उसे पुलिस को दिये दे रहे हैं ?

मीनाक्षी बोली, ज़रा देखो तो भाई ! गाड़ी छूट गयी, ज्योंही बच्चे को भीतर सुला ज़रा आकर दम ले रही थी कि बाप रे बाप, भरभरा कर सिपाही आ घुसे। सोच रही थी क्या होगा। अरे सब लोग जाओ न, अब क्या मौत आई है—सब लोग खड़े-खड़े क्या मा बाप का ब्याह देख रहे हो ?

उस आदमी को समझा-बुझाकर पुलिसवाले हँस कर चले गये। वह भी उनके पीछे-पीछे चला गया। फिर किसी की रुकने की हिम्मत न हुई।

गायत्री मुँह पर कपड़ा ढाँके हँस रही थी। अब बढ़कर बोली, यह क्या पागलपन किया, मीनाक्षी दीदी ?

मीनाक्षी हँसकर बोली, प्रजातंत्र का युग है रे, सब कुछ बाँट लूँगी।

कंकर बोला, भाई मैं तो उसका बाप नहीं बन सकूँगा।

मीनाक्षी ने दाँत से दाँत दबाकर कहा, तुम्हें किसी का बाप कभी नहीं बनना पड़ेगा।

देवेन बोला, पर यह तमाशा क्या है मीनाक्षी ?

मीनाक्षी मुस्करा कर बोली, खेल किया है, और कुछ नहीं।

चार

शहर के एक हिस्से में—जहाँ नया शहर और रास्ते तोड़ कर नयी बस्ती बनी है। बस्ती अभी भी घनी आबाद नहीं हुई है—ऐसी ही एक बस्ती में बहुत सस्ता मकान किराये पर लेकर देवेन की गृहस्थी है। मकान छोटा है, एक मंज़िला, पर उसमें ही इन्तज़ाम अच्छा है। मकान के एक कमरे में एक वृद्धा रहती हैं, वह रिश्ते में देवेन की दादी की बहिन हैं। किसी नये अतिथि के आने से उन्हें कौतूहल नहीं होता, उसका नाम जान कर ही वे सन्तुष्ट हो जाती हैं।

नवागत दो लोग हैं, एक का नाम कँकर है, दूसरे का मीनाक्षी, उनके लिये यही काफी है, उनके लिये जाति गोत्र कुल शील बेकार है।

पार्टी मीटिंग करने के लिये देवेन उसके दूसरे दिन सवेरे आसनसोल चला गया। लौटने में उसे दो दिन लगे। वापस आकर देखा कि हावड़ा स्टेशन पर मिला बच्चा नहीं है, मीनाक्षी ने ख़ुद जाकर शिशुमङ्गल आश्रम में उसे रखा दिया। आश्रम के अधिकारी ने मीनाक्षी को उपदेश देते हुए कहा, सन्तान को क्या इस तरह छोड़ना उचित है? मीनाक्षी बच्चे की माँ नहीं है, इस बात पर उसने यकीन नहीं करना चाहा। मीनाक्षी विरक्त हो ज़नाने अस्पताल गयी और अपने शरीर की परीक्षा करा रिपोर्ट लायी। पता चला कि मीनाक्षी सच कहती है। इसके बाद बच्चे को और उसके साथ बच्चे के कल्याण के लिये एक सौ रुपया आश्रम के अधिकारियों को देकर चली गयी।

खेल दो ही दिन रहा, पर सीमा पर पहुँच गया। मानसिक परीक्षा से पता चला कि मीनाक्षी के मन पर बच्चे का कुछ असर नहीं पड़ा। मीनाक्षी मातृ जाति की है, इस बात से स्त्रियों को ग़ुलाम बना डालने की एक हीन चेष्टा पहले ही दिखायी पड़ती है। आश्चर्य तो यह है कि स्त्री के गर्भ से उत्पन्न पुरुष सदा से नारी का अपमान करता आया है; उसका

सबसे बड़ा अस्त्र रहा है स्त्रियों को 'मातृजाति' कह कर धोखा देना। मीनाक्षी का मन टटोलने से उस पर ज़रा भी असर नहीं मिलेगा, स्नेह तो दूर की बात रही। वह निष्ठुर स्वभाव की नहीं थी, पर उसकी प्रकृति अन्धी नहीं थी। बच्चे को उसने मनुष्य की सन्तान समझ कर हावड़ा स्टेशन पर गोद में नहीं उठा लिया, उस समय वैसी मानसिक अवस्था में वह कुत्ते के पिल्ले को भी गोद में उठा सकती थी,—उसके लिये जीव मात्र का जीवन ही बड़ा था, उसके समीप मनुष्य का अथवा कुत्ते का पिल्ला प्रधान चीज़ नहीं थी।

इस मकान में एक हफ़्ता बीत गया। देवेन एक छोटा मोटा समाजवादी नेता है, इसलिये सबेरे से रात तक लड़कों का झुंड इस घर में आता जाता रहता है। गायत्री उसकी सहधर्मिणी है, इस कारण उसके हाथ में भी एक अखिल भारतीय महिला प्रतिष्ठान का भार है और इसलिये दो चार युवतियाँ भी आती जाती ही रहती हैं। मीनाक्षी सहज ही इस समाज में प्रविष्ट हो गयी। लड़कों ने उसकी तारीफ़ की।

नूतन समाज में विचित्रता कम नहीं थी। हाल ही में जेल से छुटे कितने ही युवक युवती थे—जिन्हें देश-सेवा के कार्य में कहीं ओर-छोर नहीं मिलता था। मीनाक्षी ने बड़ी आसानी से अनुभव किया कि इन सब लड़के लड़कियों में जीवन की कैसी व्यर्थता है, उद्देश्यहीन आक्रोश है। वह राजशक्ति के विरुद्ध हो सकता है, संभव है वह मौजूदा समाज व्यवस्था के विरोध में हो। पर असन्तोष उनके उत्तरदायित्वहीन आचार और आचरण से साफ साफ प्रकट होता था। समाज की मशीन जब सीधी दिशा में घूमती रहती है तब विपरीत स्वभाव का मानव उससे छटक कर अलग जा पड़ता है। वह उससे ताल नहीं मिला सकता। इनमें से किसी ने मज़दूर संघ बनाया था, किसी ने किसी नामी नेता के विपक्ष में झगड़ा खड़ा कर रखा था। कोई कालेज में राष्ट्रीयता का प्रचार करने में निकाला गया। कोई बड़े निरुत्साह से देश सेवा के लिये आया था, कोई अहिंसा और

असहयोग को दिल से नापसन्द कर आया था। और सबका विरोध विवाह और गृहस्थी के आदर्श से था। वे अभिभावक की परवाह नहीं करते, बड़ों का सम्मान नहीं करते,—सबका नाश की ओर लक्ष्य था, पर दुःख कोई भी नहीं उठाना चाहते थे। दरिद्र पर उनकी दया नहीं थी और अमीरों से घृणा करते थे। कोई घर से निकला हुआ था, कोई समाज से परित्यक्त, और कोई प्रेम की चोट खाये; किसी ने ग़रीबी की तकलीफ़ों से आत्महत्या न कर इस समाजवादी दल में नाम लिखा लिया था। मीनाक्षी बीच बीच में देखती कि भूखे पागलों का सा दल आकर अजीब पागलपन में मत्त हो जाता था।

जो कुछ काम करते थे वे भी बेकार थे। कोई छोटे से स्कूल में मास्टर था, कोई किसी साप्ताहिक अख़बार से सम्बन्धित था, कोई सिनेमा में अस्थायी रूप से अभिनेता था, कोई बीमा का कैनवेसर और कोई दवाइयों का एजेन्ट। जो दो चार लड़के लड़की बाहर से यह प्रतिज्ञा करके आये थे कि भारत को स्वतन्त्र देखे बिना घर वापस न जायँगे, उनमें से भी कुछ लोग थे, कुछ लोग अमीर नेताओं के आश्रित थे। माँ, दीदी, भाभी, मौसी आदि रिश्ते जोड़ कर वे कलकत्ते में खाने का प्रबन्ध किये थे। यह घर उनके मिलने का प्रधान केन्द्र था। इस घर के प्रजातंत्र में सबका अधिकार बराबर था—यह बात मीनाक्षी ने पहले ही समझ ली थी। कहाँ से चाय आती है, कौन खाने का सामान लाता है, कौन कब खाना पकाता है, और कौन बर्तन माँजता है, घर धोता है—इसका कोई ठीक नहीं। देवेन दावत देता है, गायत्री खाना पकाने बैठ जाती है, बाहर के अपरिचित लड़के लड़कियाँ परोसना शुरू कर देते हैं—पर पैसा किसका लगता है इसका कोई पता नहीं लगता। देवेन एक अख़बार का सहकारी सम्पादक है,—तीस रुपये उसकी मासिक दक्षिणा है, उसमें से बाईस रुपये मकान के किराये में चले जाते हैं; बाक़ी रहते हैं आठ रुपये,—आठ रुपये में महीने में कम से कम डेढ़ सौ आदमियों को खिलाया जाय, इस बात

पर मीनाक्षी विश्वास नहीं कर सकती। पर मज़े की बात यह थी कि कई दिन खाना नहीं जुटता था। बेहद मेहमानदारी और दावत—पर वह केवल राजनीति की बहस के लिये, बूर्ज्वा और कैपिटलिस्ट की मज़ाक उड़ाने के लिये,—पर खाने आदि की बात दबी रहती थी। कई बार देखा गया कि क़ाग़ज़ के ठोंगे में कुछ आलू और चावल आये—चावल तरह तरह के मिले हुए। पता लगाने पर मालूम हुआ कि यह आलू और चावल पार्टी की रक्षा के लिये भीख माँग कर इकट्ठा किया गया था। पर उसे सब इतनी ख़ुशी से खाते थे कि दारिद्रय और भिक्षा का सारा मैल और लज्जा बिलकुल धुल जाते थे।

जो औरतें आतीं वे दो श्रेणी की थीं। एक दल के मुँह पर घूँघट नहीं रहता था और दूसरे दल के सिर पर सौभाग्य का चिह्न रहता था। जिनके मुँह पर घूँघट नहीं रहता था उनके बारे में मीनाक्षी को कम कौतूहल था, उनके मन की भाषा देवता भी नहीं जानते, पर जिनके सिर पर सिन्दूर रहता उनमें बहुतों के पति देशप्रेम के अपराध में निर्वासित थे, कुछ पति के चरित्र से विरक्त थीं, कोई असती होने के अभियोग में निकाली गयीं, कुछ कार्पोरेशन के प्राइमरी स्कूल की अध्यापिका थीं और कुछ ग़रीबी के कारण बे-घरबार थीं।

इसी तरह मीनाक्षी का एक सप्ताह कट गया। इसी एक सप्ताह में एक अजीब सा करुण रस उसके मन में भर गया था। जिनकी चाल ढाल नहीं, बेवकूफ़, किसी धारा के साथ मिल कर चल नहीं सकते, उनके लिये उसका अहेतुक और अयौक्तिक सोच विचार। यह करुणा किस लिये? इसको जो समझा सके ऐसा मनोविज्ञान का पंडित कौन है? पर सीधी बात से नतीजा यह निकलता है कि उन सबके कलेजे के सम्मिलित अग्निकुंड की एक चिनगारी मीनाक्षी के हृदय में मिलती है। वे जिस स्वर में गीत गाते हैं उसी की एक रेख, उस का एक कम्पन मीनाक्षी को जैसे चंचल कर डालता हो। वे नासमझ हो सकते हैं,—फिर भी उनके लिये कुछ त्याग

स्वीकार है, थोड़ा दुःख सहन कर सकने पर मन को जैसे संतोष मिलता हो। इस अन्याय में उसकी ममता क्यों है? दुनिया में जो शक्तिशाली हैं, जो चिरस्थायी अधिकार क़ायम रख कर मज़े में दिन बिता रहे हैं उनके ख़िलाफ़ जो विद्रोह करते हैं उनके लिये मीनाक्षी की असंगत सहानुभूति रहती है। जिनकी तबियत में विनाश की प्रवृत्ति है, जो आदमी के लिहाज़ से किसी काम ही न आ सके, टूटी डोंगी जिनके घाट पर आकर टिकती है वह मीनाक्षी को कैसे अच्छे लग सकते हैं?

कंकर बोला, तुम तो सृष्टि असृष्टि से अलग हो, प्रेम और निष्ठुरता दोनों का अनुकूल और प्रतिकूल तुम्हारे जीवन में अग्राह्य है। फिर तुममें यह चित्तविकार कैसा? यह सब दुनिया का जंजाल है। जो काम के लोग हैं वे दुनिया के तरह तरह के कामों में लगे हैं,—यह लोग उनके कारख़ाने में कूड़ा कचड़ा हैं, इसी लिये इन्हें जगह नहीं मिलती।

मीनाक्षी ने जवाब दिया, इस बात पर कैसे यक़ीन करूँ, फिर भी कंकर, तुम कलेजे पर हाथ रख कर कहो, काम में लगने की योग्यता ही तो मनुष्य का अन्तिम परिचय नहीं है—और भी कुछ बाकी रहता है, कुछ और बात भी रह जाती है।

कंकर ने उत्तेजित होकर कहा, तुम जल्दी ही खतम हो जाओगी इसका प्रमाण तुम्हारी यह बात है। मैं जानता हूँ कि संसार में तुमने बड़ी तकलीफें सही हैं, पर तुम सख्त नहीं हो सकीं। मैं अधः पतित को बर्दाश्त कर सकता हूँ पर कमज़ोर को बर्दाश्त नहीं करूँगा। इस्पात कैसा भी रहे हथौड़े की चोट सह सकता है, पर मिट्टी का खिलौना आग में पकाने पर भी मामूली चोट से चूर-चूर हो जाता है। मीनाक्षी, सावधान, तुम अहल्या की तरह शायद इस आशा में पत्थर की बनी हो कि कोई रामचन्द्र पैर छुआ कर तार दे।

मीनाक्षी ने मुस्कराते हुए कंकर के सर पर हाथ फेर कर कहा, आज खाना खाया है?

झटका देकर कंकर ने उसका हाथ अलग कर दिया। बोला, इसके

माने ? मेरी बात तुम नहीं मानतीं ?

मानती तो हूँ ।

तब ?

तुम कहना क्या चाहती हो ?

मुस्करा कर मीनाक्षी फिर बोली, तुम्हें क्या पता, तरह-तरह की फिक्रें हैं, कल्पना और आदर्श से पेट की रोटी बड़ी होती है ।

कंकर ने कहा, निश्चिन्त पेट की रोटी आदमी को जानवर बना डालती है, जानती हो ?

जानती क्यों नहीं, जैसे हम दोनों । मैं वह बात नहीं कह रही हूँ ।—मीनाक्षी कहने लगी, तुम्हारी बातों मे ही जवाब दे रही हूँ, पहले भरपेट खाना दो, उसके बाद लड़ने भेजना । जो घर में खाने का प्रबन्ध किये बिना लड़ने के लिये पैतरा दिखाते है, वे लड़ाई में मर भले ही जाते हों पर लड़ाई में जीतते नहीं है ।

कंकर बोला, अन्न समस्या के साथ ही दूसरी समस्याएँ संलग्न हैं, यह तो तुम मानती नहीं हो ?

मैं वही मानती हूँ । फिर भी जो अन्न को ठीक से खाना नहीं जानते उनसे क्या कहा जाय ?

वे ही क्रान्ति करते हैं, समाज में और राष्ट्र में उथल-पुथल करते हैं, वे दुनिया का रुख मोड़ देते हैं । वे ही महामानव के प्रतिनिधि होते हैं । आज वे कूड़ा कर्कट हैं, पर कल वही शासन की शक्ति होंगे; आज जो उपेक्षित हैं वे कल के राष्ट्रगुरु होंगे । इन पर कोई अनुग्रह मत करो, स्नेहदान कर इन्हें भुलावे में मत डालो, निर्मम भाव से इन्हें मृत्यु की ओर ठेल दो । इनकी हड्डियों से दधीचि का वज्र बने, इनके कंकालों के ढेर से प्रवाल द्वीप का जन्म हो—भविष्य का मानव वहाँ नयी फसल पैदा करेगा ।—कह कर कंकर बाहर चला गया।

व्याख्यान बढ़िया है । अखबार में छपने से उसकी दैनिक बिक्री की

संख्या कम से कम एक लाख हो सकती। फिर भी मीनाक्षी को उसमें खोजने पर भी कहीं उत्साह नहीं मिला,—निर्मम भाव से मृत्यु की ओर ठेलने का उसका मन न हुआ। कंकर की बाकी उपमाएँ साहित्यिक रूप से उसे खराब नहीं लगीं। नियमित रूप से साहित्य सृजन करने पर संभव है कंकर किसी दिन रवि बाबू का चार लाइन का आशीर्वाद पा जाता। मीनाक्षी मुस्कराती हुई निरुत्साहित अकेले कमरे में चुपचाप बैठी रही।

आज इस घर में खाना नहीं बना। कल तक थोड़े मुरमुरे और दो-चार पाव रोटी से कुछ लोगों का काम किसी तरह चल गया। पर इस उपवास में भी उनमें किसी असंतोष की जलन नहीं थी। पड़ोस के कमरे में देवेन और गायत्री को घेर कर समाजवादी युवक-युवतियाँ बराबर आधुनिक रूस की आन्तरिक अवस्था की बातचीत कर रहे थे। उनमें हँसी थी, गप्पें थीं, मज़ाक था, खादी और अहिंसा पर व्यङ्ग था—केवल खाने की फिक्र नहीं थी।

चित्त विकार,—वह होगा, पर मीनाक्षी इस चित्तविकार का आज इस अपराह्नकाल में मुग्ध मन से उपभोग करने लगी। उन लोगों में किसी पर उसका पक्षपात नहीं है, कोई भी उसके हृदय को आकर्षित नहीं कर सकता। उनमें बहुत से बुद्धू हैं, बहुत से मूर्खतावश वहाँ जमा होते हैं—पर इस निर्जन कमरे में बैठ कर उनके सम्मिलित जीवन का वञ्चित दुःस्थ रूप मीनाक्षी की आँखों के आगे नाचने लगा। उनमें विडम्बित मानवता का उन्माद नहीं है, है केवल बच्चों की सी चपलता,—उनमें आदर्शवाद का प्रचार करने से अधिक उनको भोजन और स्नेह देकर ही शान्त किया जा सकता था।

मीनाक्षी के हृदय का एक कोना मानो धड़कने लगा।

पाँच

रसोई के दरवाज़े पर खड़े गायत्री ने कहा, देखती हूँ कि कई दिन से कामरेड मीनाक्षी दीदी ने अन्नपूर्णा का आसन दखल किया है। इन सब भूतों को भोजन कराने से फ़ायदा क्या ?

मीनाक्षी बोली, कामरेडों की जलन। उन्हें जितना ही भूख सताती है उतना ही वे रूस की ओर भागते हैं। जैसे सब लेनिन के भूखे हों। इसी लिये कहती हूँ कि सब लोग पेट भर खा लो, खाने पीने पर मुँह ज़रा बन्द रहता है।

गायत्री बोली, तुम्हारे डर से अब सब चुप हैं, सब लोग मैदान छोड़ कर भाग गये हैं। इस बार अच्छा शासन रहा। देवेन कहते थे, ऐसा लगता है कि मीनाक्षी की डाँट से पॉलिटिक्स यह घर छोड़ कर बनवास ले लेगी। क्यों, तीन दिन से कंकर दिखायी नहीं पड़ रहा है ? झगड़ा तो नहीं कर लिया ?

नहीं भाई, वाक् सर्वस्व आदमी लोग स्त्रियों की आँखों में गड़ते हैं, उस दिन बिगड़ गयी थी, एक पैर में जूता पहन कर भाग गये। वह कपड़ा पहनते हैं काछ लगा कर गिरह बाँध कर, याने उनकी बुद्धि बड़ी ढीली रहती है, इसी लिये बाँध कर रखते हैं। हम लोग कपड़ा पहनते हैं शरीर लपेट कर, हमारे सारे अंगों में बुद्धि के चिह्न हैं, कहीं चले गये हैं, जब ख़ुशी होगी आ जायँगे।

अच्छा, मीनाक्षी दीदी ?

कहो।

कंकर को छोड़ कर तुम नहीं रह सकती हो, बताओ यह सच है या नहीं ?

सच है, पर कहना क्या चाहती है ?

गायत्री ने मुस्करा कर कहा, प्रेम !

मीनाक्षी बोली, प्रेयसी का प्रेम और मङ्गल कामना ! कंकर प्रेयसी का मंगल चाहेगा इतना उसका अधःपतन नहीं हुआ। यह कह कर मीनाक्षी हँसने लगी।

फिर क्या चाहता है ? अमंगल ?

नहीं, वह मंगल अमंगल कुछ नहीं चाहता। उसके पहले ही उसने मुझे पा लिया है।

गायत्री ने पूछा, पर तुम तो पकड़ में आने वाली लड़की हो नहीं !

मीनाक्षी बोली, पकड़ने तो दिया नहीं है। और किसी दिन पकड़ में आ जाऊँगी यह भी तो नहीं कहा।

समझ नहीं सकी मीनाक्षी दीदी ?

तरकारी का बर्तन उतार कर मीनाक्षी बोली, बहुत साफ है। प्रेम कोई चीज़ नहीं है, अच्छा लगना ही असल चीज़ है। अगर अच्छा लगे तो पति, संतान, संसार सब प्रेममय है, और नहीं तो अपनी टूटी डोंगी अलग खेओ।

गायत्री ने कहा, प्रेममय क्यों कहती हो ?

उसके माने सुन्दर ! प्रेम न रहने से संसार रसहीन खोई की तरह लगता।

दोनों एक दूसरे को अच्छे लगते हो ?

खूब। यही तो डर है। दोनों का एक ही स्वर है। दोनों ही का स्वर चढ़ा हुआ है। डर इसी लिये लगता है।

डर क्यों ?

कहीं टूट न जाय। हम स्त्री-पुरुष होकर रह सकते हैं पर पति-पत्नी होकर रहना असंभव है।—मीनाक्षी कहती गयी, बिजली का प्रकाश होता है—उसमें एक तार पाज़िटिव और दूसरा नेगेटिव होता है। सब तरफ यही बात है। एक आदमी अगर बिगड़ा रहे, तो दूसरे को शान्त

होना पड़ता है—इस विपरीत प्रकृति के एकत्र संयोग में भी कल्याण है। और दोनों ही विक्षुब्ध हों, माने लोहे से लोहा लड़े तो आग निकलती है; और दोनों ही मिट्टी के खिलौने हों तो दोनों ही मिटे। हम दोनों दो तलवारों की तरह हैं—दोनों तलवारें जब निकल पड़ें तो देखनेवाले ख़ुश होते हैं। हमारा मिलन नहीं हो सकता, पर विच्छेद भी संभव नहीं है। हम अमंगल की कल्पना नहीं करते पर मंगल की परवाह भी नहीं।

गायत्री बोली और भविष्य ?

मीनाक्षी हँस पड़ी, बोली, हमारा मन ऐसा बुड्ढा नहीं हुआ है कि भविष्य की चिन्ता करें। एक नदी का नाम है पद्मा, दूसरी का ब्रह्मपुत्र—दोनो तेज़ बहती हैं। वह अगर मिल सकें तो अच्छा है, यदि नहीं मिलती हैं तब भी महान् भविष्य की ओर बहती हैं। दोनो ही सागर की ओर उन्मुख हैं।

गायत्री बोली, कवित्व !

मीनाक्षी ने कहा, जो पशु हैं उनमें कल्पनाशक्ति नहीं होती, इसीलिये उनका जीवन केवल आहार निद्रा और मैथुन की समष्टि है, पर मानव में कल्पना है, इसीलिये वह जनता का दुःख दूर करने के लिये साम्यवाद का प्रचार करता है; साम्य, स्वाधीनता और भ्रातृत्व की स्थापना के लिये ख़ूनी क्रान्ति करता है, वह दुर्गम मेरु के आविष्कार की ओर अग्रसर होता है, वह नये समाज का निर्माण करता है। हमारी विचारधारा और आगे बढ़ी हुई है, इसीलिये हम कुछ नहीं मानते—हमारा अभियान दक़ियानूसी के विरुद्ध है—प्रेम में हमें सन्तोष नहीं, मैथुन में आनन्द नहीं, संसार रचना में शान्ति नहीं। इसे चाहो भाषण कहो, आधुनिक शिक्षा का दुष्परिणाम कहो, मुझमें चरित्रबल का अभाव कहो,—फिर भी मैं ज़ोर देकर कहूँगी कि कंकर जो मुझे अच्छा लगता है उसका कारण है, उसकी चौड़ी छाती घुँघराले बाल, सुन्दर मुख और कठोर भुजाओं के कारण नहीं, यह बात भी नहीं है कि मैं उसकी दो बलिष्ट भुजाओं के निपीड़न में अंगूर के गुच्छे की

तरह दब जाती हूँ, पर अच्छे लगने का कारण है, वह ईश्वर के विरुद्ध, धर्म के विरुद्ध, वर्ग और समाज के विरुद्ध खड़ा होना चाहता है। वह प्रकांड तपस्वी है, महान् कलाकार है। वह पुराने ईश्वर को तोड़ कर नया ईश्वर गढ़ना चाहता है, सृष्टि के हृदय में नये रक्त का संचार करना चाहता है। कंकर मेरी ग्राह्यमूर्ति नही है, किन्तु कंकर की भावमूर्ति ही मुझे प्रियतम है। कंकर मेरे समीप सुन्दर है, पर देवता रूप में नहीं, वह अत्यन्त असामान्य है—इसी लिये वह मेरे लिये सुन्दर है। श्रीकृष्ण जब अनन्त रहस्यमय हुए तो उनका नाम घनश्याम हुआ, उन्होंने जब सुदर्शन चक्र हाथ में लेकर संहारमूर्ति धारण की तो उनके पैरों पर लोट कर बोली, हे रुद्र, तुम्हें हम प्रणाम करते है। तुम्हारी इस संहारलीला में ही मानो कल्याण दिखाई पड़ रहा है।

गायत्री ने इस बार हँस कर कहा, मीनाक्षी दीदी, तुम्हारी यह तकलीफ दूर होने में समय लगेगा।—कह कर वह चली गयी।

भूखे व्याघ्र शावकों का दल जिस तरह शेरनी को घेर कर बैठता है, उसी तरह मीनाक्षी को घेर कर यह लेनिन और ट्राट्स्की का दल रसोई में भोजन करने बैठ जाता है। अधिकतर तो थाली के बदले अखबार में लेकर ही भात खाते हैं। चाय के प्याले में दाल, प्लेट में तरकारी, बाँये हाथ में तला हुआ बैगन, भात के ऊपर भोल,—पर इसमें ही उन्हें जितना आनन्द मिलता है, उतना ही शोर करते हैं। सोवियत् रूस की क्रान्ति के दिनों अवश्य ही मेट्रनों ने क्रान्तिकारियों को ठीक इसी तरह खिलाया होगा। सुव्रत बोला, तुम्हारे बनाने के कारण तरकारी बड़ी स्वाद हुई है, सुना मीनाक्षी!

इस घर में सब तुम हैं, सब ही कामरेड हैं। मीनाक्षी ने पूछा, सोवियत रसोईदारिन से भी अच्छी?

लामिसाल! लेनिन का भाषण भी इतना मीठा नहीं होता! तरकारी के गुण से अधिक तो तुम्हारे छू देने का मूल्य है।—कह कर सुव्रत बाघ

की तरह मीनाक्षी की ओर घूरने लगा। युवावस्था की उसकी दोनों बड़ी आँखें मानो भूख से जल रही हों।

मीनाक्षी बोली, सिर नीचा करके खाना खाओ, मेरा मुँह देख कर तुम्हारा पेट नहीं भरेगा सुव्रत।

मज़ाक करते हुए सुव्रत बोला, पेट के ऊपर शरीर का जो भाग है वह तो लबालब भर जायगा।

मीनाक्षी बोली, सुन रहे हो देवेन, अपने कामरेड को सम्हालो। इसके बाद शायद मुझे अकेला पाकर प्रेम निवेदन करेगा।

देवेन बोला, तो डरने की क्या बात है, तुम तो साम्यवादिनी हो!

पर यह महाभारत का युग तो नहीं है कि द्रौपदी कृष्ण भगवान को अन्तर्यामी कहे। मैं जानती हूँ, लेनिन साहब ख़ुद ऐसा साम्यवाद पसन्द न करते। सुव्रत, शर्म से सिर न झुकाये रहो, मुँह उठा कर कहो, हे कामरेड मीनाक्षी, मैं तुम्हे फ़ेयर कामरेड बनाना चाहता हूँ, और मैं जवाब दूँगी, हे स्ट्रांगर कामरेड, तुम्हारी मनोकामना पूरी करके मैं कृतार्थ होती। समझे सुव्रत, झंझट फौरन खत्म कर डालो।

व्याघ्र शावक ठठाकर हँस पड़े।

प्रमिला नाम की एक युवती बोल उठी, शायद सुव्रत सोच रहा है कि पूर्ण स्वराज पाना आसान है पर मीनाक्षी दीदी को समझना बहुत मुश्किल है।

सुव्रत बोला, सब मिल कर मुझे झेंपा दोगे यह मत समझ लेना। प्रेम जताने से ही औरतों के मन का पता नहीं लगता यह मैं जानता हूँ।

गायत्री बोली, फिर कैसे लगता है बताओ तो सुव्रत?

होशियार बनना पड़ता है,—कंकर की तरह धोखा देना होता है।

मीनाक्षी ने कटाक्ष करते हुए कहा, पर धोखा देने में थोड़ी अक्ल की ज़रूरत होती है।

सुव्रत ने युद्ध घोषणा की, धोखे में थोड़े ही दिन रखा जा सकता है, हमेशा नहीं।

देवेन बोल उठा, पर हमेशा तो कुछ नहीं रहता, यहाँ तक कि अंग्रेज़ का आत्म सम्मान तक नहीं रहता। मामूली जापानी गोरे के थप्पड़ से वह भी मिट्टी चाटने लगता है। हमेशा को बातचीत में न लाओ, कामरेड।

सुव्रत बोला, लड़कियाँ धोखा देना नहीं जानतीं।

मीनाक्षी ने जवाब दिया, थोड़ा तो जानती है, नहीं तो हँस क्यों रहीं हूँ ? गले की आवाज़ से दिल की बात समझ लेती हूँ, इसीलिये तो तमाम लोगों को चला सकती हूँ।

सुव्रत इस बात से ज़रा उत्तेजित हो उठा। मुँह गंभीर करके बोला, धोखा देना तुम्हें बिलकुल नहीं आता। सोचा था कि बात दबा ही जाऊँगा—

सबने उसकी ओर उत्सुकता से देखा।

सुव्रत बोला, परसों दोपहर को मेट्रो के सामने से आ रहा था। कंकर को एक अपरिचित लड़की के साथ देखा। लड़की का ठाट-बाट अजीब अश्लील था। तुम लोग मुझे ग़लत न समझ लेना। युवक-युवती सिनेमा देखने जायँ यह बर्दाश्त करने की उदारता मुझ में है। पर जो कुछ देखा, वह और कुछ भी हो, सभ्यता नहीं हो सकती। दिन दहाड़े—फ़ुटपाथ पर—चारों ओर भीड़भाड़—ऐसे मे दोनों की किस तरह कुत्सित हँसी, कैसी फूहड़ चालढाल ! इसे तुम लोग कहोगे आधुनिक युग, इसे तुम कहते हो स्वाधीन प्रेम ?

मीनाक्षी बोली, मेरा तो विश्वास है कि दोनों शराब पिये थे।

मैं इतना नहीं कहना चाहता—शायद यह सच न हो !

फिर चाल ढाल कैसी थी ? जैसी बालीगंज के बूर्ज्वा लोगों की होती है ?

नहीं बिल्कुल वैसी तो नहीं, झूठ क्यों कहूँ।

मीनाक्षी आँख मटका कर बोली, जैसी पेरिस के नाच घरों में सुनी जाती है, उस तरह की ?

सुव्रत ग़ुस्से से बोला, वह होता तो समझता कि इस देश की स्त्रियों में जीवन है, लड़कों में भोग करने का पराक्रम है।

तब कैसी थी ? बताओ न। शरम की क्या बात है ?

यही समझ लो कि हाथ पकड़ कर बड़े ज़ोर से हँस रहे थे। अभी तो यहाँ विलायत नहीं हो गया है।

सुव्रत, देख कर तुम्हें ईर्षा हुई कि मैं आज तक इतना उच्छृङ्खल नहीं हो सका, घृणा इस लिये हुई कि यह सब लड़कियों को इसी तरह धोखा देता है।—सुव्रत बोला, बोली की उच्छृङ्खलता समझ में आती है, पर बायरन की कामुकता को हम सब—

मीनाक्षी गला साफ करती हुई बोली, सुव्रत, तुम मुझे ग़ुस्सा दिला रहे हो। पर याद रखो, शेली में एक कोमल किशोरी बालिका थी, और बायरन था पुरुष,—पुरुष क्यों महापुरुष। शेली गला फाड़ कर ईश्वरीय वेदना में रोता था, किन्तु बायरन मन ही मन घृणा करता था नारी से, समाज से, वर्ग से, ईश्वर से। शेली की मृत्यु प्रकृति की गोद में हुई और बायरन दानव की मृत्यु मरा था। तुम जिसे कामुकता कहते हो मैं उसे बड़ा भारी आत्म-सहार कहूँगी। पुरुष तभी असाधारण होता है जब बहुत सी स्त्रियाँ उसकी कामना करती हैं। तुम मुझे चेतावनी देना चाहते हो यह मैं समझती हूँ, इसीलिये तुम्हें बताना चाहती हूँ कि सब उसे चाहते हैं इसीलिये वह मेरी पसन्द है। जिसे कोई भी न चाहे उस दरिद्र को मैं सहन नहीं कर सकती। जिसमें रंग है वह सब को रंगीन कर देता है।

सुव्रत का मुँह कुछ फीका सा पड़ गया। फिर भी उठते समय जवाब दिये बिना वह न रह सका। बोला, जिसे सब चाहते हैं उसे चाहना एक तरह का कंगालपन है, यह याद रखो मीनाक्षी।

मीनाक्षी ने जवाब दिया, पर जिसकी प्रार्थना स्वीकार होगी वही भगवान की दया पायेगा।

तो दया ही मिलेगी, अधिकार नहीं मिलेगा।

हँस कर मीनाक्षी बोली, अपनी बात अपने ही लिये समझते तो अच्छा होता।

उस दिन कहीं कोई बड़ी सभा थी। विषय था समाजतंत्र और भारतवर्ष। पश्चिम भारत के एक प्रसिद्ध समाजवादी उसके सभापति थे। सब लोगों का लक्ष्य कलकत्ते के एक विशेष पार्क की ओर था। संध्या साढ़े पाँच बजे से सभा थी। गांधीजी के परमभक्त, जो एक प्रसिद्ध जूट मिल के मालिक करोड़पति थे, वे सभा का आयोजन कर रहे थे।

घर पर वृद्धा के सिवा और कोई रहना नहीं चाहता था। पर मीनाक्षी को भी रहना पड़ा। स्त्रियाँ रहस्यमयी होती हैं, अक्सर जाने की इच्छा रहने पर भी उनका जाना नहीं हो सकता। शारीरिक कारणों के बहाने वे चुपचाप पड़ी रहती हैं। लेटे लेटे मीनाक्षी ट्राट्स्की की 'जीवन की समस्या' नामक पुस्तक के पन्ने उलट रही थी। इसी समय बाहर पैरों की आवाज़ सुनायी पड़ी। पैरों की आवाज़ अत्यन्त परिचित थी, इसलिये किताब अलग रखकर मीनाक्षी हँस कर बोली, बहुत दिन बीत गये मैं किस फाल्गुन से तुम्हारे आसरे हूँ,—अरे सुव्रत, तुम ? क्या हाल है, सभा में नहीं गये ?

जिसे सोचा था वह नहीं निकला। फिर भी मीनाक्षी उठकर बैठ गयी। बड़ी विरक्ति के रहने पर भी बड़ा सौजन्य दिखाती हुई बोली, सभा में जाने पर अच्छी तरह गलेबाज़ी कर आने से अच्छा ही होता।

सुव्रत बोला, मेरा उससे बड़ा काम रह गया था, तुम्हारे पास आकर माफी माँगना।

मीनाक्षी ने पूछा, यानी ?

यानी तुम मुझे जो समझती हो मैं वैसा नहीं हूँ।

सुव्रत, अगर मैं तुम्हें बड़ा अच्छा समझ रही हूँ ?

तो मैं समझूँगा कि तुम मेरा व्यंग कर रही हो। तुम्हारा अपमान सह सकता हूँ पर व्यंग असह्य है।

मीनाक्षी ने सवाल किया, उसका सबब ?

क्योंकि अपमान का बदला लेना आसान है पर व्यंग ऐसी जगह चोट करता है जहाँ दुर्बलता होती है।

हँसकर मीनाक्षी बोली, मैं तुम्हारा अपमान और विद्रूप दोनों ही नहीं करना चाहती। तुमने तो मेरी कोई भी हानि नहीं की है। जिसका मैं कभी कोई उपकार नहीं कर सकी उनमें बहुतों का प्रेम मुझे मिला है, तुम भी उनमें से एक हो। मैं जानती हूँ तुम मेरा नुकसान नहीं करोगे, क्योंकि मेरा नुकसान नहीं हो सकता है—फिर भी मैं तुमसे खफा क्यों होऊँगी। स्त्रियों के जीवन में,जो सबसे बड़ा गौरव है,—प्रेम—वही तुम मुझसे जताना चाहते हो, मैं जानती हूँ कि बहुत दिनों से कारण अकारण तुम मेरे चारों ओर परछाईं की तरह फिरते हो। औरत होकर उस ओर से मैं कैसे आँखें बन्द कर सकती हूँ, बताओ ?

सुव्रत बोला, डरते-डरते तुम्हारे पास आया था। पर ऐसा अच्छा व्यवहार मिलेगा, इसकी उम्मीद नहीं थी। मीनाक्षी, उस दिन तुम्हें बहुत सी कड़ी बातें कही थीं।

मीनाक्षी बोली, पर लगीं नहीं, जानते हो क्यों ? मुझे कुछ लगता नहीं है। बदन की चमड़ी सख्त हो इस लिये नहीं, पर मन के भीतर तक कुछ पहुँच नहीं पाता इसलिये।

सुव्रत सर झुकाये कुछ देर बैठा रहा। पर नीरव बैठे रहना संभव नहीं। मकान बिलकुल निर्जन था और समय मधुर आलाप के उपयुक्त, मीनाक्षी अनमनी थी,—ऐसा अवसर युवकों के जीवन में कम ही आता है। मीनाक्षी मुस्कराकर बोली, छः सात बरस पहले मैंने एक बचपन किया था—बड़ी मज़े की बात—

सुव्रत ने मुँह उठा कर देखा। मीनाक्षी कहती गयी, उस समय सिर्फ आई० ए० पास किया था, घमंड से ज़मीन पर पैर नहीं पड़ते थे। सोचा कि मेरे योग्य सुपात्र जब दुनिया में मिलना ही नहीं है तो अफ़सोस करने से कोई फायदा नहीं,—मैं देश सेवा करूँगी।

सुव्रत ने पूछा, उसके बाद ?

शुरू की बात पहले कह लूँ।—मीनाक्षी बोली, छुटपन से ही लड़कों के साथ ख़ूब रहती, लड़के बड़े अच्छे लगते। जो बड़े होशियार थे वे ही सबसे अधिक बेवकूफी करते, और उसी में मुझे मज़ा आता। जहाँ तक याद पड़ता है छुटपन में एक आध को छोड़कर किसी के साथ मेरा सम्पर्क नहीं रहा। वह सब मैं जानती ही नहीं थी। प्रकृति देवी के कठोर अभि-शाप से शैशव और किशोरावस्था में बहुत सी घटनाएँ हो जाती हैं—इसी लिये वे सब मनपर चिह्न नहीं कर पातीं—।

सुव्रत बोल उठा, मुझ से यह सब स्वीकार करने के माने क्या होते हैं, जानती हो ?

जानती हूँ, तुम अगर इससे कुछ सीख सको तो बुरा क्या है ?

इस निर्जन संध्या के समय मैं तुमसे शिक्षा लेने आया हूँ ? अच्छा जाने दो, तुम कहती चलो।

मीनाक्षी बोली, किशोरावस्था के बाद जब सारे शरीर में युवावस्था की तरंगें दिखायी पड़ीं, तो रक्त में एक अजीब चेतना आयी। चैत की जलती हवा में जैसे कच्चा अनार रंगीन हो जाता है, जिस तरह उसमें मिठास आ जाती है, ठीक उसी तरह के एक अद्भुत रस के कम्प से मैं

सारा दिन थरथराती रहती। हँसो मत सुव्रत, ठीक तभी तुम्हारी ही तरह का एक भौंरा मिल गया। उसके पंखों से जो गुंजन सुनी, उसके स्वर के साथ अशोक वृक्ष के कंपन की ताल मिल गयी। सोचो तो सुव्रत, तब मैं आई० ए० पास लड़की थी, काबिलियत बहुत आ गयी थी,—और चाहे जो हो या न हो पर मानव सृष्टि का वैज्ञानिक कारण छिपकर किताब में पढ़ लिया था। डाक्टर मेरी स्टोप्स की किताबें पढ़कर तीन चार साथ की लड़कियों के साथ षडयंत्र किया, हैवलक एलिस पढ़ें। ठीक इसी समय वह महा पारावार पार कर मन हरने के लिये आये।

सुव्रत बोला, तुम्हारी कविता का चरण तो बढ़िया है, जिसने लिखी है उसने रवि बाबू से भी अच्छी लिखी है।

मीनाक्षी बोली, जब तुम नहीं जानते तो मन तो चाहता है कि अपने नाम से ही कह दूँ। कंकर का एक कवि मित्र रवि बाबू की पुरानी कविताओं को उलट कर पद्य लिखने लगा। उससे ही वह विख्यात हो गया। युवक पाठक कहने लगे रवि ठाकुर के बाद देश में यही पहला रियलिस्ट कवि है।

जवाब में शान्तिनिकेतन की प्राचीन वनस्पति क्या बोली ?

बहुत सी छिपी तरकीब और ख़ुशामद के बाद उन्होंने दो पंक्ति आशीर्वाद की लिख भेजीं—'तुम्हारी कविता के अंकुर फूटने की संभावना ने मुझे आनन्द दिया।' वही चिट्ठी जेब में डाल कर छोकड़ा कवि साप्ताहिक का सम्पादक बन बैठा। इस समय वह कुछ का कुछ समझने लगा है और साहित्यिकों में निडर होकर रवि बाबू की समालोचना किया करता है। सब लोगों का कहना है कि अगली बार उसे साहित्य विभाग का सभापति बनाया जाय, वह सभापति बनने के योग्य है।

सुव्रत हँस कर बोला, शायद ऐसे ही लोग कंकर के दोस्त हैं।

मीनाक्षी बोली, यह बेवकूफ उसके दोस्त होते तो तुम्हें ख़ुशी होती, पर वह दोस्त नहीं है—इन्हें लेकर वह खेल खेलता है! अच्छा अब मेरी प्रेम

कहानी सुनो ! पक्षिराज पर चढ़ कर मेरा तरुण राजकुमार आया। उसके बाद बड़ा भारी उलट फेर हुआ।—मैं तरुण साहित्यिकों के उपन्यास और गद्य काव्य की कथा वस्तु बन गयी। पर बुखार छः महीने में ही उतर गया। इतना याद है कि बहुत सा अश्रु विनिमय हुआ पर एक भी चुम्बन का आदान प्रदान नहीं हुआ।

सुव्रत ने ठठोली में कहा, विश्वास नहीं होता।

विश्वास करना मुश्किल है, क्योंकि मेरे तब के प्राणेश्वर थे एक ऊँचे दर्जे के रोमाण्टिक। पर कुछ दिनों बाद ही मेरे पितृदेव उनका थोड़ा अपमान कर बैठे। जान के डर से उस बिचारे ने मुझसे एक ही दिन में विदा ले ली। कुछ दिनों बाद वह अपने दूर के रिश्ते की बहन पर आसक्त हो गये हैं—यह खबर मेरे कानों तक पहुँची। यही मेरी प्रेम कहानी है—समझे सुव्रत ?

सुव्रत करुण कंठ से बोला, मुझे भी क्या तुम उसी दल में डालना चाहती हो ?

मीनाक्षी बोली, ठीक जवाब पाकर तुम्हें ख़ुशी होगी ?

ज़रूर, आदमी हमेशा खरी बात सुनना चाहता है।

तो सुनो।—मीनाक्षी बोली, मेरी बात जाने दो, क्योंकि मैं गृहस्थ लड़की नहीं हूँ,—नगण्य गृहस्थी मेरी घृणा की चीज़ है। पर जो सचमुच गृहस्थ हैं, जो संभ्रान्त संसार की लक्ष्मी परिवार को सर पर लिये रहती हैं, जो करुणा ममता विवेक परार्थपरता से गार्हस्थ जीवन को महिमान्वित करती हैं—उनको भी परख कर देख लो, उनके मन में भी एक स्थायी अमानत का और दूसरा चलता खाता खुला है। अतिथि सज्जन, मित्र परिचित, निमंत्रित—यह सब उनके मन के चलते खाते में आते हैं। तुम भी मेरे चलतू हिसाब में हो सुव्रत।

सुव्रत को मानो कहीं चोट लगी। बोला, और तुम्हारी स्थायी अमानत में कौन है ?

कमरे में अँधेरा हो चला था, पर खिड़की के पास बैठने से मीनाक्षी के शरीर के पिछले भाग पर आकाश से द्वादशी के चन्द्रमा का उजाला पड़ रहा था। सुव्रत उसी ओर मुग्ध और व्यथातुर दृष्टि से ताकता रहा।

मीनाक्षी हँसी, बोली, आगे बढ़ आओ, तुम्हारे मुँह पर भाव परिवर्तन की रेखाएँ दिखाई नहीं पड़तीं। व्याकुल आग्रह के साथ सुव्रत आगे बढ़ गया, बोला, मीनाक्षी मैं यही चाहता था, तुम ही मुझे आगे आने को कहोगी, यह मेरा सबसे बड़ा स्वप्न है।

मीनाक्षी बोली, सर की ओर और बढ़ आओ। सर बहुत दर्द कर रहा है, ज़रा दबा दो।

सुव्रत उल्लसित स्वर से बोला, इसी लिये तुमने मुझ से यह बात याद रखने के लिये कही थी, मैं दया ही पाऊँगा अधिकार नहीं।

उत्तर में मीनाक्षी हँसने लगी।

हाथ काँप रहा है मीनाक्षी।—सुव्रत बोला, सारे जीवन के मूल में भूकम्प हो रहा है। तुम्हारा पहले पहल स्पर्श किया है।

इतने ही से भूमिकम्प ? तुम्हारा हाथ देखूँ।—नहीं नहीं, ठीक है, अभी नब्ज़ चल रही है। लो ज़रा सिर दबा दो।

काँपते गले से सुव्रत बोला, तुम्हारे सर दर्द क्यों हुआ, मीनाक्षी ?

मीनाक्षी बोली, वह स्त्रियों के शरीर-विज्ञान की बात है, ऐसा अवसर होता रहता है, यही प्रकृति का निर्देश है। किशोर अवस्था में लड़कियों का सर दुखना शुरू होता है, प्रौढ़ावस्था में खत्म हो जाता है।—तो इस बार तुम्हें अधिकार मिल गया ?

बैठे गले से सुव्रत बोला, पूरा नहीं।

मुस्कुराकर मीनाक्षी बोली, अच्छा, लो मैं आँखें बन्द किये लेती हूँ, तुम मेरा सर चबा डालो। सुव्रत, सर ही सर, और कुछ नहीं। मैं यहाँ अगर पागलखाने में होती तो तुम इस घर में खूँद नहीं सकते थे। अच्छा,

मैं जो कह रही हूँ सो सुनो। सुव्रत, तुम अच्छी तरह समझ लो कि मैं भी मछली पकड़ना पसन्द करती हूँ। पर उसे खिला खिला कर नहीं पकड़ती, एक ही झटके में पकड़ लेती हूँ। आज इस संध्या समय तुम मुझे बहुत अच्छे लग रहे हो। तबियत चाह रही है कि कुछ दुर्बलता का परिचय दे डालूँ।

सुव्रत बोला, तब मैं कृतार्थ हूँगा।

मीनाक्षी बोली, बिलकुल जानवर न होने से मैं आदमी का अपमान कर नहीं भगाती। और अपमान करना मुझे अच्छी तरह आता है। सुव्रत, तुम्हें मैंने प्यार किया है। इसी लिए तुमसे मुझे बहुत उम्मीदें हैं।

हुकुम करो।

पहले यह बताओ कि तुम्हारे कौन-कौन हैं?

बाप, दो बहनें, तीन भाई, एक मामा, दो चाचा,—और बूआ।

सब साथ रहते है?

हाँ, मामा के सिवा।

तुम्हारी माँ नहीं है, सुव्रत?

माँ छुटपन से ही नहीं हैं!

मीनाक्षी थोड़ी देर चुप रही। उसके बाद बोली, सुव्रत?

सुव्रत उस पर झुक पड़ा। मीनाक्षी बोली, मेरी छाती पर कान लगा कर सुनो, भीतर कहीं हलचल नही है। केवल प्राणों का स्पन्दन ही है, यकीन आता है?

आता है। लगता है मानो पत्थर के शरीर पर हाथ फेर रहा हूँ। मीनाक्षी, तुम मिट्टी हो या पत्थर?

मीनाक्षी बोली, मैं दोनों में से एक भी नहीं, हूँ केवल इस देश की लड़की। मेरी छाती में ही हैं तुम्हारी माँ, बहन, स्त्री, प्रेमिका। मेरी छाती में ही है तुम्हारा संहार और कल्याण। मुझमें इतना ऐश्वर्य है, उसे न लेकर तुम मुझे मृत्यु की ओर क्यों ढकेलना चाहते हो सुव्रत?

सुव्रत बोला, मीनाक्षी, तुम जो कुछ कह रही हो वह मेरी समझ में नहीं आता। मैंने तुम्हारा कुछ नुक़सान किया है ?

नुक़सान बहुत मामूली है, नुक़सान मेरा नहीं होता। पर मेरा हृदय तुम्हारे साथ जो सम्पर्क चाहता था उसे तुमने इतनी आसानी से पैरों तले रौंद डाला सुव्रत ?

क्या मतलब मीनाक्षी ?

मीनाक्षी बोली, सीधी तरह ही कहूँगी। उस सम्पर्क की प्रतिष्ठा यौन शुचिता से ऊपर है। समस्त आत्मीयता और प्रेम के ऊपर भी जो सम्पर्क अम्लान रह सके। इस देश की स्त्रियों की शुचिता को मलिन करना बहुत आसान है, पर तुम मेरे समीप छोटे पड़ जाओगे, यही निराशा मेरे लिये ध्वंस किये डालती है। कामरेड, क्या तुम मन ही मन उसी महान् क्षति की कामना कर रहे हो ?

सुव्रत का हाथ सुन्न हो गया। भरभराये गले से वह धीरे-धीरे बोला, तुम्हारी बातों से मैं मन ही मन अपमानित हो रहा हूँ।

विश्वास करो, मैं तुम्हारा अपमान नहीं कर रही हूँ। इस कमरे में हम अकेले हैं। तुमसे मैं निष्कपट होकर स्वीकार कर रही हूँ कि इस सुन्दर देह को मैंने केवल भोग के लिये सड़कों पर नहीं घसीटा है।—मीनाक्षी बोली, मेरे भी सब हैं, मुझे भी सब मिल सकता था। पर एक असाधारण जीवन बिताने के लिये मैं सब कुछ छोड़ आयी हूँ। नाटकों और उपन्यासों में तुमने ज़रूर ही नारी विद्रोह पढ़ा होगा, वे आधुनिक नाम लिये रहते हैं, पर वे सब पुराने घर सफेदी कर नये कहलाते हैं। मुझमें प्राचीन है पर जरा नहीं, अनुभव है पर बुढ़ापा नहीं। मैं सीता सावित्री के देश की स्त्री नहीं हूँ, मैं सनातन काल की नारी हूँ। मैं अपनी तारीफ़ नहीं करती, पर बहुत से लड़कों ने मुझे चाहा—मैंने देखा कि उनके उस चाहने में वही पुराना प्रेम था। नयी पोशाक पहने वही पुरानी कामुकता; एक ही लालसा के तरह तरह के साज बाज।

सुव्रत बोला, यह सनातन की बात भी याद रखना। यदि इसे अस्वीकार करो तो मैं समझूँगा कि तुम असुस्थ हो, समझूँगा कि तुममें स्वाभाविक विकार आ गया है। सच बताओ कि कंकर के साथ तुम्हारा सम्पर्क है?

सच ही कहूँगी। उसमें मुझे वैचित्र्य मिलता है। छाया और प्रकाश में, अच्छे बुरे में, सच झूठ में, वह विशिष्ट है।—नहीं नहीं, मनुष्य मात्र में वैसा कोई नहीं। अमंगल और अधःपतन को अपने जीवन में सत्य के साथ इस प्रकार प्रतिष्ठित करने में बहुत लोग पिछड़ जायँगे। जब वह नीचे की ओर उतरता है तो बिलकुल अतल में चला जाता है, दौड़े तो एक दम अनन्त की ओर चला जाय, और अगर उसका मन ऊपर उठने को करे तो वह ऊँचे से ऊँचे लोक में पहुँचे। मानव को मिटा कर नई नीव डालने की उसमें अद्‌भुत शक्ति है।

सुव्रत बोला, तुम उसकी कौन हो?

मीनाक्षी बोली, कोई नहीं, सहधर्मिणी मात्र। जिसे वज्रदण्ड के साथ विद्‌युत लता कहते हैं। उसे स्वीकार न कर सहायता करती हूँ। वह जब सर्वनाश करती है तो मैं उसकी व्याख्या भर करती हूँ।

सुव्रत बदन झाड़ कर खड़ा हो गया। दरवाज़े के पास आकर बोला, तुम से माफी माँगे जाता हूँ, और कहे जाता हूँ कि मेरी भूल दूर हो गयी। यह विश्वास लिये जाता हूँ कि तुम किसी की नहीं हो। किसी दिन भी कोई तुम्हें सम्पूर्ण रूप से पा न सकेगा। तुम्हारे इस भयानक आत्म स्वातंत्र्य के लिये ही तुम्हें चिर निर्वासन मिला है। तुम्हारा कोई आश्रय नहीं। तुम पर क्रोध न करूँगा, पर लग रहा है कि अन्धकूप से मुक्ति पा गया। तुम्हारी मित्रता का इतना ही दान लिये जा रहा हूँ।

मीनाक्षी संतोष की साँस छोड़कर बोली। जाओ भाई कामरेड।

छः

कंकर दोपहर को आ पहुँचा। मीनाक्षी ने उसकी अभ्यर्थना करते हुए कहा, गंगा स्नान कर आये हो ?

अच्छा !—तुम्हारा व्यंग समझा। स्नान तो कर आया, पर गंगा में नहीं—समुद्र में।

माने ?

माने पुण्य लूटने गंगासागर गया था।

हँस कर मीनाक्षी बोली, तुम्हारा पुण्य लूटना सुन कर ही मुझे डर लगता है। विष ज़रूर कहीं छोड़ आये हो। ज़रा से पुण्य के चारों ओर पाप रहता है। उसी तरह जिस तरह कालीघाट के मंदिर के चारों ओर वेश्याओं के अड्डे हैं। ख़ूब गन्दे हो आये हो न ?

कंकर बोला, बहुत ज्यादा नहीं। मामूली समुद्र की लहर में धुल गया। नया आदमी बन कर आया हूँ।

भौंह चढ़ा कर मीनाक्षी बोली, हालत अच्छी नहीं है, लगता है कि जात खो आये हो। और चेहरा भी तो ठीक नहीं दिखाई पड़ता, जैसे उड़ा हुआ सा हो—आँखों में मानो नींद भरी हो,—

कंकर बोला, चरित्र नष्ट कर आया हूँ।

बाप रे बाप, फिर बड़ी बड़ी बातें। चरित्र होता तो इतने दिनों में ज़रूर बिगड़ जाता। नहीं है इसीलिये तो ख़ुश हूँ। अगर होता तो तुम्हारे चरित्र की रखवाली करने में ही मेरी जान जाती। अब ज़रा सीधी तरह बताओ बात क्या है ?

ठीक से पहचानो तो ? माथे पर मोहन की लटें और शरीर पर पीताम्बर दिखाई पड़ता है ? हाथ में बाँस की बाँसुरी !—कंकर भंगिमा धारण कर खड़ा हो गया।

मीनाक्षी बोली, यहाँ कोई नहीं है इसलिये तुम्हे माफ़ कर दिया। मोहन की लटें ? नाई के लिये पैसे नहीं रहे कि बाल काट दे। बदन पर तो वही मेरी साड़ी की किनारी फाड़ा हुआ कपड़ा और सत्रह आने का पुराना कुरता—बाँसुरी की जगह कैवेएडर सिगरेट—है है, राधा की पसन्द देख कर तो क़ै हुई जा रही है।

कंकर बोला, आँखें होतीं तो पहचानतीं, तब देख पातीं कि सागर से लौटा हूँ पर तरगें हृदय में लेकर आया हूँ, ओफ् ओह, दोनों आँखें कैसी फटी पड़ रही हैं; यह कुत्सित औरतों सा कुतूहल आँखों से निकाल डालो तब बताऊँगा।

मीनाक्षी ने आँखें चढ़ा कर कहा, उम्र में छोटा न होने पर तुम्हें अच्छी डाँट लगाती।

कंकर बोला, अब तुम्हारी केयर नहीं। डाँटने वाला मिल गया है।

वह है कौन ? आदम या ईव ?

ईव है जी ईव, तुम्हारी दीदी।

उम्र कितनी है ?

औरतें उम्र में सब एक सी होती हैं, चौदह से बयालिस तक।

चेहरा ?

औरत है, बस।

रूप ?

सुजला, सुफला, शस्य श्यामला !

भंगिमा ?

द्विधाय जड़ित पदे कम्प्रवक्षे नम्र नेत्रपाते !

आवेदन ?

'लाख लाख जुग हिय मह राखहुँ तबहुँ हिया रंचहु न जुड़ावे।'[1]

मीनाक्षी बोली, जीवित या मृत ?

भयानक रूप से जीवित ! ज़रा सा झटका लगने से झन् झन् शब्द होता है।

तब समझ गयी तुम्हारा दिल नहीं लगा, रंग चढ़ गया है। पहली पारी खतम हो गयी ?

माने ?

माने—कटाक्ष, निःश्वास, मीठी हँसी, अदा, इशारों में बातचीत—यह सब।

कंकर बोला, बहुत आगे बढ़ गयी है।

तब क्या बात है, एक उपन्यास शुरू कर दो। जो कुछ कर सके हो उस पर रंग फैलाओ, और जो नहीं हो सका उसी के लिये शोर मचाओ। इतने ही से जनप्रिय उपन्यास हो जायगा। थर्ड इयर के लड़के लड़कियाँ तारीफ करेंगे।

न, सोचा है कविता लिखूँगा। वह मेरी कविता है! उसमें कहानी से स्वप्न अधिक है,—इतिहास से अधिक महाकाव्य है। वस्तु से अधिक व्यञ्जना है।

मीनाक्षी बोली, इस बखान में कितना सच है और कितनी कल्पना है ? यह तुम्हारा साहित्यिक अभिभाषण तो नहीं है ?

कंकर बोला, तुम्हारे सन्देह के लिये धन्यवाद। स्त्रियों का रूप पुरुषों का कल्पना क्षेत्र होता है—बस। प्रकृति का आकर्षण विकर्षण जितना अधिक होता है, पुरुष के मुँह से उतनी ही स्त्रियों की प्रशंसा होती है। जो चिड़ियाँ अंडे देती हैं वह बेकार बातें नहीं करतीं, पर दूसरी उसके पास बैठ कर ज़ोरों से गाती हैं। एक कोयल पुकार पुकार कर बसन्त की कविता की नींद तोड़ देती है, पर दूसरी कोयल उत्तर भर देती है—बस ?

मीनाक्षी बोली, तुम्हारी रोमांटिक बातचीत सुन कर डर लगता है, तुम्हारा मतलब क्या है, बताओ तो ?

मुस्करा कर कंकर बोला, बन की चिड़िया पिंजड़े की चिड़िया के कान में बन की कहानी सुनाने आयी है।

उद्देश्य ?

बहुत साफ ! लङ्गर उठाओ।

कहाँ जाओगे ?

कंकर बोला, सवाल में ही तुम्हारी अवनति की निशानी मिलती है। जाऊँगा चूल्हे में।

हँस कर मीनाक्षी बोली, चलो।

अच्छा, तो तुम तयार थीं ?

ज़रूर ! ले जाने को कुछ नहीं है, कुछ खोने का डर नहीं।

कंकर बोला, उन लोगों से बिदा नहीं लेना है ?

मीनाक्षी बोली, साम्यवाद में है—सौभाग्य आवे दुर्भाग्य दूर हो।

कहीं भी कोई लगाव नहीं।

ज़रा भी नहीं।

इतने कामरेडों में कोई भी तुम्हें अच्छा नहीं लगा ?

कामरेड यहाँ एक भी नहीं है।

माने ?

मीनाक्षी बोली, यह सब बच्चे हैं।

कंकर बोला, यह क्या, जाते वक्त निन्दा करके जा रही हो ?

नहीं जी, लड़के लड़कियों को आशीर्वाद दिये जा रही हूँ।—

तुम्हारा रुपया क्या हुआ ?

मुँह उठा कर मीनाक्षी बोली, देश सेवा में दे दिया।

ऐसी बात है ? कहीं छिपाकर खबर अखबार में तो नहीं भेज दी ?

तब तो समझ ही जाते कि सद्व्यय हुआ।

पड़ोस के कमरे में रूस की वर्तमान अवस्था के ऊपर जब ज़ोर का शोर मचा हुआ था उसी समय दोपहर की धूप में दोनों निकल पड़े। कुछ

दूर चल कर कंकर बोला, तुम इतनी आसानी से चली आयीं यह देख कर डर लगता है, किसी दिन मुझे भी ऐसी ही आसानी से छोड़ जाओगी।

ताज्जुब नहीं,—मीनाक्षी बोली, होशियार रहना। यह सोचने से नहीं चलेगा कि हमारा सम्बन्ध अविच्छेद्य है। हम दोनो के बीच मे कोई और है, तुम उसका बायाँ हाथ पकड़ो, मैं दाहिना पकड़ लूँगी।

वह भाग्यवान् कौन है ?

मीनाक्षी बोली, भगवान !

कंकर बोला, उसकी उम्र क्या है ?

चिर तरुण।

अरे बाप, शकल कैसी है ?

परम सुन्दर।

निवास ?

जीवमात्र में।

पेशा ?

सृष्टि, स्थिति, लय।

जाति ?

अज्ञात कुल शील।

चरित्र ?

मीनाक्षी हँस कर बोली, बहुत चतुर। अत्यन्त कौशली। ग़रीब के घर की छत वर्षा से गिरा देता है, भक्तों के रास्ते में रोड़ा बनता है, माँ के एकलौते की हत्या कर डालता है, मदोन्मत्त लोगों के हाथ में राजदण्ड दे देता है, लोभी को शरण देता है, पाप और अन्याय के हाथ विजय पताका दे देता है।

कंकर बोला, तब तो उसका चरित्र अच्छा नहीं है और उसी का हाथ पकड़ कर तुम चलना चाहती हो ?

हाथ पकड़ कर चलने से वह ख़ुश रहता है।

क्यों ?

हाथ पकड़ कर वह साथ-साथ चलता है, तब उसकी चालाकी दिखायी नहीं पड़ेगी । पुकारने पर पास नहीं आता पर पकड़ने से पकड़ में आ जाता है । चलने वाले के साथ चलता है पर रुकते ही खो जाता है । जो चलते नहीं वे मारे जाते हैं ।

कंकर बोला, तुम्हारी भगवद्भक्ति देख कर संतोष होता है ? बुड्ढे होने पर खाने का ठिकाना हुआ ।

इधर आओ ।—कह कर कंकर दाहिनी ओर मुड़ा ।

इधर कहाँ ?

कहा तो, यहाँ मेरी कविता है । इसी घर में । एक मंज़िले पर कुछ किरायेदार हैं और मकान मालिक भीतर रहता है । आंओ ।

मीनाक्षी चुपके से बोली, तुम्हारे बखान से मिलान तो होगा ?

कंकर बोला, पूरी तौर से कैसे मिलेगा ? 'तू आधी मानवी और आधी कल्पना है ।' औरत के मतलब ही यह होते हैं । वे छूने पकड़ने से बाहर ही रहती हैं । वे कितनी ही रासायनिक चीजों का जटिल मिश्रण हैं । ज़रा सा जीवित मांसपिंड हृदय रस से भीगा हुआ, जिसे छूने से थोड़ा नशा भर हो जाता है ।

दोनो पहली मंज़िल पर आकर रुक गये । मकान उस समय कुछ शान्त था, शायद लोग सो रहे थे । कंकर ने एक दरवाज़े पर कान लगा कर कुछ फुसफुसाहट सुनी । मीनाक्षी ने पूछा, भीतर कौन है ?

ओंठ सिकोड़ कर कंकर मुस्कुराया । बोला, समझता था कि भैरवी अकेले ही ज़िन्दगी बिताती हैं । भूल दूर हो गयी ।

मीनाक्षी ने पूछा, बात क्या है ?

मेरा प्रेमी मेरे ही आँगन से दूसरे के घर जाता है । मीनाक्षी, प्रेम की व्यर्थता का एकमात्र अधिकार सुसाइड है ।

मीनाक्षी बोली, स्त्रियों के मन की बात जाने बिना ही जो प्रेम प्रकट

करते हैं, वे हवा में महल बनाते हैं। उनकी पहली दवा है उनके शरीर के स्थान विशेष पर पुलिस के बेत ! तुम्हारी कविता तुमसे कितनी दूर—यानी, कितनी आगे बढ़ी हुई है, इसका पहले पता था ?

कंकर बोला, तुम्हारा सर ! प्रेम की खबर जानना नहीं पड़ता है, अनुभाव और अनुभव में से ही हृदय के विनिमय का लेन देन चलता है। प्रेम करने की तुम्हें शिक्षा नहीं मिली, नहीं तो पता चलता कि प्रेम कर सकना ही शायद शिक्षा का सबसे बड़ा अंग, कल्चर का सबसे बड़ा परिचय है। .

मीनाक्षी बोली, उम्र में तुम एक वर्ष छोटे हो इसलिये अगर कुछ उन्नति करो तो एक वर्ष पीछे रहो। अरे मूढ़, वक्तृता से प्रेम का प्रचार नहीं होता, किताबी बातें बक देने से आदमी का मन नहीं डोलता, उदाहरण देना पड़ता है। परमहंस कहो, टॉल्स्टाय कहो, गांधी कहो—सब एक ही उदाहरण हैं। वह उदाहरण चिरस्थायी है। इसीलिये 'रवि बाबू का शान्ति निकेतन' नामक ग्रन्थ की पाठक संख्या कम है। इसमें काव्य है, परमात्म कल्पना का विशिष्ट सौन्दर्य है, शुद्ध अध्यात्म ज्ञान के प्रकाश की महिमा है,—पर क्या नहीं है बताओ तो ?

उत्तर सुनने का धैर्य मीनाक्षी को ख़ुद ही नहीं रहा, उसने आगे बढ़ कर दरवाज़े की कुंडी खटखटायी। दरवाज़ा खुला ही था, भीतर से औरत के गले की आवाज़ आयी, आइये।

मीनाक्षी पहले भीतर घुसी, पीछे कंकर। देखा कि एक स्त्री चटाई बिछाये पढ़ाई कर रही है। विधवा वेश, आँखों में ऐनक। कंकर हँस कर बोला, मैं समझा था कि आपके साथ कोई और है। पढ़ रही थीं ?

औरत उठ कर खड़ी हो गयी। मीनाक्षी को देख कर बोली, और क्या करूँ ? दिन इतना बड़ा होता है, समय कटता नहीं। आप लोग बैठिये।

मीनाक्षी बोली, आपके पढ़ने में विघ्न हुआ।

कुछ नहीं, पढ़ना तो होता ही रहता है। आपके बारे में कंकर बाबू से सुना था। आप यहीं रहेंगी इससे ख़ुशी हुई। इस मकान में आपको तकलीफ तो नहीं होगी?

मीनाक्षी बोली, बिलकुल नहीं, कहीं आपको असुविधा न हो यह सोचती हूँ। मैं रात में कभी-कभी बिस्तर सर पर उठा कर घूमती हूँ। बीच-बीच में स्यार की तरह बोलने की आदत है।

वह कैसी?

पता नहीं, छुटपन की आदत है। इसी डर से माँ बाप मेरे पास सोना नही चाहते थे। आपका नाम क्या है?

इन्दुमती।

कंकर बोला, मैं अभी जाकर घर के लिये चीज़ बस्त ख़रीद लाता हूँ, आपको विशेष असुविधा न होगी। काम काज के लिये एक आदमी ले आऊँगा, वही खाना पका देगा।

मीनाक्षी चटाई पर लेटे लेटे बोली, किसी होटल में बन्दोबस्त कैसा रहेगा? खाना पकाना, बर्तन माँजना, यह सब बड़ा गन्दा रहता है।

इन्दुमती बोली, गन्दगी थोड़ी सहना ही पड़ती है। नहीं तो इतना ख़र्च कंकर बाबू कहाँ से पायँगे?

मीनाक्षी आँख मटका कर बोली, कोई फिकर नहीं है इन्दु देवी, वह कहीं न कहीं से इन्तज़ाम कर ही लेंगे। ब्याह न करने वाले लड़के का कुछ दिन शोषण करना ही चाहिये, उसमें बुराई क्या है?

कंकर बोला, देख रही हैं इन्दु देवी, मुझे भिखारी बनाये बिना इन्हें चैन नहीं। आप छुटकारे की कोई तरकीब बता सकती हैं?

इन्दुमती गंभीर मुँह करके बोली? मेरा क्या, मैं तो आप लोगों के सहारे हूँ। पर यह कहूँगी, सच बात सब के मुँह पर ही कह सकती हूँ,—जिससे भलाई मिले उसकी बुराई करने की कोशिश नहीं करना चाहिये।

कंकर बोला, ठीक कहती हैं। आपको पहले ही बताये देता हूँ।

आप इन महिला को देख रही हैं—इनकी शकल भली औरतों सी ज़रूर है,—यह कुछ दिनों से मेरे पल्ले पड़ी हैं। इनका मतलब कुछ भला हो यह नहीं कह सकता, कुछ बुरा है इसका सबूत भी थोड़ा ही मिला है। यह थोड़ा लिखना पढ़ना जानती हैं, थोड़े से अंगरेज़ी शब्द इनके मुँह में रहते हैं। इनका पहले का इतिहास मुझे पता नहीं, कितने घाटों का पानी पिये हैं यह भी नहीं कह सकता;—यह मेरी गर्दन पर सवार मेरे साथ गेंद की तरह खेलती हैं। इनको आज आपके पास ले आया हूँ, यानी इन्हें मैं गरदन से कहीं उतार फेंकना चाहता हूँ। आप मेरे हाल पर रहम खायें नहीं तो मैं मारा जाऊँगा।

उसके कण्ठस्वर में सचाई की झलक देख कर इन्दुमती मानो विचलित हो उठी। कटाक्ष से उसने मीनाक्षी की ओर देखा। देखा कि अजीब बेहयाई से एक आदमी के सामने उल्टे सीधे ढंग से लेटी हुई है। माँ बाप ने छुटपन में ज़रा शरम हया भी नहीं सिखायी। इन्दुमती के बारे में पास बैठ कर कोई इस तरह की बातें करता तो वह आत्म हत्या कर लेती।

मीनाक्षी मुँह फेर कर रुआसे गले से बोली, और तुमने जो मुझे कहीं का न रखा सो ?

कंकर बोला, सुना इन्दुदेवी ? अच्छा, औरत होकर यह अगर ठीक से न रह सकें तो मेरा क्या क़सूर है, बताइये ? हम दोनों आज आपके पास आये हैं, आप फैसला कर दें।

मीनाक्षी मुँह में कपड़ा ठूँसे हँसी रोके थी। बोली, तुमने मुझे चौपट किया, अब मैं कहाँ जाऊँ। मैं ज़हर खा लूँगी, मर जाऊँगी, सर फोड़ लूँगी।

फौरन इन्दुमती बोल उठीं, पढ़ी लिखी होकर आपके मुँह से यह बातें अच्छी नहीं लगतीं मीनाक्षी देवी। आदमी जात का क्या दोष ! आप लोगों के बीच में पड़ने का मेरा अधिकार नहीं है, फिर भी इस छोटे मुँह से सच्ची-सच्ची बात कहती हूँ, वह आपको बाँध कर तो ले नहीं आये ?

कंकर बोला, देख रही हैं, बात-बात में कह दिया कि मैंने इन्हें चौपट कर दिया। निकम्मी औरत के सिवा और कौन ऐसी बात कह सकता है? तुम अगर ऐसी ही शरमदार थीं तो मरने क्यों आयीं थीं? चौपट तुम हुईं और दूसरा नहीं। तुम्हारा कुछ चौपट हुआ भी है तो मामूली, तुम उसे फिर सुधार सकती हो, पर तुम्हारे साथ मेरा कितना बड़ा नुकसान हुआ है यह भी जानती हो? मेरी क्या उम्मीदें थीं, क्या स्वप्न थे, मैं क्या नहीं हो सकता था? मुझे देख कर पता नहीं कितने लोग ढंग के आदमी बन जाते। कितनी बड़ी समाज व्यवस्था मैं चलाता। और तुम? तुम किसी दफ्तर के बाबू की पत्नी बन जातीं, बहुत से बीमार चूहे के बच्चों की माँ, और तुम्हारा खर्च पूरा करने में बाबू का सिर झुका रहता। बैठे बैठे दूसरे का अन्न खाना, दूसरे के सहारे ज़बरदस्ती पड़े रहना, और हर बरस बच्चे पैदा कर घरवाले की मुसीबत करना, यही तो यहाँ की औरतों का एकमात्र परिचय है।

इन्दुमती ने पूछा, शादी हो गयी है?

कंकर बोला, इसकी और शादी, आप भी अजीब बातें करती हैं। पता नहीं हुई या नहीं। या कितनी बार शादी की होगी यही किसे पता है। इस तरह की औरतें बहुत हो गयी हैं, समझीं इन्दुदेवी? स्त्री स्वातंत्र्य के नाम पर कलकत्ते के हर रास्ते पर छात्रावासों का सिर खाती घूमती हैं। कुछ दिन देश सेवा की, उसके बाद मास्टरी, फिर नर्स, तब बीमारों की दलाली,—यह करते करते जब उमर बीत गयी तो कहीं किसी अड्डे में जा पड़ीं। चरित्र नाम की कोई चीज़ नहीं, नीति नाम से कुछ नहीं। एक साड़ी, एक टुकड़ा साबुन, एक जोड़ा चाँदी के झुमके, एक डिब्बा पाउडर—इन सब मामूली चीज़ों के लिये ऐसा कौन सा काम है जो यह लोग न कर सकें। जो ज़रा चालाक हैं वे संगीतालय में जाकर गाना सीखती हैं, या सिनेमा वालों से जान पहचान कर लेती हैं। गला या चेहरा ज़रा ठीक होने से क़दर करने वालों की कमी नहीं—इसके बाद

तो समझ ही सकती हैं ! एक जूलियट किस तरह बहुत से रोमियो के कान पकड़े घुमाती रहती है।

अच्छा !—कह कर मीनाक्षी उठ बैठी। बोली, अजी नीतिवागीश समाजपति, जूलियटों के पीछे कौन घूमता फिरता है? पढ़े लिखे बेकार दर-दर की ठोकरें खाते नहीं घूमते हैं? मेमों का नंगा-नाच देखने के लिये अम्पायर में फर्स्ट का टिकट कौन कटाता है? तुम्हारा तो कुछ पूर्व परिचय है ही नहीं? गड्ढे गड़हियों के कीचड़ में सने पैरों को धोकर घर में घुसे तो किसके बाप की मजाल है कि तुम्हारा कुसूर पकड़ सके? निकम्मी औरतें होती हैं और तुम निकम्मे नहीं हो? अंग्रेज़ी बोली और दो चाय के प्याले में जैसे तर जाते हो, पुलिस डाँट दे तो आँचल में छिपते हो, बाहर सबसे पिट कर घर में औरत पर शेर बनते हो। अपने लिये दो कौर जुटा नहीं पाते, दुनिया भर में बेकार-बेकार कहते छाती पीटते फिरते हो। बाबू होने के लिये पैदा होते हो, बाबू होकर मरते हो। भाग तुम्हारा ही फूटा है कि मा बहिन इज्ज़त खो कर नौकरी की तलाश में निकलती हैं। शरम नहीं आती? घर की औरत को जब गुंडे उठा ले जाते हैं तो कचहरी में जाकर मिनमिनाते हो। उस वक्त मर्दानगी कहाँ चली जाती है? ताज्जुब है कि इस तरह के लड़कों से लड़कियाँ शादी करती हैं। छोटी उमर होने से ही शादी भी हो जाती है, आदमी होने के नाते नहीं। बहुत न बोलो, नहीं तो अच्छी तरह सुनाऊंगी।—कह कर मीनाक्षी करवट बदल कर लेट गयी। गुस्से से इन्दुमती का सारा बदन जलने लगा।

कंकर बोला, सुना आपने? इसी का नाम है औरत। जिस डाल पर बैठती है उसी को काटती है। मैं इनका इतना उपद्रव क्यों सहूँ, बताइये?

इन्दुमती अपने सारे मनोभाव छिपाकर बोली, सहेंगे, इसी लिये तो उसे लाये हैं।

अत्याचार करने पर भी ?

उसका अत्याचार शायद आपको अत्याचार नहीं मालूम होगा।

ज़रा भी भले बुरे की आशा न करूँ ?

इन्दुमती ने करुण नेत्रों से उसकी ओर देखा। वह दृष्टि मानो कंकर की ममता में डूबी हुई थी। आपको परेशान होने से तो काम नहीं चलेगा, कुछ न कुछ बन्दोबस्त करना ही पड़ेगा। आप तो बाजार चल रहे थे ?

कंकर बदन झाड़ कर खड़ा हो गया। बोला, अरे, भूल ही गया था, जाऊँ आपकी सब चीज़ वस्त ला दूँ।

अकेले आपसे न हो सकेगा। चलिये मैं आपके साथ चलती हूँ।—यह कह कर इन्दुमती भी उठ खड़ी हुई।—मर्दों को इतनी तकलीफ़ नहीं दी जाती। मैं भी थोड़ी खरीद कर लूँगी। पर एक बात कहे देती हूँ। आज रात को आप खायँगे यहीं, मैं पकाऊँगी। न, इसके लिये कुछ न सुनूँगी, अपने हाथ से आज आपको खिलाऊँगी।

अच्छा, तब खाउंगा। आपसे सच कहता हूँ। बहुत दिनों से अच्छी तरह खाने को नहीं मिला, और कौन खिलाता ? दुनिया मतलबी है !

इन्दुमती ओठ मटका कर हँसी, यानी बहुत पहले ही से उसे इस बात का पता था। सिर्फ 'आइये' कह कर वह घर से बाहर चली गयी।

उसके बाद तुरत ही झुककर कंकर बोला, कैसा रहा ? जाऊँ उसके साथ ?

मीनाक्षी मुस्करा कर बोली, जाओ बड़ा अच्छा अभिनय हुआ। छन्द और व्यंजना में तुम्हारी कविता अनुपमेय है।

जो कुछ कहो, बड़ी चरित्रवती औरत है। सारे शरीर में ब्रह्मचर्य का तेज है। देख कर भक्ति भी होती है, रसोद्रेक भी होता है।

मीनाक्षी बोली, शकल अच्छी है।

मेरे लिये बड़ी परेशान है।

बुरा क्या है।

बाहर से आवाज़ सुन कर कंकर कमरे से निकल गया। दोनों के जाने

के बाद मीनाक्षी चुपचाप बैठी रही। मकान में असबाब वग़ैरह कुछ नहीं था पर इस अभाव में भी सारे घर पर इन्दुमती का हाथ प्रच्छन्न रूप से ख़ूब स्पष्ट दिखायी पड़ता था। मामूली सा एक बिछौना, एक छोटा ट्रंक, एक चटाई, एक भीगा कपड़ा और एक कुरती रस्सी पर लटक रही थी। एक कोने में रसोई के मामुली से बरतन। देख कर लगता था कि उपयुक्त गृहस्थ मिलने से यह और अच्छी गृहस्थी हो सकती थी।

घर के बाहर मामूली सा रास्ता था। इस बीच कई दफ़ा आदमियों के गले की आवाज़ सुनायी पड़ी। बहुत सी कुतूहल भरी नज़रें दरवाज़े में झाँक-झाँक कर आ जा रही थीं। एक बार मानो इस घर के ही बारे में अस्पष्ट बातचीत सुनायी पड़ी।

मुँह उठा कर मीनाक्षी ने एक बार देखा कि एक स्त्री दरवाज़े के पास खड़ी है। उसने पूछा, कुछ काम है?

न—कहकर वह चली गयी।

फिर एक अधेड़ महिला आकर खड़ी हो गयीं। उनकी आँखों में वही पुराने लोगों का स्पष्ट सन्देह और अहेतुक घृणा थी। वे बोलीं, शायद सर पर कोई नहीं है?

मीनाक्षी मुस्करा कर बोली, जो सबके सर पर हैं वही मेरे भी सर पर हैं। आप कौन हैं?

बेटा, हम गृहस्थ हैं। यहाँ तुम्हें देखने चली आयीं। इन फूटी आँखों से बहुत कुछ देख चुकी हूँ।—यह कह कर वह चली गयी।

कुछ ही मिनट बाद एक युवती आकर खड़ी हो गयी।

मीनाक्षी बोली, पर इस बार मुझे टिकट खरीदकर देखना होगा, समझीं?

औरत ने अचम्भे से उसकी ओर देखा।

मीनाक्षी ने उसकी मुग्ध दृष्टि की ओर ताककर कहा, शायद ऐसा जानवर पहले कभी नहीं देखा?

खिड़की में से एक मुड़े कागज़ का टुकड़ा चटाई के पास आ गिरा। रंगपुर की बात मीनाक्षी को याद आयी। वह कागज़ खोल कर पढ़ने लगी, प्रियतम, तुम्हे आज दोपहर से देख कर मैं पागल हो गया हूँ, तुम्हारे पैरों पर लोट कर अगर अपने प्राणों की व्यथा दूर कर सकता तो कृतार्थ होता। मुझे निराश न करना, यह प्रेम व्यर्थ होने पर मैं आत्महत्या कर लूँगा। मुझ पर दया कर अपने श्रीचरणों में स्थान देने पर मैं तुम्हारे कपड़े धो दूँगा, जूता साफ़ करूँगा, तुम्हारे हुकुम का ताबेदार हूँ। चिट्ठी लिख कर खिड़की के बाहर फेक देने से मुझे ठीक से मिल जायगी। तुम्हारे घर में एक विधवा है, वह मुझे जूतों से मारेगी कह कर उसने मुझे डाटा था। आशा है तुम इस तरह का व्यवहार नहीं करोगी। मेरा प्रगाढ़ आलिंगन ग्रहण करो। इति—रूपमुग्ध विरही।

इन्दुमती की स्याही और कलम लेकर मीनाक्षी चिठ्ठी लिखने लगी, प्राणेश्वर, तुम्हारे ही लिये इतने समय तक रही। कहते हो कि मेरे लिये सब करोगे, पर ब्याह करोगे या नहीं यह नहीं बताया। इस चिठ्ठी का जल्दी जवाब दो, दस मिनट का समय दे रही हूँ। विवाह करने से क्या खिलाओगे और कितना गहना दोगे यह फौरन लिख कर फिर खिड़की में से फेक दो, मैं तुम्हारी आशा लगाये बैठी हूँ। मेरा जैसा रूप है उससे मैं कम से कम दस हज़ार रुपये का गहना, तुम्हारा सा सुयोग्य पति, चौरंगी पर एक मकान, पचास हज़ार रुपये की इन्श्योरेन्स की पालिसी, एक मर्सिडिज बेनज मोटर आदि पाने की अधिकारिणी हूँ। आशा करती हूँ कि यह सामान दान देने में तुम्हें आपत्ति नहीं होगी। तुम्हारा जवाब फौरन पाकर फिर मैं बाद की चिठ्ठी में तुम्हारे 'गूढ़ आलिंगन' का प्रतिदान इत्यादि स्वर्गीय प्रेम सम्बन्धी उपकरणों का हिसाब लगा कर भेज दूँगी। इति।

—तुम्हारे श्रीचरणों की दासी

दो घंटे प्रतीक्षा करने पर भी मीनाक्षी को उसके पत्र का उत्तर नहीं मिला।

घर बार का सामान खरीदते खरीदते शाम हो गयी। इन्दुमती मीनाक्षी नहीं है, इसलिये उसे हिसाब आता है। कितने धानों में कितना चावल होता है वह ज़बानी बता सकती है। भंडार की हाँड़ी मटकी, गरम मसाला रखने की टीन की डिबियाँ, दाल साफ करने का सूप—एक एक हिसाब करके उसने कंकर को अचभे में डाल दिया। इसके बाद पलंग का सामान। मसहरी, तकिये, तोशक, दरी, शीतलपाटी। बालटी, बर्तन, चाय का सामान, कटोरी कटोरे, सिल लोढ़ा। पाँच मजदूरों के सर पर बहुत सा सामान लाद कर इन्दुमती बोली, आज के लिये तो इतना हो गया, कल फिर नयी सूची बना रखूँगी।

कंकर बोला, और भी रह गया?

हाय रे मैया, रहा नहीं? इन्दुमती हँस कर बोली, कभी घरबार तो किया नहीं, अच्छा अब कीजिये। मैं दो दिन में आपको सब सिखा पढ़ा दूँगी। भले लड़कों की तरह अच्छी तरह समझ लें,—जैसा कहूँ वैसा करें।

कंकर के मुँह तक बात आई, पर वह कुछ बोला नहीं, चुप ही रह गया।

इन्दुमती बोली, घर पर तो मीनाक्षी है ही, मज़दूर रास्ता पहचान कर ठिकाने पर चला जायगा, आप बाद में जायेंगे।

अब कुछ और ख़रीदेंगी?

कितना कुछ खरीदना है। उसे जाने दो, मैं पता लिखे देती हूँ, आपको लौटने में थोड़ी देर होगी।

इन्दुमती ने पता लिख कर मज़दूर को घर भेज दिया। उसके बाद बोली, आप ज़रा इधर आइये। सचमुच आपको बड़ी तकलीफ दी।

चलते चलते कंकर बोला, आपके पति कब मरे?

इन्दुमती बोली, याद नहीं पड़ता। दस बरस पहले मरे थे, कुल छः महीने ही तो ज़िन्दा रहे। मुझे उनके साथ रहना नहीं नसीब हुआ।

क्यों?

मुस्करा कर इन्दुमती बोली, आपको वह सब सुनने से कोई मतलब नहीं। आप बड़े खोटे हैं।

कंकर बोला, उनको याद कर अगर दुःख होता हो तो मैं ज़रूर न सुनना चाहूँगा।

दुःख कुछ नहीं। पर आप से सच बताऊँ, उनके पास जाने में मुझे अच्छा नहीं लगता था। छः महीने क्या कुछ होते हैं। इसी बीच बेचारे मर गये।

कंकर बोला, आप जो गंगासागर गयी थीं तो घर पर कुछ कह नहीं गयी थीं?

इन्दुमती बोली, जेठ के साथ झगड़ा कर के चली गयी थी, मुहल्ले की औरतें साथ थीं।

पर आप लौट जायँगी, सब तो इसी आसरे हैं।

वे समझते हैं कि मैं मैके चली गयी हूँ। अगर मालूम हो जायगा कि वहाँ भी नहीं गयी तो समझ लेंगे कि मैं तीर्थ करने निकल गयी। शिः, पैदल आपको तकलीफ़ हो रही है, ज़रा सुस्ता लें?

कंकर ने पूछा, आपके पति कुछ छोड़ नहीं गये?

न, होने से भी मैं कुछ न लेती।

क्यों?

किस अधिकार से लूँ? मैंने उनके साथ गृहस्थी तो की नहीं।

कंकर ने फिर एक निष्ठुर प्रश्न को मन ही मन रोक लिया।

दोनों एक बगीचे में गये। इन्दुमती बोली, मेरा कुछ भी नहीं है पर दूसरे के सिर का बोझ बन कर नहीं रहना चाहती, समझे कंकर बाबू? जो कुछ हो सकेगा ख़ुद करूँगी। लिखना पढ़ना सीख कर अपना ठिकाना कर लूँगी।

तब तो आपको बहुत मुसीबत का सामना करना पड़ेगा।

वह तो होगा ही। अब यही समझिये, जब आप मिल गये हैं तो आप मेरा इन्तज़ाम ज़रूर करेंगे। मेरा खरच मामूली है। यही घर का किराया, भंडार का खर्च, और थोड़ा किताब काग़ज़। बड़ी मुसीबत से आप मिले हैं। अगर आप न होते तो इतना सामान कैसे मोल लेती! यह न समझियेगा कि यह सब मेरे अकेले ही काम में आयगा।

मुश्किल में पड़ कर कंकर चुप रहा। एक खाली जगह में एक बेंच के पास आकर इन्दुमती बोली, आइये न ज़रा बैठ लें। बताइये, आज आप मेरे हाथ से क्या-क्या चीज़ें खायँगे?

इस सब का मुझे कोई खयाल नहीं—कंकर ने कहा, आप जो बना दें।

बात बढ़ाने के लिये इन्दुमती बोली, अच्छा मीनाक्षी के साथ आपकी बिलकुल नहीं बनती?

क्यों?

नहीं, यों ही पूछ रहा हूँ। आप लोगों में झगड़ा चल रहा है न। प्रेम शायद बिलकुल नहीं है?

कंकर ने संक्षेप में कहा, वह मामूली औरत की तरह नहीं है।

इन्दुमती बोली, औरत औरत को ज़्यादा पहचानती है, आपने उसमें असाधारण क्या देखा? यह सिर्फ आपकी आँखों का नशा है।

कंकर बोला, हम दोनों ही की आँखों में नशे का हिस्सा कम है। यह सब दृष्टि का अन्तर अवश्य है।

यद्यपि मैं आप दोनों की तरह पंडित नहीं हूँ, पर मुझे इसका अच्छा नतीजा नहीं दिखायी पड़ता। इसी लिये कहती हूँ कि बाद में पछताने से अभी उपाय करना क्या ठीक नहीं है?

बताइये क्या करूँ?

आप बड़े आदमी हैं। आप का मन उदार है। आपने बहुत लोगों का उपकार किया होगा, मीनाक्षी का भी कोई उपाय नहीं कर सकते हैं?

बताइये क्या करूँ?

आप इस तरह कितने दिन तक उसको ऐसे लिये लिये फिरते रहेंगे? आपकी चढ़ती उमर है, मा बाप हैं नहीं, अपने लिये भी तो सोचना है। आपके प्रबन्ध से मीनाक्षी भी सुखी होगी, उसकी ओर भी आपको ज़रा ध्यान देना चाहिये?

क्यों?

इन्दुमती हँसी। बोली, अरे वाह, शायद आप उसे धोखा देकर भागना चाहते हैं?

कंकर बोला, उसका तो मैंने कुछ लिया नहीं जो धोखा दूँगा।

उसने तो आपके लिये घर छोड़ दिया है।

बिलकुल नहीं।

आप उसे प्यार नहीं करते?

ज़रा भी नहीं।

पर वह शायद आप पर जान देती है।

पता नहीं। सिर्फ़ इतना जानता हूँ कि अभी तक उसने जान दी नहीं। मेरे लिये जान देना बेकार है।

इन्दुमती बोली, क्या आप समझते हैं कि आपके लिये कोई जान दे ही नहीं सकता?

कंकर हँसा। बोला, मेरे प्राण इतने क़ीमती हैं यह नहीं समझा था।

अपना मूल्य क्या ख़ुद कोई समझता है कंकर बाबू?

कंकर चुप रहा। थोड़ी देर बाद बोला, उठिये चलें।

इन्दुमती उठी नहीं, बैठी ही रही। थोड़ी देर बाद बोली, मैं आपसे कुछ कहूँ?

क्या?

आप कहीं अच्छी जगह मीनाक्षी का ब्याह कर दें। इतना रूप, इतने गुण, यह सब यों ही बेकार जायँगे? आप उनके बहुत बड़े मित्र हैं, यह उपकार आपको करना ही होगा।

अगर वह ब्याह न करना चाहे ?

अलबत्ता करेगी। मैं उसे समझाऊँगी। अगर न करेगी तो मैं समझूँगी कि वह आपका भला नहीं चाहती।

मुस्करा कर कंकर ने पूछा, उसका ब्याह होने से आपको ख़ुशी होगी ?

होगी, दो कारणों से।—इन्दुमती बोली, पहले तो इस लिये कि उसके लिये आपको जो परेशानी रहती है वह आपके सर से दूर होगी और दूसरे कि मीनाक्षी ठिकाने लग जायगी। कोई लड़की रोज़-रोज़ सूखती चली जाय आप ही को यह कैसे बर्दाश्त होगा ?

कंकर बोला, आप खुद भी तो सूखती जाती हैं। इसके बाद शायद आप भी ब्याह करना चाहेंगी और उसकी व्यवस्था भी मुझे करनी होगी।

अच्छा होगा, आप इस देश की लड़कियों की एक ओर से सद्-गति कर जायंगे।—कहकर इन्दुमती हँसने लगी।—पर मैं आपका गला ऐसी आसानी से नहीं छोडूँगी। मैं मीनाक्षी नहीं हूँ कि एक बात की लाख बात आपको सुना दूँ। मारने पर भी मैं कुछ न कहूँगी।

कंकर बोला, तब तो आप ख़तरनाक हैं, गांधी के भक्तों से भी ख़तरनाक।

डरने की कोई बात नहीं है, आपको किसी दिन ख़तरे में नहीं डालूँगी। मैं जानती हूँ आप मुझे छोड़कर चले नहीं जायँगे, मैं भी वचन देती हूँ कि आज से आपके योग्य बनने का प्रयत्न करूँगी। इसके बाद बताइये आप मेरे कहे अनुसार चलेंगे ?

मैने तो आपका कहना माना नहीं।

न मानने से आपको सज़ा दूँगी।

क्या सज़ा देंगी ?

आपको बाँध कर रखूँगी—इस तरह—यह कह कर युवती विधवा ने अपने हृदय की समस्त आकुल कामना से एक हाथ से कंकर का हाथ दबा दिया। बोली, यही आपकी सज़ा है, जायें तो देखूँ कहाँ भाग कर जाते हैं ?

कंकर ज़रा घबरा कर बोला, चलिये, अब चलें।

इन्दुमती बोली, शायद मीनाक्षी के लिये तबियत घबरा रही है? पागलों की तरह जो कुछ बक गयी हूँ शायद आप सब उससे कह देंगे?

कंकर बोला, आप बेफ़िक्र रहें, अगर मैं कहूँ भी तो इससे उसके मन में कोई अन्तर नहीं आयेगा।

उसे ईर्ष्या नहीं होगी?

ईर्ष्या उसमें नहीं है।

पर वह आपको छोड़ेंगी कैसे?

उन्होंने तो मुझे पकड़ कर नहीं रखा है।

आप एक साथ रहते हैं न?

हम एक साथ नहीं रहते हैं। और अगर कभी रहतें भी हैं तो बीच में बहुत जगह रहती है।

इन्दुमती बोली, पर लोग अगर सन्देह करें कि आप एक दूसरे को ख़ूब प्यार करते हैं तो!

कंकर बोला, आपसे सच ही कह रहा हूँ। प्यार किसे कहते हैं यह हमें नहीं मालूम है। हम दोनों ने कई बार समझने की कोशिश की पर समझ नहीं पाये। जब कभी आगे बढ़े तभी देखा कि प्रकृति हमारे साथ एक भयानक खेल खेलना चाहती है, हम उसे प्रश्रय नहीं देते, न कभी देंगे। इसके सिवा हम में कौतुक है, कुतूहल है, आकर्षण है, पर इसे प्यार कहने में हमें आपत्ति है।

इन्दुमती बोली, कमअक्ली से मैंने इस सब को ही प्यार समझा। एक साथ रहते रहते ही जो हो जाता है उसी का नाम प्यार होता है। इसी पर ज़मीन टिकी है, कंकर बाबू।

यह सच है या नहीं पता नहीं, पर आपका यह खयाल है यह पता चल गया। आइये चलें।—कह कर कंकर उठ खड़ा हुआ।

इन्दुमती व्याकुल होकर बोली, आपने ऐसा कुछ नहीं कहा जिससे

मुझे भरोसा हो। मैं किस अधिकार से आपका अन्न ग्रहण करूँगी, वह मुझे पता नहीं चला। मुझे क्या आपकी मीनाक्षी की कृपा पर रहना पड़ेगा?

आप क्या सुनना चाहती हैं?

सुनना चाहती हूँ कि आप ही मेरे अभिभावक हैं।

पर मेरा अभिभावक कौन होगा? आप?

अगर हो सकूँ तो मेरा जन्म सार्थक हो?

अच्छी बात है, तो आपका जन्म सार्थक ही होगा, चलिये।

इस बार दोनों चल दिये। कुछ दूर जाकर इन्दुमती बोली, आज की शाम अच्छी गुज़री। ऐसा लगता है कि मेरा कलेजा भरा आता है। रोज़ घूमने आयेंगे न?

कंकर हँस कर बोला, रोज़ रोज़ एक युवती विधवा को लेकर घूमने निकलूँगा,—इसके बाद क्या होगा? लोग क्या कहेंगे?

रोज़ रोज़ दूसरी दूसरी ओर चलेंगे। उसमें भी अगर आपको शर्म लगे तो आपके लिये एक ही साड़ी पहनूँगी, तब तो ठीक रहेगा?—कहकर वह नारी स्वभाव के अनुरूप राजहंस के समान डग भरने लगी।

सात

पंद्रह दिन बीत गये। किसका घर चल रहा था कहा नहीं जा सकता। तीनों कौन कहाँ के हैं? कहानी का कौन नायक है, और कौन नायिका? तीनों बालू के तीन दाने; एकत्र थे, पर एक दूसरे से अलग रहते। अद्भुत संसार था। ऐक्य नहीं, बन्धन नहीं, परिवार का आनन्द नहीं। जैसे एक घर में एक दूसरे में सैकड़ों योजन का अन्तर था।

बीच बीच में आकर कंकर बाज़ार हाट कर जाया करता था। कंकर बाज़ार करे, यह भी संभव हुआ। किसके लिये? दो स्त्रियाँ जो थीं। वे कौन हैं? पता नहीं! कंकर का इसमें क्या स्वार्थ था? क्या संसार में मूर्ख कहला कर अपना परिचय देना।

और मीनाक्षी? मीनाक्षी ठीक है। रोज़ रोज़ एक नयी साड़ी से तो उसके दिन नहीं बीत सकते। अँगरेज़ी दूकान से कपड़े आये थे। दाम कंकर ने दिये। उसने कुछ धार्मिक पुस्तकें ला दी थीं, उसके साथ एक रुद्राक्ष की माला और एक रविवर्मा की बनायी काली की तसवीर। उम्र हो आयी थी न!

इन्दुमती बढ़िया खाना पकाती थी। मौक़ा मिलने पर ऊपर की मंज़िल पर जाकर तरह तरह की बातें कर आती थी। घर में सबके साथ उसकी दोस्ती थी। सब उसे इन्दु दीदी कहते थे। छिपे छिपे उसका आना जाना होता। आज कल उसकी ख़ुशी का पार नहीं था, क्योंकि मीनाक्षी ने कहा था कि वह थोड़े ही दिनों में चली जायगी। कंकर का कुछ ठिकाना हो गया यह देख कर वह निश्चिन्त हो गयी थी। वह जल्दी ही औरंगाबाद में काम पर जायगी। इन्दुमती दिन गिनती रहती थी।

तीसरा पहर था। मीनाक्षी कहीं से घूम कर आयी थी। कलकत्ते में उसके दोस्तों की कमी नहीं थी। किसी समय होस्टलों में उसका आना

जाना बहुत था। कालेज के बहुत सी मित्रों के विवाह हो चुके थे, बहुत सी कई बच्चों की माँ थीं। कभी वह 'सखी सभा' की प्रेसिडेंट थी, उसमें बच्चों का आना मना था। क्रमशः देखा गया कि बहुत से 'सखा' नेपथ्य में जमा हो गये, लड़कियों की संख्या घटने लगी, वह अकेली पड़ गयी। कुछ दिनों से कुछ मित्रों ने सोचा कि वे एक्सकर्शन के लिये जायँगी, वह लीडर रहेगी। इस पर बहुत बातचीत हुई, अगले सप्ताह ठीक व्यवस्था का पता लगेगा।

मीनाक्षी कपड़े बदल रही थी कि कंकर आ पहुँचा। मीनाक्षी बोली, अजी तरुण साहित्यिक, तुम्हारी कविता की ख़ूराक नहीं बनना चाहती, ज़रा मुँह फेर कर खड़े हो।

कंकर हँस कर बोला, कोई चारा नहीं है, मुँह फेर कर खड़ा होना ही होगा, क्योंकि तुम साक्षात् अश्लीलता हो, तुम्हारी ओर घूम कर देखते ही सारा देश कहेगा, छिः छिः। तुम्हारे शरीर का वर्णन करने से लोग घृणित कहेंगे, तुम्हें छूने से लोग कहेंगे, गया, सब कुछ गया! अतएव हे नरक-द्वार, मैं दरवाज़े के बाहर ही रहता हूँ, तुम अपने को अच्छी तरह सजा लो।

मीनाक्षी बोली, पर वक्तृता के बहाने तुमने काम बना लिया, चलो निकलो।

कंकर बोला, डरने की बात नहीं है, तुम इतनी अश्लील नहीं हो। तुम्हारी तस्वीर साप्ताहिक, मासिक, दैनिक में; विज्ञापन में दीवारों पर, रेल्वे के पोस्टरों में, विद्यार्थियों की पुस्तकों में, बेकारों की पोटलियों में, कैलेंडरों में, एक्ज़हिबिशन में, कलाकारों की सभा में—हर जगह रहती है। तुम कहीं दिगम्बर, कहीं अर्धनग्न और कहीं चतुर्थांश रहती हो। मीनाक्षी, आधुनिक समय में नारी देह सौदा ही करके गौरवान्वित है। अत्यन्त नीतिपरायण सम्पादक के अखबार में भी तुम्हारी मनोहारिणी अर्धनग्न तस्वीर छपती है।

मीनाक्षी बोली, तो कोई प्रार्थना करता है? तुम्हारे कण्ठस्वर में जैसे कोई नीति-विशारद बोल रहा हो। तुम्हारा यह अधःपतन क्यों है? कंकर, सावधान, तुम नीतिवादी के छद्मवेश में आधुनिक काल का मनोहरण करना चाहते हो, सावधान। तुम तरुण साहित्यिक हो, तुम्हारे मुँह में नीति शब्द खतरनाक है, तुम्हारी नीतिबुद्धि का छद्मवेश बड़ा भयानक है। चलो, मुँह फेरो।

कंकर बोला, फेरूँगा नहीं, क्योंकि तुम्हारी देह कलात्मक है। तुम्हारी निर्लज्ज पोशाक कला कही जाती है। तुम्हारी देह का चित्र देख कर लोग प्रशंसा करते हैं तुम्हारा उर्वशी रूप ही ललित कला का प्रसार है। तुम्हारे लालसालोल वक्ष और बाहु के लालच से ही लोग सिनेमा का टिकट खरीदते हैं, प्रदर्शनी में जाते हैं, सामयिक पत्रों के स्टाल पर भीड़ लगाये रहते हैं। जहाँ कहीं तुम्हारी देह की अश्लीलता जितना उन्माद दे वहीं शुद्ध आर्ट की सृष्टि कह कर समालोचक प्रशंसा करते हैं। लो, वेश परिवर्तन करो। बाहर भी नहीं जाऊँगा, मुँह भी नहीं फेरूँगा। केवल आर्ट के सम्मान के लिये—यह लो, कपड़े का पर्दा किये ले रहा हूँ। पर्दे की ओट वह रूप प्रकट करो जिसे देख कर सब कालों के कवि घोषणा कर सकें, नहिं माता न कन्या न बंधू सुन्दरी रूपसि।

यह कह कर कंकर ने इन्दुमती का कपड़ा फैला कर दोनों हाथों से पर्दे की तरह कर लिया।

तभी सहसा इन्दुमती अन्दर आयी। हँस कर बोली, यह क्या हो रहा है?

कंकर ने कहा, खास कुछ नहीं है, केवल आर्ट की चर्चा। आप अभी जायँ, थोड़ी देर में आ जाइयेगा।

इन्दुमती बोली, लोग आपकी बुराई करेंगे कंकर बाबू? वे लोग यह सब नहीं मानते—

खूब मानते हैं। आप नहीं देखतीं, परदे की ओट में काम निकालते

हैं। स्त्री हज़ार हो, पर उसके रक्त में रक्षणशीलता रहती है, शुद्ध आर्ट पर भी परदा डालना चाहती हैं।

इन्दुमती भौंचक होकर चली गयी। मीनाक्षी बोली, लो, परदा हटाओ।

आँख बन्द कर या खोल कर ?

खोल कर।

अश्लीलता तो आँखों में नहीं पड़ेगी ?

कोई डर नहीं। कुछ आवरण दे दिया है।

सौ में कितना ?

पचास-पचास।

कंकर बोला—समालोचकों का डर नहीं है ?

वे भी मोहित हो जायँगे।

रवि बाबू का सर्टिफिकेट मिल जायगा ?

तो थोड़ा और सब्र करो।—हाँ अब मिल जायगा।

इन्दुमती से तारीफ ?

हाय दैया, तब तो निन्यानवे हिस्सा ढाँकना पड़ेगा।

कंकर ने परदा हटा दिया। बोला, वाह, इस पोशाक में तो तुम जटिला कुटिला का प्रशंसापत्र भी पा सकती हो। बिलकुल जल मरने जाती हुई श्री राधिका सी लगती हो। बेवक़ूफ़ समझते नहीं कि ढाँकने में ही अधिक प्रकाश होता है। चलो, तुम्हें 'सुनीति संघ' की बस्ती में घुमा लाऊँ—वह भी तुम्हारा चिबुक उठा कर सरस कंठ से कहेंगी, सुन्दर !

मीनाक्षी बोली, बहुत दिनों बाद तुम्हारे साथ घूमने जा रही हूँ। किधर चलना चाहते हो ?

चलो गंगा किनारे चलें। आज दक्खिन की ओर हवा चल रही है, पतझड़ है। शुक्ला द्वादशी है। आज स्टीमर पर घूमने चलेंगे।

तब तो हम दोनों आज बेमानी रहेंगे !—मीनाक्षी बोली, ऐसी सुन्दर

संध्या में हम दोनों एक साथ कैसे ? अच्छा हो तुम इन्दुमती को लेकर जाओ, मैं अपनी किसी सहेली के पति के साथ जाऊँगी। अति परिचित के साथ आज की शाम अच्छी न लगेगी। आज कविता का दिन है, मन का रहस्य ढका रहे, अपरिचित के हृदय-पथ में आने जाने का आज दिन है। दोनों दो दिशाओं में जायँ। साथी न मिलने से अकेले अकेले गंगा किनारे घूमेंगे। ज्योत्स्ना की तरंगों में मन का भाव डुबा देंगे।

कंकर बोला, यही अच्छा है। चलो निकल चलें।

दोनों घर से निकल पड़े। तभी पीछे से किसी ने कठोर कंठ से पुकारा, अजी हज़रत, सुनिये तो ज़रा।

कंकर घूम कर खड़ा हो गया।

यह भलेमानुसों का घर है शायद यह आप जानते हैं। अड़ोस पड़ोस हम सब गृहस्थ किरायेदार रहते हैं, आपने क्या सोच रखा है, ज़रा बतायेंगे ?

मीनाक्षी ने आगे आना चाहा, पर कंकर उसे रोक कर घर के अन्दर कर आया। बोला, मैं तो सोचता हूँ कि आप गृहस्थ हैं, और सब लोगों की तरह ही भले आदमी हैं। कुटुम्ब की स्वतंत्रता, न्यायसंगत साधन से कमाई, संसार के काम में सहायता, वंश-विस्तार—आदि कामों में आपका समय बीतता है।

कुछ और लोगों की भीड़ जमा हो गयी। यह समझने को न रह गया कि यह दृश्य पिछले कुछ दिनों का षडयंत्र है। इसमें इन्दुमती का हाथ था।

एक साहब बोले, आप कौन हैं ? किस लिये आये हैं यह बता सकते हैं ?

कंकर बोला, बिलकुल मामूली बात है, पानी की तरह साफ़। मकान किराये पर लिया है, घरबार मेरा है, खरच मेरा है, अधिकार मेरा है, मेरी ज़िम्मेदारी है। इतना भर जिसे समझना हो उसकी अक़ल के बारे में—

तीसरा व्यक्ति सामने आया। बोला, आपको पता है कि आपका कीर्तिकलाप हमारी आँखों की ओट नहीं है ? किस हिम्मत से आप गृहस्थ घर में घुस कर शोहदपन करते हैं ? यह आपकी कौन हैं ?

किसकी बात कह रहे हैं ?

बनते हैं ! वे दोनों औरतें ? वे कौन हैं ?

कंकर बोला, आपने ज़रूर ही सोच लिया होगा कि वे कौन हैं। वह बेवक़ूफ़ नहीं हैं, समझदार हैं। उनसे बात कर आप ख़ुश होंगे। एक का नाम इन्दुमती है—वही जिन्होंने छिप कर आपको इशारे इशारे तरह तरह की बातें सिखा दी हैं, वह मेरी आश्रिता हैं। और यह जिन्हें आप देख रहे हैं, यह जो दरवाज़े के पास खड़ी हँस रही हैं—मैं इनके आश्रय मे रहता हूँ।

कई लोग चिल्ला उठे, उनका आपके साथ क्या सम्बन्ध है ? हम जानना चाहते हैं कि आप किस हक़ से इस घर में—

अकेले अकेले बोलिये।—कंकर बोला, अभी भी अँगरेज़ का राज है, अभी चन्द्र सूर्य उदय होते हैं, अभी दिन रात होते हैं। कुछ अधिकार है, पर वह सम्पूर्ण आध्यात्मिक है। घर का किराया मैं देता हूँ, रुपया पैसा मेरा है, और अधिकार मेरा नहीं, आप लोगों का इतना बड़ा राम-राज्य अब नहीं रहा।

वह आपकी कौन हैं यह बात बतलानी होगी।

अगर न बताऊँ ?

न बताने से आपको गरदनिया देना पड़ेगा।—कहते हुए दो आदमी आगे बढ़ आये।

ज़रा ठहरिये, इधर देखिये, मेरी उम्र छब्बीस है, मेरी छाती की चौड़ाई उनतालीस है, मैं बराबर एक्सरसाइज़ करता हूँ और ब्रह्मचर्य पालन करता हूँ। अगर आप सब मिलकर हमला करेंगे तो कम से कम कुछ तो लौटा ही सकूँगा। अच्छा अगर मैं झूठ कह दूँ ?

अरे खगेन, ज़रा थाने पर तो ख़बर कर दे।

ठहरिये—कंकर बोला, थाने के आदमी को छिपा कर मैं इतना ज्यादा घूस खिला सकता हूँ कि वे आपको ही मुसीबत में डाल देंगे। यानी आपके ख़िलाफ़ यह जुर्म होगा कि एक किरायेदार पर आप लोगों ने हमला कर मारा पीटा। और दूसरी बात, इन दोनों औरतों की उम्र अठारह से बहुत ज्यादा है। एक ख़ुदमुख्तार विधवा है, दूसरी कुमारी, सधवा और विधवा का एक मनोहर-संमिश्रण। पुलिस अगर हमें गिरफ़्तार करने आती है तो यही दोनों औरतें उन्हें धक्का मार कर निकाल देंगी। इसलिये हमारे ख़िलाफ़ भगाने का, फुसलाने का, व्यभिचार, बलात्कार वग़ैरह किसी क़िस्म का जुर्म न आयेगा। आप लोग अक़लमन्द हैं इसलिये थाने में ख़बर करने के पहले ज़रा सोच लें।

एक आदमी कुत्सित भाषा में बोलने लगा, तुम्हारी हरकतें हम जानते हैं। भले आदमियों के घरों में जो बालबच्चों को लेकर रहते हैं उन्हें दिन-रात तुम्हारी बेहयाई देखने को मिलती है। बदमाशी करने को और कहीं जगह नहीं मिली? सच्ची बात मानने का साहस क्यों नहीं है, बताओ तो?

इस बार मीनाक्षी निकल आयी। ज़रा एक बार फिर तो कहें, क्या कह रहे हैं?

वे बोले, यह जानना चाहते हैं कि आपका इनसे क्या सम्बन्ध है!

आप लोग क्या सोचते हैं?

जो सोचते हैं वह औरत होकर आप न समझ सकेंगी? कंकर बाबू आपके क्या लगते हैं?

मीनाक्षी बोली, पैरों में रखने से दासी, न हों तो कोई नहीं। मैं उनकी सहधर्मिणी हूँ।

सब एक दूसरे का मुँह देखते रह गये। इसी समय इन्दुमती झपट कर आयी। बोली, मुँह पर तुमने झूठ बात कैसे कह दी? मुझे क्या पता नहीं है?

मीनाक्षी बोली, तो सच बात तुम्हीं बता दो ।

तुम उनकी कोई नहीं हो ।

और तुम ?

इन्दुमती स्तब्ध रह गयी । कह दीजिये जो मुँह में आये । कोई फ़िक्र नहीं । पैतृक सम्पत्ति है, इसलिये सब ओर से रक्षा कर सकूँगा । भाइयो, सुनिये, इन्दुमती की चाल में ज़रा कमी रह गयी, नहीं तो नाटक ज़रा और अच्छा जम जाता । अब आफ़त इन्दुमती के सिर पर आ गयी है, उसकी अवस्था शोचनीय है ।

इस बीच सहधर्मिणी सुनकर बहुतेरे मैदान छोड़ गये थे । केवल एक स्वीकारोक्ति, उसके बाद कोई समस्या रह ही नहीं जाती । कब ब्याह हुआ, क्या वंश-परिचय है, कौन जात हैं, ठीक ढंग से क्यों नहीं रहते—यह सब बातें तो बाद में भी जानी जा सकती हैं । केवल पता लगा सहधर्मिणी ! शब्द में जो धोखा है, विद्रूप है, छद्मवेश है—इस सबके भीतर देखने का समय उनके पास नहीं । सहधर्मिणी—यही यथेष्ट है । इसके बाद उनका सारे समाज में चलन सही है, इसके बाद गृहस्थ घर में उनकी गतिविधि बेरोकटोक है, इसके बाद वे अत्यन्त नीति-परायण हो जाते हैं, इसके बाद उनका सारा बेश्यापन, अश्लीलता, दुर्नीति, दौरात्म्य, असंयम, उच्छृङ्खलता, अनियम, कपटाचरण, अनाचार—सब कुछ हँस कर धुल जाता ।

गोलमाल तो बन्द हो गया पर सहसा इन्दुमती घर में जाकर ज़मीन पर बैठ फफक-फफक कर रोने लगी । मीनाक्षी और कंकर हँसते हुए उसके पास आ खड़े हुए । षड्यंत्र बड़े भद्दे तौर पर खुल गया । कोई नेपथ्य में यह भी कह गया, सच ही तो है, और जो कुछ भी हो, वे पति-पत्नी हैं । सब क़ुसूर उस विधवा औरत का ही है, उनका घर उजाड़ने आई ।

इन्दुमती का व्याकुल रोना देख कर मीनाक्षी ने उसे हाथ पकड़ कर उठाया । बोली, तुम्हारा कोई दोष नहीं है । तुम्हारे काम का जो बड़ा

उद्देश्य था उस पर किसी ने नहीं ध्यान दिया। तुम्हारा उद्देश्य महान् था, उसका मार्ग जैसा भी रहा हो। कंकर तुम बाहर जाओ।

कंकर के बाहर जाने पर अपने हाथ की सोने की चूड़ियाँ उतार इन्दुमती के हाथ में पहनाते हुए मीनाक्षी बोली, तुम्हे दान नहीं दे रही हूँ, यह केवल मित्रता की निशानी है। मेरे पास यही है, इसे तुम्हारे हाथ पर रख रही हूँ।

मीनाक्षी दीदी, मुझे माफ़ कर दो!

भाई, तुम्हारा अपराध नहीं है, इसलिये तुम्हे माफ़ भी नहीं करूँगी। लो, रसोई चढ़ाओ, अभी लौट कर तुम्हारे हाथ से खायेंगे।

कंकर आ गया। रूमाल में बँधी एक पोटली इन्दुमती के आगे रख कर बोला, यह रख लीजिये, इसमें ढाई सौ रुपये हैं। शाम के वक्त अब इतना रुपया लेकर नहीं जाऊँगा। आओ मीनाक्षी।

दोनों घर से निकले।

इन्दुमती आँसू पोंछ कर रसोई का इन्तज़ाम करने लगी! उसे जो सन्देह हुआ था वह दोनों के मधुर व्यवहार से मानो धुल गया। तो उसने उनका विश्वास और स्नेह नहीं गँवाया! चूड़ियाँ और रुपयों की पोटली उसने यत्नपूर्वक सन्दूक में रख दिये, पर अभागिनी विधवा को एक बार भी सन्देह नहीं हुआ कि वे दोनों फिर कभी वहाँ नहीं आयेंगे, अन्तिम दान कर दोनों उससे सम्बन्ध तोड़ गये थे।

रात के दस बज गये। स्टीमर का भ्रमण समाप्त कर गंगा के घाट से लौट शहर के एक एकान्त रास्ते में घुस कर मीनाक्षी ने कहा, तेरह नंबर तलाश करो।

कंकर बोला, क्या वजह? यह तुम कहाँ ले आयीं? तुम्हारा कोई खराब इरादा तो नहीं?

तेरह नंबर खोजो।

तेरह! अनहोली थर्टीन। उसमें कौन हैं?

एक कपोत-कपोती का जोड़ा। इस मकान का नंबर देखो तो !

गैस के उजाले में नंबर देख कर कंकर बोला, सत्रह। और थोड़ा आगे बढ़ो।

मकान मिल गया। दरवाज़े पर रुक कर मीनाक्षी बोली, थोड़ा वाक्-संयम करो। यह मेरी छात्रा का मकान है।—कह कर उसने कुंडी खटखटायी।

दरवाज़ा खुल गया। एक युवक ने आगे बढ़ कर पूछा, आप लोग कौन हैं ?

पहचान नहीं पाया, सुधीर ! मैं हूँ !

ओः—दीदी ! आइये—आइये। इतनी रात में ?

मीनाक्षी बोली, यह मेरे मित्र कंकर हैं, दोनो आज तुम्हारे घर अतिथि हैं। कमल कहाँ है ? अब तुम्हारे साथ रहती है न ?

सुधीर बोला, पहले अन्दर आइये, फिर सब कुछ सुनियेगा।

दोनों भीतर आकर खड़े हो गये। चारों ओर अँधेरा था ! इस प्रेतपुरी में सुधीर के सिवा और भी कोई है इसके जानने का कोई उपाय नहीं था ! आस-पास चारों ओर लगातार झींगुर का शोर था। कहीं दूर मानो पानी गिरने का सा शब्द सुनायी पड़ता था। कंकर बोला, कहाँ आ गये ?

मीनाक्षी बोली, यही सोच रही हूँ। कमल यहाँ रहती है।

तभी दरवाज़ा बन्द कर सुधीर पास आकर खड़ा हो गया। मीनाक्षी बोली, पहले रोशनी करो भाई, कुछ दिखायी नहीं पड़ता।

सुधीर बोला, आप लोगों को पाकर आज बड़ी ख़ुशी हो रही है। पर, कहने में बड़ी शरम लग रही है,—आज किसी तरह रोशनी करने का प्रबन्ध नहीं है, एक मोमबत्ती रह गयी थी, कल वह बिलकुल जल गयी। एक बत्ती दो दिन चलती है। दीदी मैं बहुत ग़रीब हूँ।

सुधीर ने जेब में से दियासलाई निकाल कर एक तीली जलायी।

उसी उजाले में उसकी ओर देख कर मीनाक्षी सिहर उठी और आर्त कण्ठ से बोल उठी, सुधीर, यह तुम्हारी शकल क्या हो गयी है ?

दियासलाई की तीली बुझ गयी। फिर चारों ओर दम घोटनेवाला अन्धकार हो गया। सुधीर काँपते गले से बोला, क्यों दीदी, मुझे तो कुछ नहीं हुआ।

नहीं हुआ ? सुधीर फिर तुम्हारी शकल ऐसी कैसे हुई ? भाई तुम तो पत्थर की मूर्ति की तरह थे ? जल्दी रोशनी करो।

अच्छा एक बार कोशिश कर देखूँ।—यह कह कर सुधीर कमरे में से कहीं चला गया। उसके बाद सब नीरव हो गया। इस जनहीन पुरी में झींगुर के शब्द के सिवा और कहीं जीवन का चिह्न नहीं था।

कंकर ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोला, यह क्या, तुम काँप क्यों रही हो ?

मीनाक्षी बोली, चुप रहो।

कुछ देर बाद सुधीर एक चिराग़ जला लाया। देखा कि एक सरसों के तेल की कटोरी में एक कपड़े की चीर डाल कर उसने दिया बनाया था। मीनाक्षी आगे बढ़ कर बोली, कमल कहाँ है ?

इस कमरे में आइये। वह बहुत बीमार है।

क्या बीमारी, सुधीर ?

एकाएक बीमार हो गयी है, दो दिन हुए। देखिये यह रही रसोई, कहीं ठोकर न लग जाय।

मीनाक्षी बोली, कमल बीमार है, फिर खाना किसने बनाया ?

सुधीर बोला, मैं ही रोज़ बनाया करता हूँ।—यह कह उसने रोशनी बुझा दी और सहसा दोनों हाथ जोड़ कर काँपते गले से रहस्यमय ढँग से बोला, दीदी आप अकेली जायें। हम दोनों यहाँ ठहरते हैं। इधर, इस कमरे में, रोशनी लेती जायँ।

दिया लेकर मीनाक्षी भीतर घुसी। कमरे में सामान कुछ नहीं था,

एक अस्थायी घर की मामूली सी चीज़ें इधर-उधर अस्तव्यस्त फैली थीं। एक ओर एक अखबार पर कुछ फलमूल बिखरे थे, दूसरी ओर कुछ काग़ज़, किताबें, एक मिट्टी का घड़ा। चिराग़ एक ताक़ में रख कर मीनाक्षी एक टूटे से तखत की ओर बढ़ी। इसी पर एक मामूली बिछौने पर बेहोशी की हालत में एक लड़की अस्तव्यस्त पड़ी थी। मीनाक्षी ने उसके ऊपर झुक कर पुकारा, कमल, ओ कमल ?

कमल ने मुँह घुमाया। लड़की का रंग पीला पड़ गया था, पर चेहरा सुन्दर था। मीनाक्षी को देख कर वह थोड़ा हँसी। बोली, नहीं हुआ, आपको सुनायी पड़ता है ? उसको नौकरी नहीं मिली। मिल जाती तो मैं बच जाती। वे बच जाते, और एक प्राणी बच जाता। तुम्हें बहुत कष्ट है न ? मुँह सूख गया है। शायद दिन भर खाया नहीं ?—कह कर उसने एक हाथ बढ़ा कर मीनाक्षी का सिर अपनी छाती के पास खींच लिया।

इसमें सन्देह नहीं कि यह बीमारी का प्रलाप था। मीनाक्षी ने उसके सर पर हाथ रख कर देखा कि देह बुखार में जली जा रही थी। उसने धीरे से पुकारा, कमल, अरे मैं आ गयी।

आ गये ? अब कोई चारा नही। मेरा सर्वनाश कर डाला। बहुत देर बाद आये—बहुत देर हो गयी। जाओ—तुम जाओ, तुम्हें माफ न करूँगी। नराधम, तू इस उम्मीद में नौकरी देगा, इस उम्मीद में कि मेरा सत्यानाश हो !—यह कह कर उसने उत्तेजना में उठ कर बैठना चाहा। मीनाक्षी ने पकड़ कर उसे लिटाते हुए कहा, क्या है रे कमल ? मैं—मैं तेरी मीनाक्षी दीदी हूँ। छिः सब लोग बाहर बैठे हैं, बदन ढाँक। यह क्या है, लोग क्या कहेंगे कमल ?

तुम कौन हो ?

तेरी दीदी मीनाक्षी, मुझे नहीं पहचानती ?

क्यों आयी हो ?

तुझे देखने आयी हूँ रे !

चली जाओ। उसे भेज दो।

किसे ?

ईश्वर को। वह बचा सकता है। नहीं बचा सकेगा। नहीं। नहीं।

मीनाक्षी ने डर कर उसकी ओर ताका। उसके बाद जल्दी से आकर पुकारा, सुधीर ? काँकर ?

हाँ, क्या है ? कहते हुए दोनों आगे बढ़े।

सुधीर, बरफ़ ले आओ, डाक्टर को बुला लाओ। मैंने सब समझ लिया।

घबरा कर सुधीर बोला, नहीं दीदी, डाक्टर नहीं,—मुझे माफ़ करो, मुझे बचाओ, मैं डाक्टर नहीं बुला सकता। बरफ़ मैं अभी लाये देता हूँ।

रुपया पैसा तो हैं ?

न, कुछ नहीं है।

नहीं है ? काँकर, तुम्हें रुपये लाना होगा।

कंकर बोला, इतनी रात गये ?

इतनी रात गये ही, काँकर। तुम्हारे सिवा तो इनके कोई नहीं है। तुम दोनो जाओ। डर की कोई बात नहीं, मैं हूँ।

कंकर और सुधीर चले गये। उस निस्तब्ध रात में ही दरवाज़ा बन्द कर मीनाक्षी लौट कर रोगिणी के बिस्तर के पास बैठ गयी।

कमल बोली, मीनाक्षी दीदी ?

हाँ, मैं हूँ, पहचान लिया ? तुझे बड़े ज़ोर का बुखार चढ़ा है न ? अभी उतर जायगा, डर मत।

काँपते गले से कमल ने पुकारा, मीनाक्षी दीदी !

क्या है रे कमल ? पगली, ब्याह किया, और मुझे बताया भी नहीं ? मेरे भाई को आख़िरकार नहीं छोड़ा।

कमल हँसी। बोली, मीनाक्षी दीदी, ब्याह के पहले किसी से मन नहीं मिला,—बड़ी मुश्किल, बहुत से दुःख, बहुत सी ज़िम्मेदारी !

मीनाक्षी ने उसका चिबुक हिला कर कहा, बड़ी बड़ी बातें सीख गयी है ? बात क्या है ?

कमल बोली, बड़ा अच्छा लड़का है, मैं उसे छोड़ नहीं सकती, उसने मेरे लिये बहुत कुछ किया है।

ख़ाक किया है ! तेरी यह हालत कर दी है !

कुछ न कहो, मीनाक्षी दीदी कुछ न कहो। मैं ही ख़ाक हूँ, उसका त्याग बहुत बड़ा है, उसने बहुत कुछ सहा है। इतने बड़े घर का लड़का, मेरे लिये सब कुछ छोड़ कर चला आया। कितना दुःख उठाया, मैं उसके योग्य ज़रा भी नहीं।

और तू शायद कम है ?—मीनाक्षी बोली, जैसे मुझे कुछ पता नहीं ? तेरे सिर पर कितनी लांछना हैं, सब ओर से कितना कितना तिरस्कार मिला। और उसके बदले क्या मिला ? यह दारिद्रय और उपवास, इस मरुभूमि में घिसट घिसट कर चलना—यह प्रेम कहलाता है ?

मीनाक्षी के हाथ ज़ोर से दाब कर कमल बोली, कुछ कहिये मत, तुम्हें पाप लगेगा। मैंने बहुत पाया, उसने मुझे बहुत कुछ दिया !

अभागी, वह तो देख ही रही हूँ ! बदन पर फटी हुई एक साड़ी, हाथों में काँच की दो चूड़ियाँ, दिया जलाने को पैसा नहीं जुटता, घर दरिद्रता से भरा, घूरे पर रहना, तुझे बहुत दिया।

दीदी, उस बेचारे पर ख़फ़ा मत हो।

ख़फ़ा न होऊँ ? सोने को मिट्टी कर दिया। जब से आयी हूँ हैरत में हूँ। इसे प्यार कहेगी ? यह मन का एक भयानक विकार है। इस वीभत्स जीवन को प्रेम क्यों कहती है ? बस, अब न बोलना, ख़बरदार ! ख़ुद मर रही है, उसे भी मार डाला। क्यों, दोनों एक दूसरे को छोड़ नहीं सकते थे ? तुम लोगों को फाँसी लगाने के लिये दो रस्सियाँ नहीं मिलीं ?—कह कर मीनाक्षी घड़े के पानी से आँचल भिगो कमल के माथे पर छिड़कने लगी।

बोली, अच्छा, बातें बाद में होंगी, इस समय चुपचाप पड़ी रह, तुझे अच्छा हुए बिना मैं भी कहीं न जाऊँगी।

वह कहाँ है?

मुँह बिगाड़ कर मीनाक्षी बोली, बहुत परेशान हैं, क्यों? अपने लिये खाना लेने भेजा है। इतनी रात गये तेरे घर आयी, खाना नहीं खिलायेगी?

कमल थोड़ी देर उसके मुँह की ओर देखती रही। फिर बोली, उसे भी कुछ खिला देना, मीनाक्षी दीदी।

न, कुछ नहीं खाने दूँगी, भूखे रखूँगी। देखूँ तू क्या कर लेगी।

कुछ देर बाद कमल ने पुकारा, मीनाक्षी दीदी।

क्यों?

हम लोगों ने बुरा किया तुम यह क्यों कहती हो?

अरे चुड़ैल, गला काटने पर भी मैं वह न मानूँगी—मीनाक्षी बोली, दुःख में दारिद्रय में कहीं भी प्रेम की अपनी महिमा होती है, इससे सत्साहित्य का प्रचार हो सकता है, इसको आदर्श कह कर हिन्दू स्त्री का सतीत्व भी दर्शाया जा सकता है,—पर उससे जीवन नहीं चलता, दारिद्रय के अपमान से प्रेम पंगु हो जाता है, अभाव की आग में जल कर सब राख हो जाता है। मेरी बात झूठ न समझना, मुझे इसमें महिमा की सी कोई चीज़ नहीं मिलती, इसमें कुछ भलाई नहीं मिलती।—मैं तो यह सोचती हूँ कि यदि तुमने प्रेम ही किया था तो अपने भयावह भविष्य की ओर देख कर एक दूसरे का त्याग क्यों नहीं किया? लोगों का अपमान, कुटुम्बियों की घृणा, मित्रों की उपेक्षा, अभाव, उपवास और भिक्षा का असम्मान—इन सब में पागलों की तरह क्यों कूद पड़ी? प्रेम के लिये सर्वस्व त्याग तो यह नहीं हुआ, यह तो है परिणाम न देखने वाले पाशव आकर्षण का मोहग्रस्त उदाहरण। कमल, यह कुछ नहीं है,—इस सबको समाप्त कर दे, बाहर उजाले में निकल, सुस्थ होकर सहज भाव से जीने का प्रयत्न कर, मरने के भय से डरे स्यार की तरह गड्ढे में घुस कर आत्मरक्षा की चेष्टा

मत कर,—अपने को आग में झोंक दे, बाहर निकल,—यह क्या, उठ क्यों रही है ? हुआ क्या ?

कमल ने हड़बड़ा कर तख्त पर से सिर बढ़ा दिया। मीनाक्षी ने झट से उठ कर कहा, क़ै करेगी ? कर-कर—अच्छा है। मैं पकड़े हूँ—

तभी सुधीर के गले की आवाज़ सुनायी पड़ी। मीनाक्षी बोली, बाहर ही रहना सुधीर, भीतर न आना।

कमल को क़ै हुई। बेचैनी से उसका सारा बदन ऐंठने लगा।

सुधीर !

क्या है, दीदी ?

इधर आओ। कमल के मुँह से ऐसी तेज़ दवा की गंध कैसी है ?

सुधीर सिर झुकायें चुप रहा, कमल निर्जीव-सी हो गयी।

अब भी तुम डाक्टर नहीं बुलाना चाहते ?

नहीं दीदी।—यह कहते हुए सुधीर ने बरफ़ का एक बड़ा-सा टुकड़ा ज़मीन पर रख दिया।

अगर कुछ हो जाय तो ?

एकाएक सुधीर मीनाक्षी के पैरों के पास बैठ फूट-फूट कर रोने लगा,—हो, दीदी, जो कुछ भी हो, और मुझसे कुछ नहीं हो सकता। मैं यंत्रणा से बिलकुल जर्जर हो गया हूँ। पैसा नहीं है, सामर्थ्य नहीं है, आश्रय नहीं, मित्र नहीं—इसीलिये मैं आज सारी ज़िम्मेदारियों से छुटकारा पाना चाहता हूँ। मैंने ग़लती की, बड़ी भारी ग़लती की,—आप हमें बचायें। पर कुछ पूछिये मत, कुछ जानना न चाहें, सिर्फ़ इस मुसीबत से मेरी रक्षा करें।

मीनाक्षी काँपते गले से बोली, तुमने कमल का ख़ून किया है। निकल जाओ यहाँ से। जाओ, उठो, पैरों पर गिर कर रोने का मौक़ा नहीं है। जाओ, सड़क की ओर के दरवाजे खिड़कियाँ बन्द कर दो। तुम्हारा प्रायश्चित्त मेरे ही हाथों हो।

सुधीर उठ कर चला गया। पास के कमरे में जाकर अँधेरे में ज़मीन पर बैठ गया। उपवास-क्लिष्ट, क्लान्त, भाग्य के हाथों लांछित, मनुष्य-समाज में तिरस्कृत—आँखें मूँदे वह बैठा रहा। दोनों आँखों से आँसू अनवरत बहने लगे।

फिर भी वह डरा हुआ दूसरे कमरे की ओर कान लगाये रहा। एक निष्पाप, निरपराध युवती की करुण आवाज़, यंत्रणा, प्रलाप अश्रान्त रूप से सारी रात उसके कानों में पड़ते रहे और उसके साथ मीनाक्षी की सान्त्वना, बरफ़ तोड़ने का शब्द, पानी की बाल्टी की आवाज़, टूटे तख्ते की चर्र मर्र।

इस तरह से वह कठिन, दीर्घ, विपद्-संकुल रात बीत गयी।

बहुत तड़के मीनाक्षी ने उसके दरवाज़े के पास आकर पुकारा, सुधीर?

क्या दीदी?

अब कमल के पास जाकर बैठो, मैं नहा लूँ।

सुधीर ने उठ कर पूछा, कुछ होश आ गया है?

हाँ, अच्छे हैं।—कह कर मीनाक्षी झटपट नहाने चली गयी।

सुधीर उस कमरे में आया। देखा, सारा कमरा धुला है, सामान, बिस्तर, कपड़े-लत्ते सब साफ़ हैं, सिर्फ़ तख्त पर एक साड़ी में लिपटी आँखें बन्द किये कमल पड़ी हुई है। प्रभात-कालीन अरुण प्रकाश केवल खिड़की से आकर कमरे को उज्ज्वल कर रहा है।

कमल?

कमल ने बड़े कष्ट से आँखें खोलीं। उसकी आँखों मे आँसू डबडबा आये। रात भर में ही उसका चेहरा बदल गया था।

कुछ अच्छी तो हो?

कमल ने चुपचाप फिर आँखें बन्द कर लीं।

तुम्हारे निकट मैं चिरकाल तक पापी रहूँगा, कमल? तुम्हें आश्रय न दे सका, सम्मान न दे सका,—तुम मुझे क्षमा कर दो, कमलकहते!

कहते सुधीर की आँखों में आँसू छलछला आये। आत्मग्लानि और दुःख से मानो उसका जीवन विकृत हो गया।

कमल ने जवाब न दिया, केवल उसकी विवर्ण, रुग्ण, रक्तहीन देह अन्दर ही अन्दर आँसुओं भरे निःश्वास से थोड़ी हिल उठी।

आज से मैंने प्रतिज्ञा की कमल,—सुधीर ने कहना शुरू किया, प्रेम की इस हीन वृत्ति से दोनों ही छुटकारा लेंगे। आत्म-सम्मान और दायित्व वहन करने की जब तक शक्ति न प्राप्त कर लेंगे तब तक दोनों एक दूसरे का स्पर्श नहीं करेंगे। आज केवल दीदी और कंकर बाबू के आगे ही हमारा सिर नहीं झुका, अपने को भी इस लज्जाहीन अपौरुष की कोई कैफ़ियत नहीं मिलती। छिः छिः, हमारे जीवन को धिक्कार है। तुम्हारी इस तकलीफ़ से ज़िन्दगी भर की शिक्षा मिल गयी।

उसी समय हाँपते-हाँपते कंकर आ पहुँचा। उसके हाथों में कुछ फल थे। सुधीर ने उठ कर कंकर को चिपटा लिया। बोला, सदा के लिये ऋणी रहूँगा। आपको बड़ी तकलीफ़ हुई।

कंकर ने पूछा, बीमार की हालत कैसी है?

संकट कट गया।

आपकी दीदी कहाँ हैं?

वह आ रही हैं। आप ज़रा आराम करें। इतनी रात को कहाँ गये थे, क्या किया इस सबका हमें कोई होश नहीं।

गीले कपड़े पहने मीनाक्षी आयी। भीगे बालों और कपड़ों से उसके तमाम बदन से पानी चू रहा था। बोली, रुपये लाये?

हाँ, जल्दी कपड़े बदल आओ।

सुधीर, तुम्हारे घर में कपड़े हैं? एक साड़ी तो दो।

सुधीर एक साड़ी और कुरती ले आया। मीनाक्षी कपड़े बदल कर बोली, सुधीर, पहले बाज़ार जाओ। जल्दी लौटना, मैं अभी रसोई करूँगी। काँकर, उसे रुपये दो।

सुधीर बोला, आपको कुछ दिनों यहाँ रहना पड़ेगा, कहे देता हूँ। मना न कर सकेंगे।

रहने से तुम्हें बड़ी सुविधा रहेगी न ? पत्नी बीमार है, घर में नौकरानी नहीं है, दूसरा कोई आदमी नहीं, खाने पीने का अच्छा इन्तज़ाम रहेगा—यही मतलब है न ?

सुधीर हँस कर बोला, आपकी बातों में वही हमेशा का मज़ाक़ है। पर मैंने इतना सब नहीं सोचा था। बड़े गहरे पानी में हूँ। अभी आप लोगों को छोड़ न सकूंगा।

मीनाक्षी बोली, अच्छा हुआ भाई, बिना ठौर ठिकाने दर-दर घूम रही थी। हाय, कोई हमारी देख-भाल करने वाला नहीं था। ठीक है, तुम्हारे यहाँ दो रोटी खा कर पड़ी रहूँगी। इतने दिनों बाद ठिकाना तो मिला।

कंकर ने कटाक्ष किया, बिना पैसों का खाना और रहने की जगह—और चाहिये क्या ? स्त्रियों पर दया करने वाले लोगों की कमी नहीं है। कम उमर होने पर सब को ही रहम आ जाता है।

तुम्हारे मुँह में आग लगे। वह मेरा छोटा भाई है।—कह कर मीनाक्षी और वह दोनों जोरों से हँसने लगे।

सुधीर बोला, रहेंगी न दीदी ?

मीनाक्षी बोली, एक शर्त पर।

कहिये ?

मैं रहूँगी तुहारा घर उजाड़ने के लिये। सुधीर, मैं इस तरह तुम लोगों को नहीं रहने दूँगी। तुम दोनों अलग हो जाओ। मैं आशा करती हूँ कि कल रात की सीख भूलोगे नहीं।

सिर झुका कर सुधीर बोला, मुझे अपने लिये सोच नहीं है, पर—

पर कमल के लिये भी तुम्हें फिकर नहीं। नन्हीं बिटिया तो नहीं है।

अभागा, लड़की को पालने वाला बना था, उसका फल मिल गया।—मीनाक्षी बोली, इस मकान का किराया कितना है ?

पन्द्रह रुपये। दो महीने से किराया नहीं दे पाया हूँ।

घर का खर्च कितना है ?

कम से कम तीस रुपया महीना।

आमदनी कितनी है ?

पच्चीस रुपये का एक ट्यूशन था, इस महीने से वह भी नहीं रहा।

कहीं से मदद मिलती है ?

कानी कौड़ी भी नहीं।

मीनाक्षी कुछ देर चुप रही। उसके बाद बोली, यह है आदर्श प्रेम! जो राजसी ठाट में रह सकता वह आकर कूड़े में पड़ा है! आदर्श प्रेम, समझे कँकर ?

कंकर बोला, तुममें टॉलरेशन नहीं है। उनका दृष्टिकोण अगर तुम्हारे समान न हो तो ?

चुप रहो, बड़ी-बड़ी बातें न बघारो। जिसे दोनों वक्त दो मुट्ठी खाना नहीं जुटता, पहनने को जिसके पास कपड़े नहीं, मकान मालिक की फटकार, बनिये का अपमान, बच्चे पैदा करना जिनका जीवन है—उनका फ्री लव्। झाड़ू मारो।—मीनाक्षी कहती गयी, जिस दिन सम्मान कर सकेंगे, जिस दिन सम्मान प्राप्त कर सकेंगे, उसी दिन रोना सुधीर, उससे पहले नहीं। यह सब प्रेम नावेल के लिये ठीक है, कविता में होता है पर जीवन में बिलकुल बेमाने है।—जाओ, जल्दी सामान खरीद लाओ।—कहते हुए वह फलों का पैकेट लेकर कमल के कमरे में चली गयी।

जब बाहर आयी तो कंकर ने पूछा, तुमने उसका अपमान क्यों किया ?

कड़ी बात को अपमान मत कहो। छुटपन से उसे देखती आयी हूँ, मैं सब कुछ कह सकती हूँ।

मेरे सामने ?

तुम्हारे सामने कहने से उसे सीख मिलेगी।

कंकर मुस्कुरा कर बोला, देख रहा हूँ कि तुम समाजपति हो गयी हो।

मीनाक्षी बोली, यह बात बिलकुल ठीक है कि असंयम मुझे अच्छा लगता है, अगर उसमें बल रहे तो। पर जिस असंयम में श्री नहीं, पौरुष नहीं, जिसमें दुर्बलता ही बड़ी हो, अन्धेपन में जो अपघात कर लेते हैं, वे क्रान्ति नहीं कर सकते—ऐसा असंयम मेरी आँखों में ज़हर है। जो कमज़ोर व्यक्ति डर से मरा जाता हो, जो चोट खाकर झुक जाय, जो मानसिक यक्ष्मा के कारण पंगु है, उत्तरदायित्वहीन आसक्ति से निरुपाय होकर जो जल मरे, मुसीबत आने पर जो जाकर गड्ढे में छिप जाय—उसका असंयम पशु-प्रकृति से भी अधिक घृणास्पद है। तुम्हारा तरुण साहित्य कुत्ते कुतियों की कामुकता की बड़ाई कर सकता है, पर मैं तरुणों से भी तरुण हूँ—मैं पंख फैलाये मोर मोरनी के मैथुन को देखना पसन्द करती हूँ। उनके पीछे रहती है नववर्षा की पृष्ठभूमि, कविता की अपरूप रस-व्यंजना। वह शक्तिशाली, स्वस्थ, सुन्दर असंयम सारी प्रकृति के रूप में आत्मसात् हो जाता है। मुझे समाजपति कहकर गाली दोगे, वह सह लूँगी, पर बेकार, दरिद्र, आत्मसम्मान के ज्ञान से हीन युवक-युवतियों के उच्छृङ्खल प्रणयकांड का कुत्सित परिणाम मेरे आगे अत्यन्त घृणास्पद है।

कंकर बोला, किसी दिन तुम्हारी भी यही अवस्था हो सकती है।

मीनाक्षी चीख कर बोली, अगर होगी तो उस दिन आत्मग्लानि से ज़हर खाकर नहीं मरूँगी, पर उस दिन आत्मगौरव के अवलम्ब को संसार के सामने रख दूँगी। समाज के भय से उस दिन अज्ञात अन्धकार में छिपकर आत्मरक्षा नहीं करूँगी। उस दिन सबको जता जाऊँगी कि मुझे रखने के योग्य सिंहासन अभी नहीं बना—उस दिन अपने ही पैरों पर खड़ी होकर नये समाज की सृष्टि करूँगी।

अर्थात् भाग जाओगी?

भाग नहीं जाऊँगी, लाठी मार कर ठीक कर दूँगी।

कंकर हँस कर बोला, वही इब्सन का समाज-द्रोह ! पर जिसके हाथों तुम आदमी बनीं उसे कुछ प्रतिदान नहीं दिया। उल्टे आत्मपरता को क़ायम रखने के लिये समाज को कौशल दिखाकर भाग गयीं। वह तुम्हें स्वीकार नहीं करेगा, और न तुम्हारी चटुल दुर्नीति को, इसीलिये लाठी दिखाकर जान के डर से भागती हो। मीनाक्षी, तुम्हारी बातों में आत्म-प्रतारणा की भाषा सुन रहा हूँ।

मीनाक्षी बोली, नहीं कंकर, अपने को धोखा देना मेरी धातु में नहीं है। मुझे स्वीकार नहीं किया यह उनका अगौरव है, मेरा नहीं। मैं आगे बढ़ती हूँ और तुम साथ क़दम न रखने के कारण पीछे से मेरा आँचल खींच रहे हो। प्रत्येक युग में मानव के मन की गठन बदलती रहती है और इसीलिये पृथ्वी सदा से विचित्र है। जो इस परिवर्तन को नहीं मानते वे खुद तो मरते ही हैं, दूसरों को भी मारते हैं। आचार और धर्म के नाम पर जो कुछ होता आया है उसको ही एक मात्र आदर्श मैं नहीं मानती। जिसके पास मेरे लिये रहने भर के लिये जगह नहीं है, यही समझना होगा कि वह अभी तक आगे नहीं बढ़े, वे अभी तक पिछड़े हैं। हम तुम आधुनिक मानव हैं। आधुनिक शिक्षा, आधुनिक विचार, आधुनिक व्यवहार से अलग हम लोगों का निर्वाह नहीं, इसलिये पिछली पोशाक बदल कर आधुनिक बनानी होगी। इस बदलने को ही कहते हैं वयूशन, इसी का नाम है प्रगति। जो इसे स्वीकार नहीं करते वे जराग्रस्त हैं, वही पुराणपन्थी दक़ियानूस कहलाते हैं। इन पुराणपन्थियों की मूढ़ रक्षण-शीलता इकट्ठी होकर सामाजिक पिवर्तन के विरुद्ध नवीन परिवर्तन के लिये जगह नहीं छोड़ती, तभी नेपथ्य में देशव्यापी क्रान्ति की वारूद तैयार होती रहती है।

कंकर बोला, तुम्हारी भाषा में ही कहता हूँ, आधुनिक प्रगतिवादियों के फूहड़पन को तुम सामाजिक क्रान्तिवाद कहना चाहती हो ?

तुम फूहड़पन किसे कहते हो ?

यही, आधुनिक स्त्री-पुरुष का जीवन। जो कुछ सुन्दर, मंगलमय है उसका मज़ाक़ उड़ाना, अत्यन्त प्राचीन काल से मानव समाज में जो आदर्श अच्छे कहे जाते रहे उनकी हँसी उड़ाना, और भी, आध्यात्मिक जीवन की अवहेलना, सच्चे प्रेम और धर्म और मानवता को हल्का समझना, जो कुछ भी श्रद्धा सम्मान के योग्य है उसे हास्यास्पद बना डालना—यही तो फूहड़पन है।

मीनाक्षी बोली, अच्छी बात कही। जो मशीन किसी दिन नयी रही वह आज पुरानी है, ढचर ढचर करती है। उसे चलाने के लिये बहुत सा मोबिल ऑयल खर्च हुआ; पर जिसकी चाल घिस गयी, जिसके स्क्रू पेंच चलते चलते कट गये, उनसे तो काम चलने का नहीं, नयी मशीन मँगानी होगी। तालियाँ बजा कर और भाषण दे कर कल्याण नहीं होता, कंकर। आँखें खोल कर देखो, घुन लग गया है घुन। एक सौ वर्ष पहले इस देश में ही बड़े बड़े औपन्यासिक पैदा हुए थे। उनकी कल्पना विशाल थी, महान् चरित्रों की सृष्टि करते थे, महान् आदर्श का प्रचार करते थे—उनके साहित्य मे कल्याण का अपूर्व समावेश था। उनका नाम आज कम हो गया है—अगर यह कोई कहे तो मैं उसे मूर्ख कहूँगी। जो मूल्यवान् है वह सदा ही सोना, हीरा, मोती की तरह ऊँचे मूल्य का रहता है। पर याद रखो पछले ज़माने दादी का सोने का गहना आज की औरतें नहीं पहनेंगी, ज़बरदस्ती करने से वे बग़ावत करेंगी। बंकिम बाबू का साहित्य स्वर्णमय है, पर उस पक्के सोने को गला कर आज के साँचे में ढाले बिना स्वीकार नहीं किया जायगा। चीज़ एक ही रहती है, पर स्टाइल युग युग में बदलता रहता है। मूर्खों ने बंकिम शताब्दी पर एक बार भी नहीं कहा कि बंकिम को भी एक दिन प्राचीन के विरुद्ध विद्रोह घोषणा करनी पड़ी। उनके हाथों से सोना छीन कर बंकिमचन्द्र ने भी अपने साँचे में ढलाई की। उस समय के अनैतिक साहित्य के लेखक बंकिम को भी तरुण साहित्यिक कह कर गालियाँ खानी पड़ी थीं।

कंकर बोला, तुम शायद कहना चाहती हो कि जो भी पुराना है उसे बदल डालना ही अक़्लमन्दी है, नहीं तो वह आज चलने क़ाबिल नहीं है।

मैं कहना चाहती हूँ सारी पुरानी चीज़ों को नये रूप में परिचित कराना। प्रेम कहो, आध्यात्मिक जीवन कहो, राष्ट्रीयता कहो, सामाजिक धर्म कहो—इनकी परम्परा बदल दो। अच्छा खाना भी रोज़ रोज़ अच्छा नहीं लगता, नयी सी बढ़िया तरकारी बनाओ, नहीं तो जीभ अटकेगी, हाज़मा ख़राब हो जायगा। तरह तरह की चीज़ों के स्वाद से रुचि जीवन्त रहेगी। रवि बाबू यदि स्वर्णतरी और आँख की किरकिरी का आदर्श लिये रहते तो उनकी साहित्यिक अपमृत्यु हो जाती। वह त्रिकालज्ञ थे, इसी लिये नयी नयी सामग्री हमारे लिये जुटाते रहे। मानव की विचित्र रुचि के लिये इतना बड़ा आदर्श इसके पहले शायद किसी कलाकार ने प्रकट नहीं किया। इसी लिये वे वृद्ध होकर भी अन्तिम समय तक नवयौवन के दूत रहे। प्रतिदिन अपनी सृष्टि का अतिक्रम करते रहे। उनकी प्रत्येक रचना में गतिशील समय अपनी छाया छोड़ता चलता था।

कंकर बोला, तर्क की मीमांसा नहीं हुई, मीनाक्षी।

मीनाक्षी बोली, यह तर्क का विषय नहीं है। इस आलोचना में विद्वत्ता बड़ी नहीं है, दिव्य दृष्टि ही बड़ी है। असल बात याद रखो कि परिवर्तन-शीलता ही जीवन का चिह्न है, गति मन्द होते ही अस्तित्व की चरम दुर्गति हो जायगी। गतिमान् काल के प्रवाह में बहुत सा मैल और कचड़ा बह जाता है, जैसा कि आज दिन हमारे समाज और साहित्य में दिखायी पड़ता है, फिर भी इसमें से वर्तमान जीवन का सार संग्रह करना होगा। मैल और कूड़ा हटा कर घड़ा भरना ही पड़ेगा, नहीं तो हमारी अपमृत्यु होगी।

कंकर बोला, किन्तु आधुनिक साहित्य में अश्लीलता और आधुनिक समाज में अनैतिकता तो बढ़ते ही चले हैं?

मीनाक्षी बोली, साहित्य में अश्लीलता या अश्लील साहित्य?

दोनों ही।

अत्यन्त सहज मीमांसा है। मूर्खों का कान पकड़ कर यह बता दो कि जो वास्तव में साहित्य है उसमें अश्लीलता नाम की कोई चीज़ रह ही नहीं सकती। जो सुन्दर है, मधुर है उसमें चरम अश्लीलता भी मार्जनीय है। युग युग में यही साहित्य का मानदण्ड रहा है। संसार के सारे बड़े बड़े साहित्य में बड़ी बड़ी चारित्रिक दुर्नीति रही हैं। महान् कला का जन्म ही बड़ी दुर्नीति में हुआ है। अश्लीलता और अनैतिकता में ही महाभारत के प्रधान चरित्रों का जन्म हुआ है—स्वयं वेदव्यास तक को ले लो। इतने बड़े धर्मशील युधिष्ठिर का जन्म स्खलित-कौमार्य नारी के गर्भ से हुआ। प्रातःस्मरणीया सती देवी द्रौपदी की देह को लेकर पाँच पुरुष खींच-तान करते थे। अर्जुन के यौन जीवन का इतिहास सुन कर लम्पटता से प्रेम होने लगता है। अर्थात् मतलब की बात सुन लो कि जो ललित कला की अधिष्ठात्री देवी हैं, जो वीणावादिनी सरस्वती हैं, वे स्वयं वेश्या हैं। जो तमाम समालोचक आधुनिक कलाकृतियों में अश्लीलता और अनैतिकता ढूँढ़ निकालते हैं उनका जन्म भी बड़ी गन्दी अश्लीलता में हुआ है—अबोध लोगों को यह मामूली बात याद दिला दो।

कंकर बोल उठा। ब्रेवो।

मीनाक्षी बोली, अब बस, चलूँ रसोई करना है।

आठ

बड़े यत्न से जो निर्माण किया जाय उसे एक दिन बड़ी अवहेलना के साथ तोड़ दिया जाय—कंकर की प्रकृति में यह गुण गुप्त रूप से था। उसका प्राणग्रह अपने स्थान से भ्रष्ट था। वह टुकड़े टुकड़े होकर स्वभाव धर्म में पड़ा था, पर उसकी स्थिति भी गतिशीलता का दूसरा नाम थी।

आठ दिन तक वह निरुद्देश्य हो गया था। यह निरुद्देश्य होने का अभ्यास उसकी कुंडली में पड़ी चीज़ नहीं थी, वह तो उसके खून में बहती थी। कितनी ही उल्टी बुद्धि के और आत्मप्रतिवादशील चीज़ों के संमिश्रण से जिस चरित्र का निर्माण होता है, कंकर उसका चलता फिरता संस्करण था। उसके मन और वाणी में यदि समानता न रहे तो दोष नहीं दिया जा सकता, और मन के साथ आचरण यदि हर क़दम पर बेमेल रहे तो सृष्टि-वैचित्र्य के मूल तत्त्व पर दोषारोपण कर सन्तोष करना पड़ेगा। कंकर को जाना नहीं जा सकता, अनुभव करना पड़ेगा। कंकर एक प्रबल प्राणशक्ति का मानवीय संस्करण है। गद्य कविता वह लिखता तो है ही, वह गद्य कविता स्वयं ही है। उसके स्वभाव के बेमेल छन्दों को भाषा पढ़ने में चाहे कष्ट हो, पर अभिव्यंजना अनुभव करने में देर न लगती।

आँधी में जो घर हिलता हो उसके प्रति उसे एक प्रकार की अहेतुक ममता रहती, इसी लिये संकट की अवस्था उसे अच्छी लगती। सुधीर और कमल के घर की ख़राब हालत जब ज़रा सुधर चली तब उसे वहाँ रस नहीं रहा। उसके मन ने कहा, 'यहाँ नहीं, और कहीं; और कहाँ?' कहाँ का तो उसे पता नहीं पर यहाँ नहीं। वह किसी चीज़ के प्रति आकर्षण का अनुभव नहीं करता, वह किसी शृंखला के पेट में नहीं फँसता।

दोस्तों ने उसके खिलाफ़ शिकायत की, तुम्हारे स्वभाव और विचार में खोजने पर भी संगति नहीं मिलती।

उसने बताया, यह मेरे लिये अगौरव की बात नहीं। बहुत तरह की औषधियों के रसों के संमिश्रण से एक जारक रस तैयार होता है। यह रस विचित्र होता है, उसके गुण और विचित्र होते हैं। मानव प्रकृति में अनेकों इस असंख्य विपरीत धातु की समावेश मात्र हैं।

मित्र बोले, तुम साहित्यिक हो, इसलिये सोच समझ कर बोलो। विपरीत हो सकता है पर अभिव्यंजना के रूप में सहज संगति रहेगी। तुम कविता लिखते हो, तुम्हारे अवचेतन मन में बहुत तरह के भाव अनुभाव का प्रभाव होता है, एक के साथ दूसरे का मेल नहीं होता, फिर भी जब तुम कविता लिख डालते हो तो हम उसमें एक अखँड ऐक्य परिणत सौंदर्य पाते हैं।

कंकर बोला, काव्य का वह प्राचीन दृष्टिकोण ही अब ढहने लगा है। ऐक्य और सौंदर्य से ही रस संचार होगा वह बात नहीं रही। भाषा और भाव के विपरीत प्रकटीकरण में भी एक नवीन रस मिलता है। उसकी यदि अवहेलना करोगे तो प्राचीन कह कर तुम्हारी हँसी उड़ायी जायगी। सुनो :

आँधी काल वैशाखी की उठी काले आसमान में
मत्त पवन गरज उठीं सागर तरंग में
रुद्र पुकार उठे भीषणता की
चोटी हिला हिला
तूफ़ान उठा है भारतवर्ष के रंगीन आकाश के
मुँह पर कालिख पोत कर—
हिमालय से उतर कर आया है क्या
कोटि कोटि राजहंसों के सम्मिलित पंखों का प्रभञ्जन ?
उसी तूफ़ान ने विप्लव फैलाया धरती के दूरान्तर दिग दिगन्त में
अफ्रीका के अरण्य से सुन्दरवन में,
इँगलैंड और कलकत्ते में—

उसी विप्लव के स्फुलिंग फैल गये
देश की गृहवधुओं के आँगन में।
और उसी के साथ हमारे छत की दीवारों से
चँदोवे उड़ गये हैं,
असंख्य उन्मत्त एरोप्लेन मानो डैने फैलाये
स्पेन और चीन की ओर दौड़ पड़े।
फिर अपनी घड़ी के काँटों को ताका—
चाभी खाली कर वह बन्द हो गयी है!

उसी तूफ़ान में आकाश के तारे भीतचक्षु हैं
उसी तूफ़ान में भीषण मेरु प्रदेश और गङ्गा का उपकूल
विध्वस्त है,
उसी के आन्दोलन से सागर की मछलियाँ
आनन्द में चीत्कार कर उठीं।
विशाल मैदान की राजनीतिक सभा भंग हो गयी,
अण्डे के भीतर पक्षी के बच्चे ने प्राण पाये,
मध्य एशिया का प्राचीन मरुपथ हुआ
धूलिधूसरित।
और उसके साथ तपोवन की ऋषि बालिकाएँ
नाच उठीं पंख फैला कर
बेकार युवक देखते रहे रुग्ण चक्षु से
वातायन मार्ग से।
उस घर की छत पर विवाह उत्सव में निमन्त्रित लोगों की
उड़ गयीं केले की पत्तलें।

तूफ़ान के आलोड़न में हो गया सब अस्त व्यस्त,
विरही भूल गये प्रणय की व्यर्थता,
बाबू भूल गया दारिद्रय,
तरुणी के परिच्छन्न कौमार्य के प्राङ्गण में
सहसा आ पड़ा बीते वसन्त का झरा एक पत्ता
और उसके साथ उड़ कर आ गया
दैनिक सम्पादक की मेज़ पर
कहीं के किसी अनाथ वनपुष्प की एक रेणु का कण,
जिसने भुला दिया प्रतिदिन की राजनीति की कलह।
उसी आलोड़न ने
पतिता के प्राणों में जागी करुण प्रेम की दुराशा,
वृद्धों के मन में जागा यौवन प्रेम,
मज़दूरों के मन में आभिजात्य का स्वप्न,
कोयले की खान की कुलीगीरी के बाद रवि बाबू का स्नेह,
प्रहसन के छल रचना की 'प्रहासिनी' ने।

दोस्तों ने टोका, यह क्या चीज़ है कंकर ? यह है क्या ?
कंकर बोला, इसे आधुनिक गद्य कविता कह सकते हो।
यह गद्य है या कविता ?
कंकर बोला गद्य के नेपथ्य में कविता है। कवि के अवचेतन में इन समस्त कल्पनाओं का दृश्य घूम रहा था। इसमें कितना काव्य है, इतिहास है, और कितना वास्तविक गल्प का अंश है उसका विश्लेषण करने बैठोगे तो हार जाओगे। कल्पना के साथ रसोद्रेक का कैसा उत्कृष्ट काव्य है यह।
एक महाशय ने पूछा, पर इसकी जाति क्या है ?
कंकर मुस्करा कर बोला, जाति नहीं है इसलिये इसे अन्तर्जातिक संज्ञा दे सकते हो। इसमें दृष्टिकोण ही मुख्य है, टेकनीक के पीछे दिमाग़ ख़राब

मत करो। अगर कहो कि विचारों का समन्वय कहाँ है, काव्य-चिन्तन का मूल केन्द्र क्या है ? तो मैं जवाब दूँगा कि कवि के एक विशेष मूड में आसमान में आँधी उठी। तूफान का काम है उलट पलट, अर्थात् विप्लव। ग़ौर से देखो कि विप्लव का रूप कविता में प्रत्यक्ष हो गया है या नहीं। अगर है तो सारे विरोधी माल मसाने में कहीं खोजने पर सौंदर्य मिलेगा ही।

पर कला के सम्बन्ध में अभिव्यक्ति की संगति ही बड़ी चीज़ है, कंकर। तुम तरह तरह की चीज़ें सोच सकते हो, अनेक रसों के संयोग से उद्भट कल्पना तुम्हारे मन में उठ सकती है, पर उसकी अभिव्यक्ति के समय उसे कोई आंगिक ऐक्य देना होगा। जिसमें समन्वय नहीं है वह तो 'हड़बड़ज्ञाल' होगा, पागल की बकवास। उसमें अच्छी बातें हो सकती हैं, कल्पनाशील मन का ऐश्वर्य प्रकाश पा सकता है, पर संगति और मात्रा ज्ञान न रहने से उसकी लिखाई पढ़ाई पागल का प्रलाप कहा जायगा।

कंकर बोला, इसी लिये आर्टिस्ट की ज़रूरत है। जिनमें महान् प्रतिभा है वे विपुल असामंजस्य में से मणि निकाल लेते हैं। उनका काम सूक्ष्म और सुन्दर रहता है, वे तमाम अनैक्य में से योगसूत्र खोज निकालते हैं। तुम्हें यह पहले ही बता देना चाहता हूँ कि साधारणतया अच्छी कविता की रचना करने से गद्य कविता लिखना बहुत कठिन है। आश्विन के अपराह्न में आकाश की ओर ताक कर देखो। तरह तरह के रंगों की कूँचियों से रँगा हुआ असंबद्ध विचारवाले बच्चों का सा चित्रपट बिखरे हुए इधर-उधर फैले बादलों का समूह कैसा रहता है ? पर अच्छी तरह से देखो, वे सब कैसी अच्छी तरह अपूर्व सौंदर्य धारण किये रहते हैं। उन्हें देख कर नहीं लगेगा कि कहीं से भी वे असम्बद्ध हैं। जंगल की ओर ताक कर देखो। वहाँ शेर है, साँप है, बनमानुस है, शिकारी की बन्दूक है, चिड़ियों का झुंड है और इन सबके साथ हैं औषधियों की लताएँ और तपस्वियों की कुटियाँ—सब एक साथ मिलाओ। एक के साथ दूसरे का

मेल नहीं रहता, एक दूसरे का उत्कट विरोधी है; फिर भी पृष्ठभूमि की विशालता में संगीत है।

साहित्यिकों की उस सभा में एक गेरुआ वस्त्रधारी संन्यासी थे। उस युवक के असली नाम का तो पता नहीं था, वह मित्र-मण्डली में मंगल शर्मा नाम से परिचित थे। उनके साथ एक दिन घूमने निकलने पर कंकर ने पूछा, शर्मा जी, तुमने जो पहले उपन्यास लिखे थे वे क्या हुए?

शर्मा जी बोले, वह मेरी मौसेरी बहन के पास हैं और वह ससुराल में है।

कह क्या रहे हैं, अभी तक पति ने उसे त्याग नहीं दिया?

शर्मा जी हँस कर बोले, ऐसी कोई बात नहीं है, वह उनमें किसी पुस्तक की नायिका नहीं है।

फिर वे उसके पास कैसे हैं?

उसके पास ही मेरी पहली गल्प रचना हुई। सब कुछ छोड़कर आते समय उसके पास पांडुलिपि रख आया।

वह कैसे हैं?

खराब नहीं हैं, आधुनिक साहित्य का मुक़ाबला कर सकते हैं।

कंकर बोला, तब तो आप दूसरे साहित्यिकों की तरह किताबें लिखकर पैसा कमा सकते थे, फिर यह गेरुआ रँगने की कुमति क्यों हुई? सुनते हैं कि उपन्यास लिखने में अनुभव की आवश्यकता है, उस सबका क्या हाल था?

शर्मांजी हँस कर बोले, जैसे और बहुत से रहते हैं। जो नहीं जानता था वही लिखता था और जो जानता था उसे लिखने का साहस नहीं होता था।

प्लाट कहाँ से पाते थे?

प्लाट की तो ज़रूरत ही नहीं होती थी। एक छोकड़े या किसी छात्री को खड़ा करके बकने से काम चल जाता था। उनसे ही रसोद्घाटन होता, उनको इधर-उधर चला फिरा कर प्लाट हो जाता। इसके सिवा दिमाग़ में भरे थे रसेल, हक्सले, आरलेन, वेल्स और चेखब तुर्जनीव।

कंकर ने पूछा, प्रेम की कहानियों में कैसे थे?

इस प्रश्न से ख़ुश होकर मुस्कराते हुए शर्मा जी बोले, बताने में शरम लगती है।

शरम किस बात की, यहाँ कौन है, कहिये।

शर्मा जी मृदुस्वर से बोले, अच्छा ही था, पर अब उन्हें छपाने से फाँसी ही लगाना पड़ेगी।

कंकर ने मज़ाक करते हुए कहा, तो सुनो, एक आसान तरीका बताता हूँ। उन्हें छद्मनाम से कहीं बेंच दो, कुछ रुपया पैसा मिलेगा उसे दुर्भिक्ष फंड में दे देना। देश भी तुम्हारे उस सारे साहित्य से वंचित न रहेगा।

शर्मा जी ख़ुश होकर बोले, आजकल सौ में पचास संन्यासी छिप कर उपन्यास और कविता लिखते हैं, शर्त लगा कर कहता हूँ।

कंकर बोला, बहुत दिनों बाद तुमसे मुलाकात हुई है। चलो आज सिनेमा चलें।

शर्मा जी सहसा रुक गये। बोले, दुहाई है, माफ़ करो। देखना ही होगा तो छिप कर अकेले देखूँगा। इस चर्चा में संन्यासी किसी को साक्षी नहीं रखता।

यह कह कर शर्मा जी बिदा लेकर चले गये।

कंकर सिनेमा में घुस गया। तस्वीर आध घंटा पहले ही शुरू हो गयी थी। कीमती टिकट ख़रीद कर वह जहाँ जाकर बैठा वहाँ आस-पास अँधेरे में आदमी औरतों का उच्छ्वसित उल्लास नज़र आता था। पता लगा कि यह तस्वीर तीन हफ़्ते से चल रही है, अख़बारों में इसकी बड़ी तारीफ़ निकली है। कंकर देशी तस्वीरों में नहीं जाता था। रुपये का किस तरह अपव्यय

होता है वह ज़रूर दो-एक बार देख चुका था। उच्छृंखल नायक और रोनी सूरत की नायिका—यह देशी सिनेमा की तस्वीर होती हैं। पुलिस की कृपा, सेंसर की राय, देशी सतीत्व की नीति, डिरेक्टर की सनक, मालिक का खर्च, अभिनेता और और अभिनेत्री की नौकरी—इन सब को बचा कर जो देशी सिनेमाओं की तस्वीर बनती हैं उन्हें क्या कहा जाय? नायक होता है कोट-पैंट पहने अंग्रेज़ी-देसी समाज की दोगली सन्तान, न तो उसे अच्छी शिक्षा मिली होती है, न पौरुष और न बुद्धि, रहता है केवल एक हास्योत्पादक वैचित्र्यहीन अक्षय प्रणय निवेदन के कार्य को अतिक्रमण करता हुआ किसी न किसी तरह शरीर को कष्ट देकर सञ्चालक के निकट नौकरी को बरक़रार रखना। और नायिका? जैसे बम्बई कलकत्ता के कुछ रईसों के हाथों चढ़ी शायद किसी अशिक्षित डिरेक्टर के पल्ले पड़ गयी हो—रग चमकदार, यौवन बाँध कर रखा, और शकल अकाल-पीड़ित, संचालक और डिरेक्टर की आँखों में किसी तरह कामचलाऊ—इस तरह उसकी नौकरी हो गयी। लड़की को कूड़े से निकाल साफ कर मंदिर में रख दिया गया और नाम के साथ देवी लगा दिया। फ्री पास और सस्ता विज्ञापन मिलनेवाले साप्ताहिक के सम्पादकों ने प्रशंसा की, वाह वाह! झटपट कहानी लिखो। अच्छी शकल की नायिका मिल गयी तो अच्छे लेखक की कहानी के बग़ैर ही काम चल जायगा। डिरेक्टर प्रोप्रायटर को लेकर कहानी बनाने बैठ गये। साहित्यिक लोग पैसे चाहते हैं, इस लिये उनसे कहानी नहीं लेनी होगी, इससे अच्छा कि वह रुपया शराब के बिल में और श्रीमती अभिनेत्री रसतरंगिणी देवी के मासिक वेतन में दिया जायगा। सिनेमा की गल्पों का रहस्य साहित्यिक क्या जानें। कहानी बड़ी आसानी से लिखी गयी। निराश प्रेमी नायक है—मधुर स्वभाव और लम्पटता साथ-साथ रहेगी; स्त्री-प्रेम का लोभी है, जीवन से विरक्त; माता के प्रेम का कुछ रोना-धोना,—कारण अकारण भर्राये गले से माँ चिल्लाते ही दर्शक रोने के लिये आकुल हो उठते हैं; चार जगह भिखारी का गाना;

गाँव के तीन सीन; कुछ स्त्रियों का तालाब या घाट पर पानी उछालना, गीले कपड़े पहने पानी ले जाना और नायक से आँखें चार होने का सीन, बाली-गंजी ड्राइंग रूम के दो दृश्य,—एक अप-टू-डेट हिरोइन,—दो चार रवि बाबू की तरह के गाने। थोड़ा समाज-विद्रोह, कुछ नीति पर भाषण, कुछ सतीत्व और मातृत्व की बड़ाई, झीनी साड़ी और कंधे तक कटे खुली छाती के ब्लाउज़ की अश्लीलता, कुछ व्यर्थ प्रेम की नपुंसक-सुलभ गद्‌गद भाषा,—बस, और क्या चाहिये? देशी दर्शक इससे अधिक कुछ नहीं चाहता। देशी लड़कियाँ इसी से सन्तुष्ट हैं। अन्त में भिखारी और उसकी लड़की के मुँह मे वेदान्त के उपदेश का गीत ठूँस कर एक लांग-शॉट। विज्ञापन के लालच से दैनिक, मासिक, साप्ताहिक में बराबर प्रशंसा, और फ्री पास के बदले मित्र परिचितों में अविश्रान्त प्रोपॅगेण्डा!

तालियों के शब्द से ककर का ध्यान टूटा। अभी तक उसने ख्याल नहीं किया था, अब देखा कि उसके सामने एक अंग्रेज़ी ऑपेरा का अभिनय हो रहा है। अकस्मात् तालियों की वजह थी, कुछ अधनंगी नर्तकियों का अजीब तरह का अश्लील ढंग। देशी सिनेमा में औरतें वक्ष प्रदर्शन करती हैं, विलायती सिनेमा में वे दिखाती है पैर। लगता है कि सभ्य संसार में इनके सिवा स्त्रियों का और कोई सम्बल नहीं हैं, शायद प्रागैतिहासिक युग से इन दोनों के ज़ोर से ही स्त्रियों ने धरती पर रहने का अधिकार पाया हो, शायद सदा पुरुषों की निर्बोध लालसा को इन उपायों से उत्तेजित करके वे ख़ुश होती हैं। देशी सिनेमा में भँड़ैती और विदेशी सिनेमा में अशिष्टता। देशी सिनेमा में कुनीति और विदेशी में दुर्नीति। पर पौरुष, वैचित्र्य, मस्ती और उत्कृष्ट अभिनय के गुणों में विलायती सिनेमा जहाँ साधारण दर्शकों को जीवनप्राचुर्य का परिचय देता है वहाँ देशी सिनेमा असमर्थ अनुकरण और दुर्बल भँड़ैती की कदर्यता से दर्शकों के मन को यक्ष्माग्रस्त कर डालता है। थोड़े से अशिक्षित दंभी देशी धनिकों की कदर्य चित्तवृत्ति का प्रकटीकरण ही देशी सिनेमा का एकमात्र कर्तव्य है।

ऑपेरा का सरदर्द कुछ देर बर्दाश्त कर इन्टरवल में कंकर निकल आया। मैटिनी शो था इसलिये रास्ते पर आकर देखा कि तब तक शाम नहीं हुई थी, पाँच या छः का वक्त होगा। चाय की प्यास थी, कंकर होटल में घुस गया। घुसते ही देखा कि कालेज के उसके कुछ साथियों की चाय-सभा ख़ूब ज़ोरों पर है। सब ने ही उसका स्वागत किया। पहले युवक ने पूछा, ज़िन्दा हो ?

कंकर उनमें मिल गया। बोला, किस बात पर तुम लोगों में झगड़ा चल रहा है ?

वही सनातन समस्या, हिन्दू मुस्लिम मेल।

ओंठ सिकोड़ कर कंकर बोला, वही पुरानी बातें। तेल पानी, लुंगी धोती, लोटा और बधना, पूर्व और पश्चिम, दाढ़ी और चोटी, गाय और सुअर, मन्दिर मस्जिद, लाठी छुरी—पर उसके बाद ? जाने दो भाई, कुछ और बात करो।

एक ने प्रस्ताव किया, बहुत दिनों बाद आज जब कंकर मिल ही गया है तो चला जाय एल्बर्ट हॉल—बढ़िया सभा है।

विषय क्या है ?

विषय बहुत बढ़िया है। हमारे प्रोफ़ेसर श्यामरतन सभापति हैं। प्रसिद्ध व्याख्याता रहेंगे। चलो भाइयो, आज कंकर को उठाया जाय। और जो कुछ भी हो, कंकर अंग्रेज़ी में फ़र्स्ट क्लास फ़र्स्ट आया है। स्पीच देगा न कंकर ?

कंकर बोला, विषय तो मालूम हो।

आधुनिक शिक्षा और स्त्री-स्वातंत्र्य।

स्त्री वक्ता है कोई ?

Good God. औरतें बातें करती नहीं, सुना करती हैं। पुरुषों के मुँह में उनकी वाणी रहती है। वे पुरुषों की ग्रामोफोन हैं।

कोई स्त्री नेत्री है ?

Sorry. स्त्री-नेत्री इस देश में पैदा नहीं होतीं। वर्ष भर में दस महीने जो गर्भाधान में लगी रहती हैं, जो दूसरे के आश्रय और दूसरे के अन्न पर सदा पला करती हैं, जिनका एकमात्र काम दिनरात सतीत्व का पहरा देना हो—

एक तीसरे ने बात में बात मिलाई, जिनकी शिक्षा प्रेमपत्र तक हो, दीक्षा पति परमगुरु, आहार दाल-भात, स्वाधीनता ससुराल और नैहर के बीच का रास्ता—

चौथे ने आगे जोड़ा, जिनकी पालिटिक्स एक पति तलाश कर घर में घुसे रहना—

पाँचवाँ बोला, और फिर उसका स्वातंत्र्य ?

फिर भी तय पाया गया, जब इस तरह की स्त्रियों की स्वाधीनता के बारे में सभा में आलोचना की बात उठी है तो दलबल सहित चला ही जाय। चाय का प्याला खाली कर मित्र-मण्डली के साथ निकल पड़ा। धरमतल्ले के मोड़ से सब लोग बस में बैठे। नीतिज्ञान ही, चक्षुलज्जा-विहीन उनकी बातचीत ने बहुत से मुसाफ़िरों का ध्यान खींचा। एक दोस्त ने कहा, देशी स्त्रियों की स्वाधीनता की आलोचना में बस का किराया खर्च नहीं किया जा सकता।

दूसरा बोला, कंकर, सैलून से दाढ़ी बनवा सकता था, और एक जोड़ धुला कुरता धोती होने से तेरी शकल काम की बन सकती थी !

कंकर बोला, हिश्, देशी लड़कियाँ और फिर उनकी पसन्द ! आदमी होना ही काफ़ी है।

जब वे सब ऐलबर्ट हाल में पहुँचे तो साढ़े छः बज गये थे। भीड़ काफ़ी थी। लाल कपड़े पर रूई के हरफ़ों से लिख कर श्रोताओं को आकर्षित किया गया था। दो एक युवती वालंटियरों को खड़ा कर दर्शक और श्रोताओं की संख्या बढ़ाई गयी थी। विषय के महत्त्व की अपेक्षा सशरीर स्त्रियों का आकर्षण बाबुओं और छात्रों में बहुत था।

मित्र-मण्डली ने बहुत सी भीड़ ठेलठाल कर एक स्थान पर गोल बाँध कर अड्डा जमाया। बहुतेरे उनका सहज हास परिहास और फुसफुसाहट देख कर आपस में फुसफुस करने लगे। एक वक्ता भाषण कर रहे थे,— सभा में स्त्रियों की संख्या अधिक होने के लिये लोगों का आग्रह और उत्तेजना बढ़ रही थी। उनके भाषण में सुन्दर परिहास और युक्तियों की असारता रहने के कारण लोग बीच बीच में 'सुनिये, सुनिये' चिल्ला उठते थे। उनके बैठने के बाद एक प्रवीण सज्जन उठ खड़े हुए। उनका गला साफ़ था, भाषण पानी की तरह तरल, उसमें आरंभ से अन्त तक उपदेश रहने के कारण सभापति महोदय ने आहिस्ता से अनुरोध किया, जल्दी समाप्त करें। उसके बाद एक महिला उठी। उम्र चालीस से पैंसठ के बीच होगी। भीषण रूप मे स्थूल अंग। साज-बाज मे वे अठारह बरस की युवती बनी थीं, शृंगार में साधना बोस की तरह, चाल-ढाल में मिसेज़ राय, भाषण में दैनिक अखबार का सम्पादकीय लेख। मित्र मंडली हँसते हँसते लोटपोट हो गयी। उसके बाद एक एक कर किराये के वक्ताओं का दल आने लगा—जिनके भाषण पर महसूल नहीं लगता, भाषण उनका पेशा ही है। जो जूट की खेती, स्त्री हरण, हिन्दू सभा, हरिजन, वेदान्त धर्म, म्यूनिसिपल निर्वाचन—आदि विषयों पर समान वेग से भाषण दे सकते थे, जो सवेरे उठ कर पहले दिन की सब बातें ही भूल जाते।

सबके बाद मे सभापति महोदय तालियों की गड़गड़ाहट के बाद बोले, उपस्थित सज्जनो तथा महिलाओ, मेरे समान अयोग्य व्यक्ति को सभापति चुन कर—वग़ैरः वग़ैरः। मेरा वक्तव्य मामूली है, बहुत देर आपका धैर्य— इत्यादि। आज की इस सभा में जिन विद्वानों और विचक्षण वक्ताओं ने अपनी स्वभाव-सुलभ मधुर भाषा में आपके सामने जो भाषण दिये हैं, मैं उनकी तुलना में अत्यन्त नगण्य हूँ, क्योंकि—आदि, आदि। मेरे भाषण के पहले अगर कोई और भी कुछ बोलना चाहें तो मैं ख़ुशी से—

इसी वक़्त कंकर उठा और आगे बढ़ कर मंच पर आ खड़ा हुआ।

बोला, आपकी अनुमति से यदि छात्रों की ओर से कुछ निवेदन करूँ तो आशा है क्षमा करेंगे।

कहिये कहिये—

बोलो बोलो—

सब तरह की बातें सुन लें—

कहाँ से उठ खड़े हुए भाई ?

हाथ भर के बाले मियाँ सवा हाथ—

तुम्हारा नाम क्या है ?

हिम्मत तो कम नहीं है।

कंकर नाटकीय ढंग से बोलने लगा, आपसे मेहरबानी करके सुनने के लिये नहीं कहूँगा, ज़बरदस्ती सुनाऊँगा। जिन्होंने पहले ही तमाशा और मज़ाक़ सह लिया है उन्हें सब स्वीकार ही करना पड़ेगा।

उसके ज़ोर से चिल्लाने से सभा स्तब्ध हो गयी। कंकर ने एक और वार किया। बोला, माँ बहिनों के बारे में तर्क-वितर्क में मज़ाक़ करने में ही जो बड़ी बात समझते हैं उनसे क्या कहूँ ? ऊँची शिक्षा के साथ अच्छी बुद्धि का सम्पर्क कम ही होता है—आधुनिक समय में इसी का सबूत लेकर क्या घर लौटना होगा ?

हियर, हियर

आधुनिक उच्च शिक्षा ने लोगों के मन में गंभीर संशयवाद फैला दिया है, मानव के प्रति मानव घृणा करता है, समाज के रक्त में ईर्ष्या और अविश्वास का विष फैल गया है, स्वेच्छाचारी प्रभुत्व का प्रलोभन घर कर गया है। किराये के टट्टू जो भी कहें, मैं तो यही कहूँगा कि आधुनिक शिक्षा ने हमें निर्मल नहीं किया है, बल्कि बहुत सी नदियों की बाढ़ के एकत्रित जल में मानो एक घातक व्याधि फैला दी हो—

हियर, हियर—

मानव कल्याण के सम्बन्ध में विचार करने की जो सहज प्राचीन पद्धति

थी उसे अस्वीकार करने की, उस पर अश्रद्धा करने की एक प्रबल स्पर्द्धा उठ खड़ी हुई है। जिस दिन से पृथ्वी पर अन्तर्जातीय शब्द पैदा हुआ उसी दिन से मूढ़ उन्मत्त जातीयता के नाम से निर्लज्ज साम्प्रदायिकता दिखायी पड़ने लगी—इसका नतीजा हुआ विश्वव्यापी प्रलय। प्रलय के माने विप्लव, विप्लव की लौ देश देश में, घर घर मे जलेगी और सब रक्त से लाल हो जायगा।

क्या बक रहे हैं हज़रत, सेडिशन है, राजद्रोह !

आज उसी विप्लव की शिखा के प्रकाश में सब को सोचना पड़ेगा। मैं निर्भयता से कह सकता हूँ कि आधुनिक शिक्षा के साथ स्त्रियों का सम्पर्क बहुत कम है। उनके समीप पैसा पैदा करनेवाली शिक्षा का कोई काम नहीं, वे लड़कों के योग्य बनेंगी, शेर के बच्चों की माँ होने की योग्यता खोयेंगी।

हियर, हियर—

इस देश में स्त्री-स्वाधीनता का अर्थ है कल्पित अपवाद और कलंक सिर पर लेकर दर दर घूमते फिरना, बदनामी के कलंक से उनकी ज़िन्दगी व्यंग से जर्जर हो जायगी। स्त्रियों के कलंक का हम अधिक विश्वास करते हैं, आसानी से विश्वास कर लेते हैं, जल्दी विश्वास कर लेते हैं। काव्य में, साहित्य में, अखबारों में स्त्रियों के प्रति हम सम्मान प्रकट करते रहते हैं पर वास्तविक जीवन में बेशर्मी के साथ उनका मज़ाक़ उड़ाते हैं।

इसी समय श्रोताओं में से एक युवती उठ खड़ी हुई। उसने गर्दन उठा कर ऊँचे स्वर से कहा, On a point of order, Mr. President—

श्रोताओं और दर्शकों की नज़र घूमी। उस निस्तब्ध सभा में मंच के ऊपर खड़े कंकर ने विस्मय से देखा, बड़ा सुन्दर ठाठ-बाट किये, कानों में झुमके पहने मीनाक्षी खड़ी है। चेहरे पर हँसी का भाव, आँखों में अपरूप मादकता, सर्वाङ्ग तरंगित, कंठ में वीणावादिनी का संगीत, दोनों

निरावरण बाहुओं के संचालन पर श्रोताओं की नज़र पड़ रही है। काली रेशमी साड़ी पर रुपहला किनारा है, मानो अंधकार में विद्युत् का विचित्र प्रकाश हो।

सभापति महोदय बोले, कहिये आपको क्या कहना है ?

मीनाक्षी बोली, माननीय वक्ता की नाटकीय भाषा में असली बात खोज निकालना मुश्किल है। उनके मुँह से स्त्री-स्वाधीनता का अर्थ सुन कर हम स्तंभित हैं, इसके बाद वे और क्या क्या अनर्थ करना चाहते हैं वह जानना चाहती हूँ।—कह कर वह मुस्कराती हुई बैठ गयी।

कंकर बोला, सभापति महोदय, स्त्रियों के निकट स्वाधीनता का एक रूप होता है और पुरुषों के निकट दूसरा। स्त्रियों की शिक्षा और स्वाधीनता का अर्थ यदि यह है कि वे उपार्जन करना आरंभ करेंगी तो मैं कहूँगा कि बेकारों की संख्या और अधिक बढ़ाने से क्या फ़ायदा ?

मीनाक्षी फिर खट-से उठ खड़ी हुई। बोली, Question, Mr. President.

कहिये ?

माननीय वक्ता के मुँह से सीधा हिटलरी भाषण सुनने के लिये हम लोग यहाँ नहीं आये हैं।

ठीक ठीक—

सही बात है—

बैठ जाओ भाई—

Go on,

कैसी बेशरम औरत है।

कंकर बोला, स्त्रियाँ जीविका अर्जन करेंगी पर दुनिया के आगे पारस्परिक दायित्व स्वीकार नहीं करेंगी, इसी का नाम है स्त्रियों का स्वेच्छाचार। किसी के प्रति कर्तव्य बोध नहीं पर किसी से भी सुविधा प्राप्त करना चाहिये, इसी का नाम स्त्रीबुद्धि है। बेरोक स्वाधीनता अरण्य में है, पर मानव

समाज में स्वाधीनता फैलाते ही कर्तव्यबोध का दायित्व आ जाता है। पुरुष के हाथ से छिप कर सारी सुविधाएँ ले लेना और प्रकाश्य रूप से सभाओं में पुरुषों के विरुद्ध षड्यंत्र रचना—इसका नाम स्त्री-स्वाधीनता नहीं है। आज स्त्रियों के लिये कितनी ही सामाजिक और शिक्षण संस्थाएँ खुली हैं, पर उन सबके पीछे पुरुषों का संगठन है। स्त्रियों के स्वातंत्र्य-आंदोलन के पीछे पुरुषों का मस्तिष्क और तत्परता है। पुरुष पृथ्वी का सचालन करता है, समाज की सृष्टि करता है, साहित्य और संस्कृति पुरुष की प्रतिभा की ही आश्रित हैं, राजनीति और अर्थ-भांडार पुरुष के ही हाथों में है, उसी के हाथ में युद्ध और शांति हैं। पुरुष की प्रतिभा, कर्म, साधना, संग्राम और समाज की सृष्टि मे स्त्रियाँ उपकरण मात्र हैं—बस। अत्यन्त प्राचीन काल से इतिहास मे स्त्रियों की कहीं भी स्वतंत्र सत्ता नहीं है।

हियर हियर—

स्त्रियों की स्वाधीनता का अर्थ होता है भीड़ में से मन के मुताबिक़ ले लेना, और पुरुष की स्वाधीनता का अर्थ है घृणा से अपनी सृष्टि का अतिक्रमण करते रहना—

हियर हियर—वाह भाई वाह, जियो।

मीनाक्षी उठ खड़ी हुई। बोली, सभापति महोदय, माननीय वक्ता के इस अशिष्ट मन्तव्य के बाद हम लोगों का सभा छोड़ देना ही उचित है।

यह सुन कर सब लोग भरभरा कर उठ पड़े। सभापति महोदय 'आर्डर आर्डर' कह कर चीखने लगे। गड़बड़ और बढ़ गयी। श्रोता लोगों ने गिरोह बाँध कर दक्षयज्ञ शुरू कर दिया। दो-चार युवक मित्रों के साथ मारने के लिये कंकर की ओर दौड़े। स्त्रियों के प्रति असम्मान! असह्य! मीनाक्षी का अनुपम यौवन, अपरूप सौन्दर्य था—इसलिये दर्शकों और श्रोताओं के दल ने पागल होकर शत्रु के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी।

सभापति महोदय ने सभा भंग कर दी।

पुलिस—पुलिस—इन्क़लाब—ख़ून चाहिये।

मारो मारो—

ख़बरदार—

मातृ जाति की इन्सल्ट ?

स्त्रियों के दल में हलचल मच गयी। सब ने मीनाक्षी को प्रशंसा और और स्तुति से संतुष्ट करना चाहा। मीनाक्षी भीड़ में से निकल कर सीढ़ी से नीचे उतर कर आयी। क्रुद्ध भीड़ में से बड़ी मुश्किल से दोस्तों ने कंकर को पिछले दरवाज़े से उतार बाहर किया। तब तक पुलिस वाले आकर ठीक ठाक करने लगे।

आदमियों से रास्ता खचाखच भर गया। एकत्रित जनता चिल्ला उठी, वन्दे मातरम्!

विप्लव दीर्घजीवी हो।

इन्क़लाब ज़िन्दाबाद।

साम्राज्यवाद का नाश हो!

महात्मा गांधी की जय!

सुभाष बोस की जय।

वन्दे मातरम्।

पुलिस वालों की हिफ़ाज़त में एक ओर से मीनाक्षी और उसके प्रशंसक और दूसरी ओर से कंकर और उसके अंग-रक्षकों का झुण्ड रास्ते पर आ पहुँचा। मीनाक्षी के अनुरोध से एक भक्त ने टैक्सी बुलायी। टैक्सी आने पर उसका दरवाज़ा खोल दिया। तभी एकत्रित भीड़, प्रशंसकों, भक्तों एवं असंख्य स्त्री-पुरुषों को ठेलती हुई अनन्तयौवना-उर्वशी की भाँति अपूर्व ठाट-बाट से सजी मीनाक्षी ने आगे बढ़ कंकर का हाथ खींच-कर मुस्कराते हुए कहा, चलो, गाड़ी से चलेंगे।

कंकर के अंगरक्षक और मित्र मंडली आँखे फाड़े हतवाक् रह गये।

विशाल जनता विस्मय से स्तंभित, विमूढ़, हतचेतन और निर्वाक् थी। कंकर ने मुस्करा कर मीनाक्षी का हाथ पकड़ कर कहा, एकदम गद्य कविता ! चलो।

दोनो मोटर पर बैठ गये। मोटर चलने के पहले मीनाक्षी ने सिर निकाल, कानों के बुन्दे हिला, मुस्करा कर हाथ हिलाते हुए कहा, बन्दे मातरम् !

एक आदमी बोला, अजीब साज़िश है साहब ! हमें बेवकूफ़ बना अँगूठा दिखा कर वे लोग उड़ चले।

पर एकत्रित जनता मीनाक्षी की सुडौल सुन्दर बाहु की प्रेरणा से रस-गद्गद होकर चिल्ला उठी, बन्दे मातरम्, बन्दे मातरम्, बन्दे मातरम् ?

मोटर चलने लगी। कंकर बोला, तुम्हारी इस मारात्मक रसिकता में तो मेरे प्राण ही चले गये थे, मीनाक्षी ! हँस रही हो ?

मीनाक्षी ने दाहिने हाथ से कंकर का गला लिपटा आँख बन्द कर गुन-गुनाना शुरू किया।

घूँसा तान कर मुस्कराते हुए कंकर ने कहा, 'इन मूढ़ म्लान मूक मुखों में देनी होगी भाषा' पर माजरा क्या है कि तुम्हारा आज इस मीटिंग मे हठात् आविर्भाव हो गया ?

मीनाक्षी बोली, मैं जानती थी कि तुम आओगे।

जानती थीं ?

पता था कि जहाँ स्त्रियों का श्राद्ध हो वहाँ मंत्रपाठ करने तुम आओगे। जाने दो यह सब पर यह बताओ कि इतने दिनों तुम बिना नोटिस दिये क्यों लापता थे ?

कंकर बोला, तुम्हारे दुनियादार होने के दुःख से।

तो शायद तुमने सुना नहीं कि वह संसार ढहा दिया ? अब तो दासी को चरणों में स्थान दो !

तो सुधीर और कमल का क्या किया ?

मीनाक्षी बोली, बड़ी मुश्किल से चोटें लगा कर वह घोंसला तोड़ा। कमल रो कर बोला, कहाँ जाऊँ? मैंने कहा, चूल्हे में। बेवकूफ़, लगाम पकड़ना आता नहीं और गाड़ी में घोड़ा जोत लिया? प्रेम करना सीख लिया, ज़िम्मेदारी नहीं सीखी। किसी तरह ले जाकर लड़की को उसकी माँ के पास पहुँचा दिया।

फिर? काफ़ी इन्टरेस्टिंग लग रहा है—

फिर यथारीति कटे कान को बालों से छिपा कर दादी ने धो पोंछ कर घर में रख लिया। शरीर में कीचड़ लग जाने से आदमी तो बेकार नहीं हो जाता है?

और सुधीर?

वह आदमजात है, उसको कोई असुविधा नहीं। फिर मेरे एक चचा कारपोरेशन में बड़े अफ़सर हैं। उनके पास धरना देकर बोली, मेरे इस भाई को नौकरी देनी होगी। वह राज़ी हो गये। तीन महीने बाद सुधीर नौकरी पर बहाल हो जायगा।

उसके बाद?

उसके बाद शास्त्रानुसार मंत्रपाठ कर हल्दी लगा सात भाँवर फेर कर उन दोनों का ब्याह होगा। विधि-विधान के साथ ब्याह और कुमार कुमारी का मधु मिलन।

कंकर ने पूछा, कमल की माँ को कुछ पता नहीं चला? कम से कम कमल की शकल देख कर?

मीनाक्षी बोली, खतरे की कोई बात नहीं। कमल की माँ डाक्टर नहीं है, और मैं जो साथ थी? जार्जेट की साड़ी, आँखों में काजल, गालों मे रूज—इस सब से सजा कर कोरी लड़की पहुँचा दी। कह दिया, आपकी लड़की नौकरी की तलाश में आसाम गयी थी। इतनी सी लड़की परदेश में नौकरी करेगी, किसी भले बुरे के पाले पड़ जाय, भले घर की लड़की है—भला यह क्या बात हुई? माँ का दिल विश्वास करने में कुंठित न

हुआ। मैं अभय देकर कह आयी कि सुधीर नाम का मेरा एक भाई है, मैं कमल के साथ उसका सम्बन्ध करूँगी। माँ बोली, आप जो कुछ कहेंगी वह मुझे मंज़ूर है, आपने मेरा खोया हुआ धन लौटा दिया है।—और उधर सुधीर की बड़ी बहन सुरबाला मेरे साथ की पढ़ी हुई थी, उससे कह आयी, भाई, सुधीर के लिये जो लड़की मैंने ठीक की है वह सुशिक्षा और सच्चरित्र में तुझसे और मुझसे कहीं अच्छी है। इन्कार न करना, माँ बाप को राज़ी कर ले। सुरबाला राज़ी हो गयी।

कंकर बोला, मीनाक्षी, तुम लिखना-पढ़ना न सीख कर भी शादी ठीक करने के काम में खाने भर को कमा लेतीं। देखता हूँ कि पाप छिपाने में औरतों का मुक़ाबला नहीं।

धरमतल्ले के मोड़ से घूम कर गाड़ी चौरंगी के आगे चली। मीनाक्षी ने उसके गले से हाथ निकाल कर पूछा, कहाँ जाओगे?

चलो विक्टोरिया मेमोरियल के बग़ीचे में चलें।—कंकर ने प्रस्ताव किया।

मीनाक्षी बोली, अगर कालेज का कोई लड़का पीछे लगा तो?

अगर लगे तो आज की रात उसके लिये सार्थक समझो। हम लोगों का काण्ड देख घर जाकर कविता लिखेगा। और न हो तो गंगा की ओर चलो।

और पुलिस पीछे लगे तो?

तो गाड़ी छोड़ दें, यहीं उतरो।

यही अच्छा है। ए ड्राइवर रोको।

गाड़ी रुकने पर दोनों उतर पड़े। आँचल खोलकर मीनाक्षी ने किराया दे दिया। रात कम नहीं गुज़री थी, लगभग नौ बजे थे। इस रात में कहीं आश्रय पाने के लिये उन्हें कोई फ़िक्र नहीं लगती थी। दोनों ट्राम लाइन पर मैदान के किनारे किनारे चलने लगे। उम्र दोनों ही की खराब थी इसलिये उन्हें निर्जन में आनन्द मिलता था। उस दिन आकाश-

में शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा था। कलकत्ता शहर की वर्बरतापूर्ण प्रकाश व्यवस्था से सन्ध्या से चाँदनी दिखायी नहीं पड़ती। मैदान के किनारे चलने से प्रायः सिर पर खंड चन्द्रमा दृष्टिगोचर हुआ। उम्र उठती थी ही, इसलिये चलते चलते मीनाक्षी बोल उठी, दुनिया उनिया मुझे अच्छी नहीं लगती भाई। वह सब मैं नहीं समझती।

कंकर बोला, तो क्या खाक समझती हो?

मीनाक्षी बोली, अगर हमेशा तुम्हारे साथ इस तरह घूमती रह सकती। अरे, शायद ग़ुस्सा आ गया?

कंकर बोला, ग़ुस्सा नहीं, समझ लो कि हमारी जीवन-यात्रा का यही फल है, वह फल किसी दिन लगेगा नहीं, पेड़ सूख कर मर जायगा।

मीनाक्षी बोली, बुझौअल छोड़ो।

ककर बोला, हम दो रेगिस्तान के टुकड़े हैं।

हँसती हुई मीनाक्षी बोली, अच्छा मान लो हममें कहीं रोमान्स हो जाय?

रोमान्स होने पर भी रोमांच न होगा। चाँदनी की ओर ताकने का खेल भावुकता होता है। फूलों की गंध और दक्षिण हवा और मैदानों की ओर देख कर कवित्व उन्नीसवीं सदी का हवाई सेंटिमेंट है—यह सब आधुनिक नहीं है। चिरन्तन मनोवृत्तियों से उल्टे रास्ते चलना ही आजकल का बौद्धिक अभिजात्य है।

और प्रेम?

वह भी मिला है। फिज़ियालाजिकल सीक्रेशन, ग्लैंड से कल्पनाशक्ति के प्रभाव से एक प्रकार का जारक रस निकलता है, उसकी क्रिया स्नायुमंडल पर होती है, मस्तिष्क उसका संवाद वहन करता है, मन और बुद्धि के साथ उस संवाद की निष्पत्ति होती है—उसके बाद वाक्यों अथवा कार्यों द्वारा उसकी अभिव्यक्ति होती है। शारीरिक तेजस्विता रहने से वाक्य से अधिक कार्य में उसका अधिक प्रकटीकरण होता है।

मीनाक्षी मुस्कराकर बोली, चलो, सब समझ गयी।

कहाँ ? अरे यह किधर चलीं ? मतलब क्या है ?

बड़े गिरजे के सामने वाले बगीचे में, चलो अपने परिचित उसी पाम के पेड़ के तले। देखा है, कलकत्ते में होने पर भी वह जगह कैसी अनजान विदेश सी लगती है—जैसे कहीं बहुत दूर के प्रवास में किसी जनहीन मन्दिर के किनारे आ गये हों। चलो, पानी के किनारे ज़रा बैठें, बड़े अच्छे हो।

कंकर बोला, इसी का नाम होता है औरत। अभिसार की गंध पाते ही तुम लोग पागल हो उठती हो। पर मोहमुद्गर पास ही है। पुलिस का फन्दा नहीं दिखायी पड़ता ? वह देखो बरगद के पेड़ के नीचे वह रोशनी जलाये तुलसीदास को लेकर बैठे हैं।

मीनाक्षी बोली, पर याद रखो, औरतों की हिसाबी बुद्धि बड़ी पक्की होती है। हम तुम दोनों ही बालिग़ हैं। पकड़े जाने पर अँगूठा दिखा कर छुट जायँगे।

अगर व्यभिचार का अभियोग लगे ?

कुमारी के साथ व्यभिचार, वह तो पारस होती है। पर इतना ही सावधान रहना काफ़ी होगा कि कहीं 'पब्लिक नुइसेंस ऐक्ट' में न आ जायँ। पर उसका भी इन्तज़ाम पल्ले में बँधा है—रुपया ! चलो।

कंकर बोला, एक ओर थाना, दूसरी ओर अस्पताल, जगह निरापद है, फिर और शक की क्या गुंजायश। उस पर भी उत्तर में खीष्ट का उपासना मन्दिर है। सरोवर के जल में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब पड़ रहा है। पश्चिम में विक्टोरिया का स्मृतिसौध है, सर पर पाम के पत्तों की सरसराहट, बे-घोसले के पक्षियों का बीच बीच मे आर्तनाद। उसके साथ मीनाक्षी ने योग दिया है, दूर चौरंगी पर नगर का स्तिमित कोलाहल है। मोटरों का अस्पष्ट हार्न, दक्षिण में तारकोल के रास्तों पर कभी कभी फिटन के घोड़ों के टापों की आवाज़—कंकर हँसकर बोला, ऐसे एक गोपनीय

स्थान में दो शिक्षित युवक युवती कम से कम कोई गंदा काम नहीं कर सकते। क्यों ?

मीनाक्षी बोली, असम्भव।

कंकर बोला, तब यहाँ प्रेमी प्रेमिका क्यों नहीं आते ?

उसी फंदे के डर से। उसके सिवा सामने धर्म मन्दिर है,—इधर अंग्रेज़ों की बस्ती, शराब पिये गोरों का डर, गुंडों का उपद्रव—हजार कुछ हो हैं तो फिर भी देशी लड़के लड़की !

कंकर बोला, घास पर ओस पड़ी गयी है,—आओ इस बेंच पर बैठ जायँ।

मीनाक्षी ने कहा, नहीं अस्पष्ट होना चाहती हूँ। और आगे उस पाम के पेड़ के नीचे बढ़ चलो, पानी में पैर लटका कर बैठेंगे। आज नीलाम्बरी पहन कर आयी हूँ, ज्योत्स्ना और अन्धकार में डुबकी लगाने के लिये।

यानी आत्महत्या करना चाहती हो ?

उससे भी बड़ा काम है। तुम्हारी तरह के निरीश्वरवादी, निर्भय विप्लवी के साथ प्राणों का सम्पर्क स्थापित करूँगी। जिस प्रकार तुम एकान्त आग्रह से खींच सकते हो, उसी तरह अद्भुत विचारों में छोड़ कर निर्मम अवहेलना में डाल देना जानते हो। संकट तुम मानते नहीं, दायित्व तुम जानते नहीं—तुम्हारे भयानक आलिंगन में केवल सर्वनाश के आनन्द में सौंप देना पड़ता है।

कंकर बोला, मैं जो नहीं हुआ वही मुझे क्यों कहती हो ? अपने मन के मुताबिक समझना शायद अच्छा लगता है ?

मीनाक्षी बोली, नहीं मैं जानती हूँ तुम यही हो। यह भी जानती हूँ कि तुम केवल रुद्र नहीं हो—तुम मिले-जुले हो। यहाँ बैठो।

तुम तो लगता है जैसे किसी भयानक आयोजन में मतवाली हो रही हो ?—कंकर ने पूछा।

मीनाक्षी एक ललित कविता की अभिव्यंजना की भाँति हँस उठी।

मानो उसके मसृण सुन्दर दाँतों की पंक्ति में ज्योत्स्ना साकार हो उठी। बोली, भयानक नहीं, मधुर। मैं आग हूँ और तुम बारूद—तुम्हें जलने नहीं दूँगी, केवल पास रखूंगी। तुम निष्प्रयोजन क्यों जलोगे ? इतने कमज़ोर तो तुम नहीं हो ? संग्राम के भीषण आयोजन में मैं तुम्हें व्यवहार करना चाहती हूँ। तुम इस नवीन युग के प्रतीक हो, तुम आधुनिक जीवन के समस्त असन्तोष के पुंजीभूत स्वरूप हो।

और तुम ?

मैं ? मैं तुम्हारे पंजर की एक हड्डी हूँ। ठीक से देखो। मेरी ही आँखों में तुम्हारा दूरस्थ परिचय मिलता है, मैं ही तुम्हारे अन्दर का मानवीय अंश हूँ। मानव एक ही है, तुम उसके मस्तिष्क हो, मैं उसका हृदय हूँ ?—मीनाक्षी कहने लगी, मुझे यदि अस्वीकार करोगे तो तुम्हारा ध्वंस होगा, मैं यदि तुम्हारी अवहेलना करूँगी तो मेरा सारा जीवन विडम्बित होगा।

कंकर बोला, तो आओ एक सगुन निकालें, दोनों भविष्य की तैयारी करें। पता लगे कि दोनों क्या चाहते हैं।

मीनाक्षी बोली, नहीं, यह न होगा। तुम जादूगर हो, जिधर से तुमको बाँधूँगी उधर से ही तुम गिरह छुड़ा लोगे। सगुन निकालने की ज़रूरत नहीं है। हम भविष्य का पता क्यों लगायें, वर्तमान को क्यों मानें ? भविष्य तो उनके लिये है जो जीना चाहते हैं। हम लोगों के लिये इस सामान्य पृथ्वी पर स्थान कहाँ है ? कुछ छोड़ जाना नहीं चाहते, कुछ ले जाने का दावा नहीं करते। जब तक डाल पर रहेंगे प्राणों की गन्ध छोड़ते रहेंगे, जब झर जायेंगे तो किसी को पता न चलेगा।

कंकर ने सहसा हँस कर पूछा, मीनाक्षी ब्याह करने का मन नहीं होता ?

मीनाक्षी बोली, मुझे छोड़ कर देश भर की सारी लड़कियाँ ब्याह करें, क्योंकि ऐसी लड़की दिखायी नहीं पड़ती जो ब्याह करना न चाहे। ब्याह ही औरतों की चरम कल्पना रहती है, उसके सिवा उनका अस्तित्व ही नहीं।

पर मैं उनसे ऊपर हूँ ! ब्याह करते ही मुझे अस्वाभाविक जीवन यापन करना पड़ेगा, वह मुझसे न हो सकेगा, कंकर।

पर यदि मनमुताबिक वर हो तो ? मान लो—

मीनाक्षी बोली, जिसने पैरों में बेड़ियाँ डाल दीं वह मनमुताबिक होगा ? वह तो सोने के पिंजड़े मे बन्द कर बोलियाँ सिखाएगा। प्रेम के बदले में चरण सेवा का कर्त्तव्य। कंकर तुम मुझे धोखे में न डालो।

कंकर बोला मीनाक्षी, तुम्हारे बारे मे दोस्तों से कहा था। उन्हें विश्वास नहीं हुआ।

मीनाक्षी मुस्करा कर बोली, वे क्या कहते हैं ?

बोले, ऐसी लड़की इस देश में तो है नहीं, तुम्हारी कहानी केवल कहानी ही है, साहित्यिक अतिशयोक्ति।

मीनाक्षी बोली, याद है मैने सुव्रत से जब तुम्हारी बात कही थी तो उसके भी मुँह पर सन्देह के चिह्न दिखायी पड़े थे। उसने सोचा था औरतों की कल्पना की अतिशयता ! वह पार्थिवता को ही जानता है प्राण को जानना नहीं चाहता।

कंकर ने पूछा, तुम कैसा वर पसन्द कर सकती हो, बोलो।

मीनाक्षी बोली, पास लाकर खड़ा करने से कह सकती हूँ। अच्छा पहले तुम ही बताओ कैसी बहू चाहते हो ?

बहू ? बात तो नयी है, रोमांचकर। मैं विवाहित हूँ, बहू पास है, रात में साथ साथ सोते हैं; क़ायदे के मुताबिक़ प्रेम की बातें होती हैं, कोई निन्दा नहीं करता, कोई अपवाद की रट नहीं लगाता—एक ऐसा जीव जिसकी देह से मेरी देह का कोई मेल नहीं, जिसको छूने से अद्भुत आनन्द, जिसे देखने से अद्भुत चांचल्य हो—ऐसी एक बहू ! रोमांचकर ! सोच नहीं सकता कि वह मेरे लिये दिन भर सोचा करती है, सोच नहीं सकता कि उसके कपाल में मेरा ही रक्त संकेत है, यह कल्पना नहीं कर सकता कि मेरे ही अस्तित्व का चिह्न उसके सारे अंगों में है, मेरी मृत्यु से ही जो

सब आभरणों से हीन हो जायगी। अद्भुत, मीनाक्षी, रोमांचकारक!—बहू? बहू कौन? बहू क्या?

तुम्हारी बहू हज़रत।—मीनाक्षी ने उसकी ओर मुँह किया।

उसके बारे में सोच नहीं सकता। कंकर बोला, ऐसी औरत धरती पर है? ऐसी औरत स्वर्ग या पाताल में है? प्रेम सोच सकता हूँ। तुम्हें सोच सकता हूँ, देवी अथवा दानवी भी सोच सकता हूँ। पर बहू की कल्पना नहीं कर सकता। तुम अपना वर सोच सकती हो?

हाँ जी, सोच सकती हूँ।—मीनाक्षी बोली, पान-सुपारी खाये, ताश खेलने वाला, अद्धी का कुरता पहने,—सोने की अँगूठी, रिस्टवाच, मोती के बटन, मोटा थुलथुल, हँसमुख, युवक, धनाढ्य, स्त्रीगर्वी, प्रमोदप्रिय, स्त्री को माँ कहनेवाला, झुटपुटे घर आ जाय,—जिसे मसृण, चिक्कण, निपुण कहा जाय। ऐसा मोहन वर हो।

कंकर हँस कर बोला, पर ऐसा लड़का तो तुम्हें पसन्द नहीं है, मीनाक्षी।

मीनाक्षी बोली, पसन्द न होने से भी काम चलेगा, वर होने से ही ख़ुशी होगी। वर होगा निरापद, कर्मठ, जिसके खोने की आशंका नहीं, भागने की परवाह नहीं, मनाने का झंझट नहीं—जो प्रत्यक्ष, सत्य, जाग्रत, अति परिचित हो।

पर वह प्यार न करे तो?

कोई हर्ज नहीं, जिसकी पकड़ में न आऊँगी उसके हाथ बढ़ाने से कोई फायदा नहीं। घर गाड़ी होगी, रुपया होगा, गहना होगा,—और चाहिये क्या प्यार? उससे तो अधिक ज़रूरत होगी खाना पकाने वाले ब्राह्मण की, खिदमत करने वाली नौकरानी की, मुहल्ले के लोगों की ईर्ष्या और आत्मीय स्वजनों के आँखों की पीड़ा की। प्यार न मिलेगा नरम बिस्तर तो मिलेगा, कई बाल बच्चे मिलेंगे, गृहस्थी में घरनी का पद मिलेगा, आँखों को चकाचौंध कर देने वाली साड़ी मिलेगी, लोगों में और समाज में

आदर मिलेगा। यह सब पाने के बाद भी अगर प्यार न मिले तो हर्ज नहीं, वर की चरणसेवा की बख्शीश पाकर ही आनन्दित रहूँगी।

कंकर बोला, तो अब मैं निडर होकर कह सकता हूँ कि मुझे कैसी बहू चाहिये।

मीनाक्षी बोली, कहो, उस गिरजे की ओर देख कर सच सच कहो, मेरे बदन को छू कर कहो—

वही कहूँगा।—कंकर कहने लगा, अज्ञात नदी से नौका खेकर अपरिचिता आयेगी—जिसकी आँखों में भीरुता की करुणा होगी, चरणचाप में मेरे हृत्पिण्ड का शब्द मिलेगा, जिसकी छाती की गंध से मन में करुण सिहरन हो जायगी। वही मेरी बहू होगी। प्रणय से अनभिज्ञ, बातचीत में निर्बोध, भाषा में सरल, स्वभाव से परमुखापेक्षी, एकान्त ग्राम का प्रभाव जिसके आँचल में हो, जिसके बालों में वनस्पति की छाया हो, जिसके लज्जालु आलिंगन में रोमांचित मिट्टी बोल उठे। उसे आँधी कहो, विद्रोह कहो, उत्ताप या उत्तेजना कहो, आधुनिक समय का पागलपन कहो,—यह सब उसे अज्ञात हैं। वही मेरी बहू है,—प्रसन्न, प्रशान्त, सुशीतल, निर्मल, अर्वाचीन।

मीनाक्षी ने पूछा, ऐसी बहू क्यों चाहते हो?

चाँदनी की ओर देख कर कंकर बोला, मैं अपने से उल्टा चाहता हूँ। मीनाक्षी, सोच लो विद्रोही के साथ विद्रोहिणी का मिलना बड़ा भयंकर होगा। दो अशान्तों के एक हो जाने पर और चाहे जो हो शान्ति नहीं होगी। घर में विप्लव और बाहर भी तूफ़ान—फिर आश्रय कहाँ मिलेगा? बाढ़ की तरंगों का आलिंगन कर उस आनन्द में मैं चिर दिन डूब कर तैरता रह सकता हूँ, उसकी अपरूप महिमा के सर्वग्रासी रूप पर मुग्ध हो सकता हूँ, पर यदि वह मेरे शयन-कक्ष में घुस पड़े तो मैं उसे मुसीबत समझूँगा। भयंकरी काली जब रणरंगिनी रूप धारण कर संहार के लिये निकल पड़ीं

तो महादेव ने उनका साथ नहीं दिया, बल्कि देवादिदेव आकर सर्वनाशिनी के पैरों तले लोट गये थे—शान्तरूप और प्रसन्नचित्त होकर। इसी में सृष्टि रही। इसी कारण आज आवाज़ उठायी गयी है कि हिंसा का प्रतिरोध अहिंसा से करना होगा, विप्लववाद का सामना विश्वप्रेम से करना होगा। ज़रा सोचो तो कि पति पत्नी दोनों ही व्यभिचारी हों तो उस घर का क्या हाल होगा ?

मीनाक्षी बोली, उल्टा सोचते हो। पति अत्यन्त भला स्त्री अत्यन्त चरित्रवती,—उस घर का हाल सोचो ?

कंकर ने पूछा, दोनों में झगड़ा रहता है ?

बिलकुल नहीं।

एक दूसरे से प्रेम करते हैं ?

ओः, बिलकुल अभिन्नहृदय। मिलन में संसार को भूल जाते हैं, वियोग मे निखिलमय हो जाते हैं।

कंकर हँस कर बोला, पता नहीं वे किस देश में रहते हैं। जहाँ कहीं भी हों उन्हें नमस्कार है। पर याद रखो मीनाक्षी, जिस प्रेम में संशय, भय, उद्वेग, छिपाचोरी, संघात, विवाद, छाया और प्रकाश—यह सब नहीं है, वह प्रेम बिल्कुल निरामिष है, उस पर श्रद्धा की जा सकती है, उसके चरणों की धूलि भी ले सकता हूँ, पर उसमें आनन्द नहीं मिल सकता। मीनाक्षी, इसी कारण से केवल पति-पत्नी के प्रेम पर महान् कला की सृष्टि नहीं हुई, अनघड़ सात्त्विक प्रेम में रंगों का वैचित्र्य बहुत कम है, उसमें केवल एक रंग है—वह रंग है गेरुआ और वह केवल श्रद्धा के योग्य है।

मीनाक्षी बोली, और राम और सीता की कथा ? पृथ्वी के रससाहित्य में रामायण सर्वोत्तम प्रेमकथा है, यह तुम नहीं मानते ?

कंकर बोला, मानता हूँ।

पर वह भी तो पति पत्नी थे, दाम्पत्य प्रेम का महत्तम आदर्श।

मानता हूँ।

सतीत्व और आदर्श-प्रेम की जयगाथा।

निस्सन्देह।

तब ?

कंकर बोला, आँख रहे तो दिखायी पड़ेगा कि रामायण की कहानी तीन लोगों से सरस बनी है, कैकेयी, रावण और दुर्मुख। अगर वाल्मीकि के हाथों इन तीन चरित्रों की सृष्टि न हुई होती तो कहानी फीकी हो जाती। इन्होंने ही रामायण को मधुर बना दिया। रामायण में केवल राम और सीता का प्रेम ही नहीं है,—उनके प्रेम मे जो संशय दोलायमान है, विपर्यय की जो तरंग है, औत्सुक्य का जो उद्वेग है—उनसे ही पाठक का मन आप्लुत रहता है। जीवन के वैचित्र्य का एक विपुल समारोह पौराणिक काल की विशाल पृष्ठभूमि, प्रेम से भी जो बड़ा है, प्रेम के लिये आत्मत्याग,—वही रामायण का महान् परिचय है। यहाँ महान् कला की सृष्टि दाम्पत्य सम्बन्ध को लेकर नहीं हुई है—वाल्मीकि की सृष्टि इतनी छोटी नहीं, यहाँ एक महान् प्रेम की अभिव्यंजना की सृष्टि हुई है। इसी लिये रामचन्द्र और सीता की गृहकलह का परिचय और प्रत्यक्ष निश्चिन्त प्रेमालाप को रामायण में कहीं स्थान नहीं मिला—पर आँधी तूफ़ान में, दुःख संकट में, छाया और प्रकाश में नर-नारी का सम्बन्ध जहाँ विपन्न, व्यथित, क्षुब्ध है—उसी का इतिहास इस महाकाव्य के पन्ने पन्ने में खिल उठा है।

मीनाक्षी बोली, फिर भी पति पत्नी तो हैं।

कंकर बोला, नहीं, मानव और मानवी।

मीनाक्षी ने ज़िद की, फिर भी कहानी तो पति पत्नी की है।

कंकर ने कहा, नहीं, कहानी विरह मिलन की है।

सरोवर में नीचे की ओर प्रतिबिम्बित चन्द्रमा की ओर देखते हुए मीनाक्षी बहुत देर तक बैठी रही। चोटी ढीली रहने के कारण उसके बाल कंकर के हाथ पर फैल गये। बाल रूखे थे, फिर भी उनमें एक विचित्र

घनी गन्ध वसी थी—वह गंध केवल स्त्रियों की बिखरी केशराशि में ही मिलती है।

मीनाक्षी बोली, अपना हाथ हटाओ।

क्यों ?

कोई आ सकता है।

आने दो।

देख कर गालियाँ दे सकता है।

क्यों ?

कहेगा कि एक पक्षाघातग्रस्त युवक एक चंचल रमणी का अपमान कर रहा है।

पक्षाघातग्रस्त कैसे ?

तुम्हारा हाथ बहुत निश्चल है, बहुत संयत, ऐसा हाथ निभृतचारिणी लड़की के लिये सुखदायक नहीं। हटाओ।

कंकर बोला, समझा, पर अपमान कहाँ किया ?

स्त्रियों को आनन्द से वंचित करना ही अपमान करना होता है। याद नहीं है देवव्रत ने अम्बा का अपमान किया था ! अम्बा छिप कर प्रणय निवेदन करने गयी थी, देवव्रत ने ब्रह्मचर्य पालन की युक्ति से प्रत्युत्तर दिया था।

कंकर कुछ देर चुप रहा, तब बोला, बहुत दिन दोनों अकेले अकेले रहे थे, आज तुम्हारी यह कुबुद्धि कैसे हुई ! आज तुम्हारे रक्त में यह नशा कहाँ से जाग उठा, मीनाक्षी ?

मीनाक्षी बोली, माफ़ करो। तुम्हारे निकट रहने से मेरे हृदय के किनारे खसने लगते हैं, तुम्हारे शरीर की गन्ध से एक अद्भुत चंचलता आ जाती है—मन होता है कि दूरस्थ अस्थिरता में एकदम मत्त हो जाय।

कंकर ने पूछा, क्यों ?

तुम पुरुष हो इस लिये नहीं, तुम काँकर हो इसी लिये। मेरी उम्र की

लड़की किसी सुन्दर लड़के को पाकर .खुश हो जाती, मैंने हज़ारों लड़कों को अपनी आँखों के आगे गुज़रते देखा, पर तुम्हें बिना देखे चैन नहीं। तुम्हें बिना देखे इतने दिनों तक कैसे ज़िन्दा रही यही सोचती हूँ।

क्यों?—कंकर ने फिर पूछा।

मीनाक्षी बोली, मेरे अहंकार की सीमा नहीं, मैं अत्यन्त उद्धत, दुर्विनीत, स्पर्द्धित हूँ,—कभी भी कहीं सिर नहीं झुकाती। तुम्हारे आगे छोटी हो गई हूँ, अत्यन्त सामान्य हो गयी हूँ। तुमने पैरों पर झुका दिया।

कंकर बोला, ऐसा है तो मैं चला जाऊँ?

मीनाक्षी बोली, चले जाते तो अच्छा ही होता, रीढ़ सीधी कर पृथ्वी का शासन कर सकती, पर तुमने सब नष्ट कर दिया।

तुम्हारे चंगुल से इतने दिनों तक बचा ही रहा।

अजी नहीं, बचने न दूँगी।—मीनाक्षी धीरे से बोली, तुम्हारे निकट छोटी होने से ही तुम्हें प्यार करती हूँ। मेरा सब कुछ नष्ट कर तुमने मेरा सारा अहंकार चूर कर दिया, इसी लिये तुम इतने प्रिय हो। मेरी छाती पर तुम पैर रखे रहो। मेरे लिये वही .खुशी की बात है।

कंकर बोला, मीनाक्षी, तुम्हारे मुँह से वही अति प्राचीन स्त्री बोल रही है, यह न भूलना।

मीनाक्षी बोली, कोई बात नहीं, तुम्हें पाने पर कष्ट नहीं होता, खोने पर भी हृदय नहीं दुखेगा। अरे पाखंडी, सोचा होगा कि उस प्राचीन स्त्री की तरह ही तुम्हें समर्पण कर काम बना लूँगी? कभी नहीं। मैं तुम्हारे पैरों के नीचे दब कर मरना जानती हूँ, पर हाथ फैला कर उस प्राचीन काल की भीख नहीं माँगूँगी।

उसके माने?

माने, तुम्हें लेकर घर नहीं बनाऊँगी। जाना चाहो चले जाओ। हँसते हुए बिदा दूँगी, अश्रुजल से अभ्यर्थना करूँगी। सोचा होगा वंचना के दुःख से रोऊँगी, सोचा होगा व्यर्थता के डर से तुम्हारे पैरों पड़ूँगी?—

मीनाक्षी की दोनों आँखें चमकने लगीं; बोली, तुम्हारे व्यक्तित्व के निकट यदि छोटा होना ही पड़े तो उसमें गौरव बोध करूँगी, पर प्रकृति दोष से अपने को छोटा नहीं कर सकूँगी। मैं विप्लववादिनी हूँ—मन, वचन, कर्म, सब में। मुझे वर की चाह नहीं, सन्तान की इच्छा नहीं, सुख को मैं घृणा से त्याग दूँगी, मैं बन्धनों मे नहीं बँधूँगी—मैं विप्लववादिनी हूँ।

कंकर बोला, तो आज तुम्हारा भावान्तर कैसे हो गया ?

मीनाक्षी हँसी, बहुत चालाक हो, कौशल से सुनना चाहते हो ? अच्छा, मैं सहज ही स्वीकार कर लूँगी। मेरा यह नीलाम्बरी का आवरण उतार दो और उसी प्राचीन राधा को देख लो। स्वार्थ की ही बात सोची, आनन्द की बात मन मे न आयी ? मुझे क्या कमी थी, फिर भी किनारे तोड़ कर क्यों बह आयी ? किसने वंशी सुना दी ? किसने अभिसार की पुकार की ? माँ-बाप की क्यों परवाह नहीं की, कलंक से क्यों नहीं डरी, क्यों अन्धी होकर दौड़ पड़ी ? निष्ठुर, तुमने केवल मेरा भावान्तर ही देखा ? रतिरंग के उन्माद को ही आधुनिक युग बड़ा मानेगा और स्त्रियों के मन में जो दुर्गम अन्धकार की ओर अभिसार तृष्णा है क्या उसकी ओर आँख नहीं फेरेगा ?

पर विज्ञान कहता है—

पता है। मीनाक्षी बोली, फिर भी सुन लो कि पौरुष और बलिष्ठता में आयान घोप श्रीकृष्ण से कम नहीं थे, सूरत भी बड़ी अच्छी थी, स्त्रियों को ख़ुश करने के लायक़ उसका स्वास्थ्य भी काफ़ी था, रतिरंग के अध्यवसाय मे वह भी अक्लान्त था,—किन्तु राधा तो केवल रतिरंगिनी नहीं थीं, उनके कानों में वंशी का स्वर पहुँचता था, वही भीमपलासी और विहाग का आह्वान जो उनके प्राण सागर में तरंगें उठा देता था, उन्ही तरंगों के दोलन में रक्त कमल खिल उठता। काँकर, तुमने यौन विज्ञान की युक्तियों को ही देखा, पर देखा नहीं वह 'वन अँधियार भुजग-भय कत शत, पन्थ विपथ नहिं मान !' आज यदि मुझमें भावान्तर हो

जाता है तो क्या तुम केवल प्रकृति का दराड और बायोलॉजी की दोहाई देकर उसका अपमान करोगे, अभिसार व्याकुल वेदनाजन्य भय से उत्पन्न आनन्द की ओर क्या तुम्हारी दृष्टि नहीं जायगी ?

सहसा मुस्करा कर कंकर बोला, यह क्या, तुम्हारी आँखों में आँसू आ गये, मीनाक्षी ? छी छी तुम तो विप्लववादिनी हो ?

मीनाक्षी ने उसके पैरों पर सिर झुका दिया। कुछ देर बाद आर्द्र कंठ से बोली, अब चलो, रात हो गयी।

ग़ुस्सा हो गयीं मीनू ?

मीनाक्षी मुँह छिपा कर बोली, तुम सब समझ सकते हो, पर असली बात नहीं समझ सकते।

हँस कर कंकर बोला, Frailty, thy name is woman !

मुस्करा कर सिर उठाते हुए मीनाक्षी ने जवाब दिया, ye too Brute !

*

* *

निर्जन ज्योत्स्नामयी रात्रि, दक्षिण मृदु समीरण, निभृत जलाशय का तट—यह सब छोड़ कर जब वे जनाकीर्ण पथ पर आकर खड़े हुए तो उनका नशा दूर हुआ। पथ जगमगा रहा था, आकाश में तारा और ज्योत्स्ना उस प्रकाश में लुप्त हो रहे थे। वे मानो कल्पना के स्वप्नलोक से उतर कर खड़े हों।

मीनाक्षी उसके मुँह की ओर ताक कर हँसी। बोली, बचपन का वक्त काटना बुरा नहीं।

कंकर ने केवल हँस कर उसकी बात का जवाब दिया।

रात बहुत हो गयी,—चलो लौट चलें ? मीनाक्षी बोली।

कंकर ने कहा, फिर तुम्हारी वही लौटने की जल्दी। तुम अपने को पूरी तौर से एक रात को भी नहीं छोड़ सकतीं ?

कड़ी बात सुनने के लिये तुम्हारी तबियत रहती है, क्यों ? छोड़ सकती अगर यह नीलांबरी-भूषित आग की गुड़िया न होती। तुम्हारे ही लिये यह सिंगार लेकर घर से निकली थी, तुम्हारी ही दिलचस्पी का सामान, पर रास्ते के इस लोकारण्य को मुसीबत में मत डालो, मुझे शीघ्र ही आत्म-गोपन करने दो।

किन्तु यह तुम्हारा रूप का घमंड है।

नहीं। मीनाक्षी हँस कर बोली, घमंड चूर हो गया, क्योंकि ऐसे एकान्त में पाकर भी तुमने मेरा स्पर्श नहीं किया। किन्तु—किन्तु मैं यह सब किस तरह छिपाऊँ ? यह मुआ शरीर क़दम क़दम पर राहगीरों की मुसीबत होगा, उनकी मौत का फन्दा मेरी इस नीलाम्बरी के धागे धागे में गुँथा है—चलो, जल्दी चलो।

कहाँ जाओगी ?

वाह रे बहादुर। औरतों को गुमराह कर ला सकते हो और टौर देने के लिये भागते हो ? अरे रिक्शा, इधर आओ—जल्दी आओ—

रिक्शा के आते ही मीनाक्षी ने कहा, देर न करो, जल्दी बैठो, सामने का पर्दा गिरा दो। रिक्शा का घूँघट बड़े काम का है।

दोनो रिक्शे पर बैठ गये। सामने का पर्दा गिरा कर कंकर बोला, ज़रा सुनें तो कहाँ जायँगे ?

ठहरो, पहले ठीक से बैठ लें—हाँ। मालूम पड़ता है तुम कुछ मोटे हो गये हो, नहीं तो पहले तो इतनी कशमकश नहीं होती थी !

तुम्हारे मध्यदेश की परिधि भी तो कम नहीं है। दिल की ख़ुशी में मानो और फूल गयी हो।

मीनाक्षी ने कटाक्ष करते हुए कहा, पैतृक सम्पत्ति मिलने से और भी होती।—अच्छा हो चुका। ज़रा ठीक होकर बैठो, हाथ मेरे पीछे से घुमा लो, जैसे हाथ में माला लिपटी रहती है, हालत अनैतिक हो रही है, ख़ैरियत इतनी ही है कि पर्दा गिरा हुआ है।

कटाक्ष कर कंकर बोला, ठीक कह रही हो। लड़कों की दुर्नीति खुली सड़क पर होती है और औरतों की पर्दे की ओट।

चुटकी मत काटो। लड़के लँगोटी पहने रास्ते पर कीचड़ उछालते हैं। और औरतें घरों के अन्दर आँचल रँग कर छिपे छिपे होली खेलती हैं।— मीनाक्षी बोली, दुर्नीति दोनों ही हैं पर पहली में गन्दगी है दूसरे में रस। पुरुषों के खेल में मतवालापन है, और स्त्रियों के खेल में रस की तरगें मिलेंगी।

कंकर बोला, पहले में स्वास्थ्य की अधिकता है, और दूसरे में छिप कर चोरी की प्रवृत्ति। पहले में रणक्षेत्र में मृत्यु, दूसरे मे यक्ष्मा में क्षय हो जाना।

मीनाक्षी ने बात में बात मिलाई, पहले में अकृत्रिम पारुष का वीभत्स चीत्कार और दूसरे में मधुर कविता का अपरूप लावण्य।

रिक्शेवाले ने पूछा, किधर जायँगे ?

एकदम सीधे—

मीनाक्षी ने पूछा, बताओ तो किधर चलें ?

जिधर तुम्हारी मर्ज़ी हो ?

अगर नरक में चलूँ ?

वहाँ पहुँच कर उसे स्वर्ग बना दूँगा !

अगर जंगल चलूँ ?

वहाँ तपोवन की सृष्टि कर दूँगा।

मीनाक्षी ने फिर पूछा, अपने को मेरे हाथों छोड़ दोगे ?

कंकर ने आँखें बन्द कर कहा, बहुत पहले ही छोड़ दिया है।

मैं तुम्हें अच्छी लगती हूँ ?

'सखि की पूछसि अनुभव मोय।'

मीनाक्षी ने पूछा, बताओ तुम कहाँ जाना चाहते हो ?

कंकर नींद से भरे गले से बोला, कहा तो कि तुम जहाँ ले जाना चाहो।

घर क्यों नहीं चलना चाहते ?

घर बहुत छोटा है। उसमें मैं समा नहीं सकता।

मीनाक्षी बोली, काँकर, तुम्हारी यह बात सच नहीं है, मुझे रास्ते पर छोड़ कर तुम घर नहीं जाना चाहते। तुम्हारे जानने के लिये यह निवेदन है कि मैं अबला नहीं हूँ, मेरा घर तो घर घर मे है। यह देश अद्भुत है, इसमें अन्न और आश्रय का अभाव नहीं, यहाँ मनुष्य भूखा नहीं मर सकता।

तब भूखा मरता क्यों है ?

जो मरते हैं उन्होंने जीना नहीं सीखा। तुम यह क्यों सोचते हो कि तुम्हारे हाथों मेरा अन्न और आश्रय है, तुम्हारे हाथों मेरे जीने का सहारा है ?

कंकर ने उसके कंधे पर हाथ रख कर कहा, तुमने मेरा साथ छोड़ना सीखा है, जीना नहीं सीखा।

मीनाक्षी बोली, अच्छा तो है, धूमधाम में मर ही पाऊँ। मेरी आँखों में मृत्यु बड़ी लोभनीय है।

मृत्यु !

एक भयानक मृत्यु। उसकी पृष्ठभूमि यह भारतवर्ष होगा। जिसमें रुद्र का दण्ड मेरे सर पर पड़े और स्तब्ध विस्मित जनता मेरी मृत्यु की ओर ताकती रहे। मैं उसी मृत्यु की कामना करती हूँ काँकर।

काँकर बोला, यह कैसे संभव होगा ?

पता नहीं।—मीनाक्षी बोली, उस अनागत भीषण भविष्य का पता नहीं। केवल इतना जानती हूँ कि उस प्रबल भविष्य के हाथों गौरव सहित अपने को समर्पण कर सकूँ। पहले सोचा करती थी कि शायद वही मौत अच्छी है जिसे कोई न जाने, न सुने; जन-समारोह से दूर ख्यातिहीन परिचय-हीन सारे आभरणों से हीन होकर निश्चिह्न हो जाना ही शायद कवित्वमय मृत्यु है, किन्तु वह कल्पना अब छोड़ दी है। मृत्यु से भी जो बड़ी चीज़ है, महामरण—मैं उस मृत्यु को चाहती हूँ।

वह कैसी होती है ?—कंकर ने पूछा।

तुम्हारे कण्ठस्वर में विद्रूप है।—मीनाक्षी बोली, पर समझ रखो कि मैं लड़ते लड़ते मरना चाहती हूँ। तलवार के घाव से मेरे कपाल से रक्त बहेगा, आँखों से आग निकलेगी और सारे शरीर से श्रम की बूँदें निकलती होंगी। मेरे कण्ठ से ईश्वर का संवाद घोषित होगा, मेरी इस यौवनपूर्ण देह से देवत्व का प्रकाश निकलेगा, मेरा समस्त जीवन प्रदीप्त अग्निशिखा की भाँति महान् जनता का व्यूह भेदन करने के लिये निकल पड़ेगा। तुम मज़ाक़ उड़ा सकते हो काँकर,—तुम मेरे अन्तरंग मित्र हो, इसी लिये तुमने रतिरंगिनी को जाना है, रणरंगिनी की ओर नहीं देखा। रणस्थल में मेरी मौत होगी—यह मेरा सपना नहीं है, दिव्य दृष्टि है।

नींद भरे गले से कंकर बोला, मानो श्रद्धानन्द पार्क में कोई स्वदेशी भाषण सुन रहा हूँ!—महात्मा गांधी की जय! वन्दे मातरम्! इन्क़लाब ज़िन्दाबाद!

मीनाक्षी बोली, मुझे उसी श्रद्धानन्द पार्क में खड़ा कर दो। मैं कमज़ोरों के लिये रोऊँगी नहीं, उत्पीड़न के विरोध में कोई प्रतिवाद नहीं करूँगी, भूखे मेमनों के लिये भीख माँगने को आँचल नहीं फैलाऊँगी,—जिस ओर संग्राम है मैं उस ओर की पुकार करूँगी, जिधर बेख़ौफ़ मौत की महिमा है, जिधर विप्लव की रक्तशिखा ने आकाश को रंगीन कर डाला है। जो भीरु हैं, जो बेकार हैं, जो दुर्बल हैं, जिनकी जान घर में बसती हो, जो वञ्चित और उत्पीड़ित हों—मैं उनके कंकाल से अपना तेज़ हथियार तैयार करूँगी,—वही हथियार लेकर उस ओर प्रस्थान करूँगी जिधर देश का प्राण असीम असन्तोष से रोमांचित हो रहा हो। भूखों के मुँह से अन्न छीन लूँगी, आश्रित के घर में आग लगा दूँगी और दुर्बल का अन्तिम अवलम्ब नष्ट कर दूँगी—जिससे वे मौत का डर भूल सकें, भूल सकें कुत्सित जीवन-यात्रा की संकीर्णता, मिटा सकें जड़ता की ग्लानि—

ठहरो, मीनाक्षी!—रिक्शे के भीतर बैठ कर सेडिशन न करो, उससे

अच्छा अपने कंधे पर सर रख कर सोने दो। यह क्या, तुम काँप क्यों रही हो ?

मीनाक्षी बोली, माफ़ करो हठात् ज़रा जोश आ गया था।

कोई बात नहीं। अभी ठीक हो जायगा, स्थिर हो जाओ।

सिर बढ़ाकर मीनाक्षी बोली, बाँयें चलो, ओ रिक्शेवाले ?

कंकर बोला, अच्छा लगता है, रास्ता कभी खतम न हो। इसे पाँच रुपये देना, सारी रात लेकर घूमता रहे।

बिचारा, जैसे उसे मेहनत ही नहीं होती है ?

पैसे तो पायगा ?

मेहनत के मुक़ाबले में कितने मिलेंगे ?

कंकर बिगड़ कर बोला, इस बार शायद तुम कुली और मज़दूरों के लिये झगड़ा करोगी ?

मीनाक्षी बोली, उन्हें तुम आदमी नहीं समझना चाहते, पाँच रुपये देकर उसका ख़ून करोगे ?

तुम्हारी समवेदना उसके पेशे को नष्ट कर देगी। तुम्हारी दया से उसका नुक़सान हो जायगा। उसे वाजिब मेहनताना देने की बात है, उसकी मेहनत के लिये तुम्हारे रोने की बात नहीं है। मीनाक्षी, रिक्शेवाले के प्रति तुम्हारी मौखिक सहानुभूति गल्प के लिये उपयुक्त हो सकती है, कुर्सी मेज़ पर बैठ कर कुली मज़दूरों के लिये आँसू बहाने से प्रशंसा मिल सकती है। साम्यवाद का अनुचित प्रचार करने से नये साम्यवादियों के गले में मोटी माला चाहे पड़ जाय पर उससे रिक्शेवालों के मुँह के लिये अन्न नहीं जुटता। जो जीवन में आदर्श प्रतिष्ठित नहीं कर पाते, भाषण देकर ग़रीबों का दिल जीत लेना उनके लिये मुश्किल है। अगर पाँच रुपये कम लगें तो दस रुपये दे देना, पर हाय बेचारा कह कर उसकी गाड़ी न छुड़ा देना, उसे उसकी शक्ति के अनुसार चलने दो। तुम्हारी बेकार की भावु-

कता से उसका परिश्रम शायद बच जाय, पर दस रुपये पाने से उसका जो उपकार होता उससे वह वंचित हो जायगा।

मीनाक्षी बोली, अच्छा, उसे दस रुपये देकर चलो उतर चलें।

कंकर बोला, उसकी ग़रीबी का अपमान न करो। वह सम्मानपूर्वक मेहनत कर खाने को निकला है, तुम्हारी दया पाने के लिये नहीं निकला है। ज़्यादा मत देना, कम भी मत दो, ठीक दाम देने से वह तुम्हें धन्यवाद देगा। ज़्यादा देकर अगर उसके लालच को उत्तेजित करोगी तो वह सबसे ही माँगेगा और न पाने पर उसके जीवन में असन्तोष दिखाई देगा। उसका पेशा बिगड़ जायगा, जीवन में भीषण समस्या दृष्टिगत होगी। तुम्हारी सामान्य दया उसे अतल गड्ढे में ढकेल देगी। उचित मूल्य देना और पाना ही शायद सबसे बड़ा सामञ्जस्य है। इसको ठीक ही रहना चाहिये।

मीनाक्षी ने सब सुना। सुन कर हँसती हुई बोली, तुम्हारे विचार सब सही हैं पर निष्ठुर हैं। तुमने अपनी ही बात स्पष्ट रूप से कही है पर मेरी ओर फिर कर नहीं देखा। इस बहस में तुमने मुझे ही क्या योग्य मूल्य दिया?

कंकर बोला, कैसा?

तुमने यह नहीं ग़ौर किया कि सहानुभूति जिसने दिखाई वह स्त्री है— जिस स्त्री के गर्भ से पृथ्वी के सारे मनुष्य पैदा हुए हैं। काँकर, तुम यदि मानव के उत्पीड़न पर रो सकते हो तो मैं भी सन्तान की वेदना पर रो सकती हूँ! वेदना का आघात तुम्हारे मस्तिष्क में लगता है इसी लिये तुम उत्तेजित हो कर उसके प्रतीकार के लिये दौड़ पड़ते हो, पर वह हमारे प्रत्येक मर्म प्रत्येक नस में लगता है, इसी लिये हम चुपचाप आँखों से आँसू बहाती हैं। तुम लोग अबला, कोमल मातृजाति कहोगे, क्यों? पर इसी सुकोमल लावण्यता को निचोड़ कर निष्ठुर बर्बर पुरुष की बलिष्ठ देह का जन्म होता है!

कंकर हँस कर बोला, पर अपनी सुविधा के हिसाब से असल बात क्यों भूल जाती हो?

उत्तेजित होकर मीनाक्षी ने जवाब दिया, वह सामान्य है, अति सामान्य। रक्त, मांस, मज्जा, अस्थि से परिपूर्ण देह कौन ला देता है? प्राण कौन लाता है? बुद्धि और मन कौन लाता है? रेखा रेखा में जीवन कौन प्रतिष्ठित करता है! किसके शक्तिमंत्र से सामान्य वस्तुपिण्ड में असामान्य प्राण उछल पड़ता है? ए रिक्शावाले, ठहरो, ठहरो—

यह क्या, कहाँ आ गये?

यहीं उतरो, अब और नहीं!—कह कर मीनाक्षी उतर पड़ी।

एक अलौकिक संसार से छुटक कर कंकर जैसे गिर पड़ा हो, रिक्शे से उतर कर बोला, अरे यह तो मेरा ही घर है! इतनी देर तक रास्ता ही नहीं पहचान पाया—

चुप।—मीनाक्षी बोली, शाम से यह नहीं समझ पाये कि तुम्हारे ही मकान में मैं चार पाँच दिन रह चुकी हूँ।

इस मकान में? मेरी ओट?

जी जनाब, पथवासिनी को और कहाँ ठिकाना है? सुधीर और कमल का घर उजाड़ कर तुम्हारे घर में आ पहुँची। यहाँ रात के बारह बजे थे, रात के बारह बजे विप्लववादिनी भी अबला हो जाती है।

आँखें फाड़ कर कंकर बोला, पर मकान में किरायेदार जो हैं, दोनों कैसे चलेंगे? मेरा एक कमरा तो है पर—

मीनाक्षी बोली, इतने दिनों मैं उसी कमरे में तो हूँ!

तुम उसी कमरे में थीं?

मीनाक्षी ने बढ़ कर आँचल में से रिक्शे वाले को कुछ दिया और बोली, अब मत रुको, भाग जाओ नहीं तो बाबू छीन लेंगे।

वह ताज्जुब में आ ख़ुश होकर चला गया।

आसपास कहीं रोशनी नहीं थी, चारों ओर प्रायः निस्तब्धता थी। केवल लोहे के फाटक के भीतर से फूलों का एक गुच्छा रास्ते पर लटक

कर मानो उन दोनों का मधुर गन्ध से स्वागत कर रहा हो। कंकर ने सिर बढ़ा कर पुकारा, माली! ओ माली—

मीनाक्षी बोली, मझली भाभी को पुकारूँ?

वह कौन हैं?

तुम्हारे किरायेदार की पत्नी—

माली ने दौड़ कर फाटक का ताला खोल दिया। अन्दर के दालान में रोशनी हो गयी। मीनाक्षी ने सिर पर बड़ा सा घूँघट खींच भीतर जाकर एक खिड़की की झिलमिली को हिलाकर पुकारा, मँझले भैया?

कमरे के भीतर से आवाज़ सुनायी पड़ी, कौन?

मैं! ज़रा दरवाज़ा खोल दीजिये। देवर आये हैं।

वैसे ही दालान का दरवाज़ा खुल गया। एक वयस्क सज्जन निकल कर बोले, आइये कंकर बाबू, भ्रमण समाप्त हो गया? पर इस बार बहुत दिनों बाद आये।

कंकर मुस्करा कर बोला, और भी कुछ दिनों अज्ञातवास में रह सकता था पर भाभी का तार पाकर—

देख रहे हैं मँझले भैया, सगे भाई नहीं हैं इसी लिये इतना वैराग्य है। मुझे बुरा लगता है, वह तो सीधे सादे आदमी हैं, खींच तान कर किसी तरह मुझे ही ससुराल से सम्बन्ध रखना पड़ता है। मँझली भाभी कहाँ हैं भैया?

मँझले भैया हँस कर बोले, इतनी रात तक जागता पाकर तुम कहीं मज़ाक़ न करो इसीलिये जवाब नहीं दिया, मसट्ट मारे पड़ी हैं।

कंकर ऊपर की सीढ़ियों पर चढ़ने लगा। मीनाक्षी ने सिर बढ़ा कर कहा, रात किसी तरह काट लो भाई, सबेरे रसोई बना कर शाम की गाड़ी से चलेंगे। अरे माली, बाबू की मसहरी गिरा दे।

ज़ीने पर से ही कंकर ने पूछा, भाभी आप किस कमरे में सोयेंगी?

लड़के की बेमौक़े की बात सुनी?—अच्छा, मेरे लिये तुम्हें फिकर

करने की ज़रूरत नहीं है, तुम जाकर सो रहो।—कह कर मीनाक्षी उन सज्जन की ओर देख मुस्करा कर फिर प्रेम से सने स्वर में बोली, घर का बड़ा होने से क्या, बहुत बचपन है। कब का ट्रेन से उतरा, उसके बाद छोटी मौसी के यहाँ, उसके बाद खिदिरपुर जाकर चीज़ वस्तु की देखभाल, उसके बाद जाकर देखा कि बुआ की मरने मरने हालत हो रही है,—इसीलिये लौटने में इतनी देर हो गयी !

इसी समय मझली भाभी उठ आयीं। बोलीं, अच्छी लड़की है, खाना वाना बना कर ग्यारह बजे तक बैठी रही। अभी ज़रा देर पहले तुम्हारा खाना ऊपर के कमरे में भेजा है। ककर बाबू खा चुके हैं ?

मीनाक्षी बोली, मौसी के यहाँ खा आये हैं।

भाभी बोलीं, अच्छा लड़का है, अपना घर-द्वार छोड़ कर बाहर बाहर रहना—दो महीने का किराया इकट्ठा हो गया है और उसे लेने का वक्त ही नहीं।

अबकी ब्याह कर दें, आप सब तो हैं ही—

इस तरह की राम और सीता जिसके घर हों उस लक्ष्मण को काहे की फिकर, चौदह बरस तो वह भाबज के पैरों को देख कर ही काट देंगे।

मीनाक्षी बोली, आँखें तो भावज के पैरों की ओर रहेंगी पर मन उर्मिला के सपनों में लगा रहेगा। अच्छा मँझली भाभी, अब चलूँ, आप आनन्द से रात भर जागें।

तुम्हारी तो उमर बीत गयी है न ?

उमर की बात नहीं है, असल चीज़ तबियत है।—कह कर मीनाक्षी हँसती हुई ऊपर चली गयी।

कंकर के कमरे में मसहरी लगा कर माली नीचे आ रहा था, मीनाक्षी ने उससे कहा, सबेरे चाय लाकर हमें उठा देना, समझा ?

जी।—कह कर वह चला गया।

ज़ीने का दरवाज़ा बन्द करने पर नीचे से कोई सम्बन्ध नहीं रहता था।

माली के जाने के बाद अँधेरे में हाथ बढ़ा कर दरवाज़ा बन्द करने के पहले मीनाक्षी ज़रा देर चुपचाप खड़ी रही। विप्लववादिनी के अधरों पर एक मधुर तीव्र विद्रूप खिल उठा। मानो दुनिया उसके पैरों तले हो, पृथ्वी के ऊपर खड़ी होकर उसने जैसे सारी दुनिया को अवहेलना से बिदा दे दी हो। मन ही मन बोली, तुम सोते रहो, तब तक अपूर्ण उपन्यास के एक अध्याय की रचना करूँ।

यह कहकर उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया।

मकान बड़ा भारी तिमंज़िला था, चारों ओर निस्तब्ध सन्नाटा छाया हुआ था। काम में न आने से सबसे ऊपर की मंज़िल पर चारों ओर बहुत दिनों से कूड़ा-कर्कट जमा हो गया था। किसी के न रहने के कारण माली को ऊपर चढ़ने का हुक्म नहीं था। इधर-उधर बहुत से पीतल के बर्तन ढेर किये हुए धूल में भरे रखे थे। मोखलों में चिड़ियों ने घोसले बनाये हुए थे, उनके घास तिनके इधर उधर बिखरे हुए थे। सफाई रखने को आदमी नहीं, इन्तज़ाम करने का उत्साह किसी को नहीं!

दालान में किनारे किनारे चाँदनी फैल रही थी। प्रेतिनी अकेले आत्मविस्मृत भाव में कुछ देर तक उस चाँदनी में चहलक़दमी करती रही, रात्रि के तारागण केवल उसकी पदचारणा को देखते रहे।



नौ

बहुत देर बाद पैर दबाये-दबाये मीनाक्षी कंकर के कमरे में घुसी। कंकर जागा ही था, बोला, माली है क्या ?

नहीं, मैं हूँ। तुम्हारे श्रीचरणों की दासी।

तुम्हारे अनधिकार प्रवेश का कारण ?

पदसेवा ?

केवल मात्र ?

और जो दासी को आज्ञा हो !

कंकर बोला, देखता हूँ बाप की जायदाद रहने से दासी की कमी नहीं। ब्राह्मण की दक्षिणा क्या होगी ?

मीनाक्षी हँस कर बोली, पुष्पपात्र में फूलों का गुच्छा लायी हूँ। माथे पर चन्दन का तिलक लगाऊँगी, वसन्ती रंग में रँग कर उत्तरीय लायी हूँ—उठो प्रिय !

नीचे के अभिनय के साथ ऊपर के अभिनय का मेल खोजने से भी नहीं मिलता ? सीता देवी रेख लाँघ कर लक्ष्मण के कमरे में क्यों घुसीं ?

घर में वे इस कमरे से उस कमरे में घुस सकती हैं।—कहते हुए मीनाक्षी ने मसहरी उठा दी।

कंकर बोला, अब बाकी खेल क्या आधी रात के अँधेरे में होगा ?

मीनाक्षी ने हँस कर जवाब दिया, गंभीर बात को गंभीर स्वर में तुम्हें सुनाने का साहस नहीं होता।

पता नहीं था कि तुम्हारी आँखों में भी शरम है। यह सब क्या लायी हो ?

मीनाक्षी बोली, तुम लेटे रहो मैं खिलाये देती हूँ।

हँस कर कंकर बोला, लक्ष्मण का फल कहाँ है ?

है, समय आने पर दूँगी। अब खाओ तो।

कंकर बोला, वदन में क्या मल लिया है, बड़ी गंध आ रही है।

मीनाक्षी बोली, ललिता के कुंज में गयी थी, तुम्हारे आधुनिक बाथरूम में; एसेन्सवाला तुम्हारा साबुन लगा कर नहा आयी हूँ। साबुन में तुम मिले, यह तुम मेरे सर्वाङ्ग में सारी रात पुते रहे।

मायाविनी, तुम्हारा अभिप्राय भला नहीं है।

बुरा भी नहीं है।—मीनाक्षी बोली, एक खिड़की से दक्षिण की पवन आ रही है, दूसरी से ज्योत्स्ना की माया, सारी पृथ्वी का दरवाज़ा बन्द कर आयी हूँ। रेशम के बिस्तर पर राजकुमार सुख की नींद में अचेत हैं, जन्मान्तर की अपरिचिता हृदय के पुष्पपात्र में फलों की डाली लेकर आयी है, कुसुमास्तीर्ण पथ पर आयी है, अच्छा भोजन और सुपेय लायी है। अभिप्राय बहुत खराब नहीं है।

कंकर बोला, सुपेय किस तरह का है ?

मीनाक्षी बोली, अंजन लगे मृगनयनीके हाथों सुशीतल जल सोमरस हो जाता है।

समझा। सोमरस मिला, गीतिकाव्य भी सुना, पर नृत्य कहाँ है, लीलामयी ?

मीनाक्षी झुक कर बोली, अँधेरे में देख नहीं पाते हो, नीलाम्बरी उतार आयी हूँ, इस समय नर्तकी सजा पहने हूँ।

तब आलोक करो, अपने को उद्भासित करो।

न, आज आलोक नहीं काँकर। अंधकार में आज रात को अपरिचित रहेंगे। इसीलिये नीलाम्बरी उतार आयी हूँ। नृत्य नहीं, गीति काव्य में रात कटेगी।

कंकर बोला, तिमिर में तुम्हारी परश लहरी डोले, हे रसतरंगिणी।

मीनाक्षी ने उसके कान में कहा, आहिस्ता बोलो। सुनीति संघ का दलाल कान लगाये है, समालोचक आँखें खोले है।

कहो क्या कहना चाहती हो ?

तुम आनन्द से तो हो !

कंकर बोला, स्वीकार करने के पहले, देह के द्वार पर मधुर मोह में उत्सर्ग हो जाऊँगा।

सत्यानाश, किस रास्ते पर खींचना चाहते हो ?

जिस रास्ते पर चिर काल समस्त नरनारी ने स्वेच्छामृत्यु का आनन्द पाया है !—कंकर बोला।

मीनाक्षी बोली, विप्लवी, उस रास्ते पर जाने के पहले एक बार रुको। देखो हम शासन और भय से परे हैं, जीवन के सारे संस्कारों से मुक्त; पीछे से खींचनेवाला कोई नहीं है, सामने रोकनेवाली शक्ति नहीं। एक बार बाहर निर्जन अंधकार की ओर ताक कर देखो वहाँ कोई जन मानव नहीं है; आज के इस निभृत मिलन में कोई सन्देह, कौतूहल, कलंक, अविश्वास कोई भी चीज़ हमें स्पर्श नहीं करेगी; कोई भी प्रश्न नहीं करेगा, एक भी प्राणी न जानेगा।

कंकर बोला, तब आपत्ति क्या है मीनाक्षी ?

मीनाक्षी बोली, मन की बात कहूँ ?

न, प्राण की बात कहो।

वही कहूँगी।—मीनाक्षी बोली, अधूरे उपन्यास की रचना करने आयी थी, रात को कहीं रोमांचक कर पाती। देशी उपन्यास पढ़े हैं, कोई कलाकार इस रतिविलास के वर्णन का लोभ नहीं रोक सका—उन्होंने हमें केवल एक अँधेरे, गहरे, निर्बाध देहलालसा के गह्वर में, एक अवश्यंभावी परिणति में ला डाला।

उत्तप्त कंठ से कंकर बोला, क्या तुम आज कमर कसे संयम दिखा कर शाबासी लेना चाहती हो ?

मुस्करा कर मीनाक्षी बोली, ख़फ़ा मत हो। मेरी ओर ध्यान से देखो, क्या यह संयम की शकल है ? न, संयम नहीं करूँगी, पर बुद्धि लगा कर

इस हृदयावेग को समझना चाहती हूँ। साहस, साध्य, शक्ति, स्वाधीनता—हममें किसी का अभाव नहीं है, यदि चाँव चाँव और बदनामी हो तो उसे ग्राह्य नहीं करेंगे, यदि कलंक लगे तो डरेंगे नहीं, यदि आफ़त में पड़ें तो अनायास ही छुटकारा पायेंगे,—फिर भी आज के आचरण से हमारा मनुष्यत्व विपन्न होगा, काँकर!

क्यों?—काँकर ने पूछा।

अपना एक हाथ सिर पर रख कर मीनाक्षी बोली, तुम चंचल हो उठे हो!

कंकर बोला, ज़रा भी नहीं, विश्वास करो। मैं सिर्फ़ यह सोच रहा हूँ कि तुम दूर भी नहीं जाती हो, पास भी नहीं आती हो—यह क्या है?

मीनाक्षी और पास खिसक गयी। कंकर बोला, और पास आओ। चंचलता क्या तुममें नहीं है?

न,—मीनाक्षी बोली, प्रणय में जहाँ उद्वेग, जहाँ चौर्यवृत्ति और कलंक का डर, क़दम-क़दम पर खोने की आशंका, जहाँ दैवात् मिलन का बड़ा आनन्द हो—वहीं चंचलता और सर्वनाशी देह की ताड़ना होती है। पर यहाँ तो वह चक्कर नहीं है! तुम्हारी ख़ुशी पर मेरा जीवन है, मेरी इच्छा पर तुम्हारा चलना-फिरना है,—यहाँ हमें चौर्यवृत्ति से क्या मतलब? जिस काम के लिये प्रकाश्य में किसी की परवा नहीं की उसे छिपा कर क्यों करेंगे? अपने को छोटा क्यों बनायेंगे? जिन्होंने हम पर विश्वास कर ऊपर भेजा है, उनकी उस श्रद्धा को पैरों तले क्यों रौंदें काँकर?

कंकर बोला, उन्हें पता कैसे लगेगा?

पता नहीं लगेगा इसी लिये तो शरम लगती है जी। अपने नज़दीक ख़ुद ही मुँह नहीं दिखा सकेंगे।

धन्य है तुम्हारा संयम। ऐसी गीतिकविता भरी चाँदनी रात तुमने नष्ट कर दी। तुम्हारा संयम देख कर कुमारी लड़कियाँ सिर झुका लेंगी,

वेश्याएँ पेशे से भ्रष्ट हो जायँगी, सधवाएँ फाँसी लगा लेंगी, और विधवाएँ ? न, विधवाओं की बात कहना कठिन है।

क्यों ? शायद इन्दुमती की बात याद आ गयी ?

कंकर बोला, बेचारी ने हमसे बड़ी आशा लगा रखी थी।

मीनाक्षी ने पूछा, क्या ?

प्रेम करना चाहा था, सेवा करनी चाही थी।

ज़रा सोच कर मीनाक्षी बोली, उससे भी बढ़कर चीज़ उसने चाही थी, कँकर।

क्या, बताओ तो ?

तुम्हारा निरापद आश्रय।

आश्रयहीन के पास आश्रय ?—कंकर बोला, भिखारी से भीख चाहना ?

मीनाक्षी बोली, तुम तो आश्रयहीन नहीं हो ?

कंकर आँख मूँद कर चुप रहा। नीचे की घड़ी में टन् टन् कर दो बजे। चाँदनी कमरे से खिड़की के बाहर चली गयी थी। मीनाक्षी का एक हाथ बीच-बीच में उसके माथे से सिर के घने बालों की लटों में चलता रहता था, और कभी कभी उसकी साँस का शब्द छोड़ कर और कोई जीवन का चिह्न नहीं था।

बहुत देर बाद वह बोला, बड़ा आश्चर्य है, इस घर को तुमने मेरा आश्रय समझा मीनू। मकान मेरा है ज़रूर पर इसके साथ मेरे प्राणों का सम्बन्ध कहाँ है ? इससे मेरे जीवन की कोई भी समस्या संलग्न नहीं है, इसको रखने का मेरा कोई आग्रह नहीं है, इसे नष्ट करने का भी कोई उत्साह खोजे नहीं मिलता। आश्रय मेरा है कहाँ ? प्राणों का स्वातन्त्र्य मुझे किसने दिया ? तुम क्या समझती हो कि रहने के लिये एक घर, शाम को मुट्ठी भर खाना, पहनने के लिये कपड़ा—यह सब होने से ही आदमी का दुःख मिट जाता है ? मुझे आश्रय देनेवाला घर अभी तक तो बना नहीं। मुझे पागल कहो,

निर्बोध कहो, बड़ा भारी हम्बग कहो—प्रतिवाद नहीं करूँगा। मेरे मन में जो नया मानव आकर बस गया है उसका स्थान कहाँ है?

मीनाक्षी बोली, नया मानव क्यों कहते हो?

इसलिये कहता हूँ कि इसे तुमने भी नहीं समझ पाया। नवीन युग के संघर्ष की ओर तुम्हारी दृष्टि क्यों नहीं जाती?—कंकर बोला, संग्राम बाहर नहीं है, वह प्रत्येक मानव के मन में, आत्मा में है। एक ही मानव के हृदय-तल की ओर ध्यान दो, संशय के साथ श्रद्धा, विप्लव के साथ शुभ बुद्धि, ईश्वर के साथ शैतान, कपट के साथ सतता, असंयम के साथ प्रशान्ति, परस्पर विरोधी तत्त्वों का विचित्र संमिश्रण होता है, मैं उसी अद्भुत एकाकार का प्रतीक हूँ। वैराग्य की ओर प्रबल औत्सुक्य, पर प्रबल संभोग की प्यास से जर्जरित हूँ। मन कर्म की ओर दौड़ने में लगा है पर निष्क्रियता के आलस्य से अलस है। मैं नवमानव इस कारण से हूँ, ग़ौर से देखो कि अपने ही घर में मैं चोर की तरह घुसा हूँ।—न, न, मालूम है कि तुम क्या कहोगी। तुम साथ में हो इसलिये नहीं डरता, लोकनिन्दा से वे ही डरते हैं जो ग़रीब हैं,—मैं ग़रीब नहीं हूँ, पर मैं मानो समस्त से विच्छिन्न हूँ, यहाँ आकर मैं अपने को पहचान नहीं पाता, मानो इस मकान का घर-द्वार मुझे उत्पीड़ित करता हो, किसी प्रबल अस्वस्ति से मेरा मन पंख खोल ग़ायब होकर भागना चाहता है। मैं जन्म से ही आश्रयहीन हूँ मीनाक्षी!

मीनाक्षी बोली, चुप रहो, मैं सब जानती हूँ।

सब जानती हो, इसी लिये दुःख होता है जब मैं देखता हूँ कि तुम्हारे मन में बादल उमड़ आते हैं।—काँकर बोला, मैं नवीन मानव हूँ, नवीन कलाकार हूँ।

बीच ही में टोक कर मीनाक्षी बोली, जानती हूँ काँकर। जानती हूँ कि तुम लहरी हो, अनवधान हो, निष्ठुर हो, प्रेमिक हो और असंयत हो। तुम्हारा कोई धर्म नहीं, मर्म नहीं; तुम कभी करुणा में बह जाते हो, कभी निर्बोध निर्दयता में वीभत्स हो जाते हो। तुम्हारी भीषणता से मैं मुग्ध हो

जाती हूँ और तुम्हारा ममता का रूप देख कर डर कर भागना पड़ता है। तुम कलाकार हो इसी लिये भयंकर हो, इसी लिये मधुर हो। पाप की मत्तता और पुराय के आत्मत्याग में तुम्हें समान रूप से आनन्द मिलता है; जिसकी छाती पर से निर्दय रथ का पहिया चलाना चाहते हो, उसी को तुम अन्तःकरण से पूजते हो। तुम कलाकार हो, वीभत्स में तुम्हारा मन चलता है, सौंदर्य में तुम्हारा मन बहता है। तुम्हारी कल्पना की क्रीड़ा में गुड़िया और प्रतिमा में कोई पार्थक्य नहीं; तुम जिसका अनायास सर्वनाश कर सकते हो, उसके लिये अत्यन्त सामान्य बात के लिये आत्मत्याग कर सकते हो। तुम्हें कलाकार जानती हूँ, तुम्हारे हृदय की गंध से मेरी नींद टूट गयी, मैं तुम्हारे साथ पागल होकर निकल पड़ी हूँ। मेरा यदि भयानक परिणाम होगा तो डरूँगी नहीं, तुम्हारी कल्पना की क्रीड़ा में चूर चूर हो जाऊँगी, उसी सुख में सब कुछ छोड़ आयी हूँ। कांकर तुम मुझे तोड़ दो, चूर चूर कर दो, पैरों तले रौंद दो, मुझे निचोड़ कर अपने ध्वंस को पथ के किनारे फेंक कर चले जाओ, कोई विरोध नहीं करूँगी !

कंकर ने उसका हाथ पकड़ कर कहा, विप्लववादिनी, मैं कहीं तुम्हारे योग्य सम्मान दे पाता !

उत्तेजित होकर मीनाक्षी बोली, चतुर, मेरी चापलूसी करोगे ? मैं इतनी छोटी नहीं हूँ। मुझे आज रात को जिस बन्धन में बाँध लिया है उसे तोड़ डालना चाहते हो, इस एकान्त सान्निध्य से तुम्हारे मन में जो बारूद जमा हो गयी है, उसमें उन्मत्त शिखा से आग लगा दो और उसी आग में मेरी आत्माहुति के भीतर अपना प्रलयंकर तांडव देख लो। तुमने सोचा था कि मैं डर जाऊँगी, समझा था कि आत्मरक्षिणी शक्ति से अपने को बाँध कर रखूँगी ? परीक्षा करके देख लो, अबला तुम्हारे पैरों तले गिर कर रोयेगी नहीं, नाटकीय ढंग से यह नहीं कहूँगी कि ईश्वर रक्षा करो। विश्वास पर श्रद्धा करना चाहा था, चाहा था मनुष्यत्व के परिचय को सम्मान देना,—पर तब नहीं समझा था कि मेरी सामान्य समझ से भी

तुम मेरे निकट बहुत बड़े हो; समझी नहीं थी कि मेरा जीवन ही तुम्हारे स्वेच्छाचार की ही अभिव्यंजना है, मेरा अवसान तुम्हारी ही अहेतुक कल्पना का सुख है। कंकर, तुम कलाकार हो, मेरी देह के दर्पण में अपनी असंयत प्रवृत्ति का प्रतिबिम्ब देख लो, देख लो अपने समाज-विप्लव की प्रतिच्छवि, अपने वीभत्स शरीर पीड़ा का प्रतिफलित रूप। लो, मैंने तुम्हें सब कुछ अर्पण कर दिया, आज कृपणता को कहीं स्थान नहीं, अन्धकार में कोई रोक नहीं रखूँगी, इस भंगुर रंगीन काँच के पात्र को चूर चूर कर दो, उसकी झनझनाहट का शब्द तुम्हारे कानों में गीत बने।—कहते कहते उसके दोनों विशाल चमकते नेत्र अँधेरे में कंकर की दोनों मुग्ध आँखों के तारों पर पिशाचिनी के समान नीरव हास्य करने लगे।

क्या देख रही हो?—कंकर ने पूछा। उसकी आँखों में नींद भरी थी।

अभिभूत के समान मीनाक्षी बोली, देख रही हूँ अपने ईश्वर को, जिसमें हर घड़ी करोड़ों तरंग लहराती हैं। तुम अद्भुत हो।

कंकर बोला, तुम आश्चर्य हो। तुम्हारी दृष्टि में दो बिन्दु आकाश भरे हैं। तुम्हारे निश्वास में जीवन झूमता है, तुम्हारे आलिंगन में मृत्यु-पाश है।

हृदय में तुम्हारा इतना शब्द क्यों है?

तुम्हारे नूपुर की झनझनाहट है, नाच की झंकार है।

मीनाक्षी बोली, स्त्रियों के औत्सुक्य के विषय में बताओगे?

कहो।

तुम मुझे प्यार करते हो?

कंकर बोला, रोमांच मत करो, दिग्भ्रम मत करो मीनाक्षी।

घृणा करते हो?—नारी ने जानना चाहा।

तन्द्रा-जड़ित कंठ से कंकर बोला, प्राण-रहस्य मत जानना चाहो।

मीनाक्षी ने पूछा, अगर तुम्हें छोड़ कर चली जाऊँ?

तुम्हारे पीछे पीछे भागता फिरूँगा।

अगर तुम्हारे हाथों अपने को पकड़ा दूँ ?

कंकर बोला, तुम्हारे बन्धन काट कर भाग जाऊँगा।

थोड़ी देर बाद धीरे धीरे मीनाक्षी अपना हाथ छुड़ा कर खिसक गयी। महोगनी के पलँग के नरम बिछौने से उतर कर बोली, तो अब चुपचाप सो जाओ, क्यों ?

यथा आज्ञा, देवी !

हँस कर मीनाक्षी बोली, युद्ध में जय हुई या पराजय ?

मुस्करा कर कंकर बोला, संधि कर ली।

संधि कर ली ? यह कौन सी राजनीति है ?

अहिंसक आतंकवाद।

अच्छा ! देश के स्त्री-पुरुष यदि तुम्हारी यह नीति न मानें तो ?

कंकर बोला, तो आमरण अनशन।

मीनाक्षी ने पैताने की ओर जा कंकर के दोनो पैर इकट्ठे कर अपने ओठों से स्पर्श कर कहा, छलना में तुम सिद्ध हो, तुम्हारी ही जय मान ली।—कह कर मसहरी यत्नपूर्वक ठीक कर प्रसन्नमुख दरवाज़ा बन्द कर कमरे से निकल गयी।

*

* *

माली के चाय लाकर हाज़िर करने के पहले मीनाक्षी नहा कर तैयार थी। चाय का प्याला रख कर माली ने पूछा, क्या बाबू को पुकारूँ ?

पुकारो, पुकारो—साहब जो मसहरी में घुसे तो साढ़े आठ तक खबर नहीं। देवर जी, ओ देवर जी,—अब आकर कान में पानी डाल दूँगी।—मीनाक्षी ने अपना कण्ठस्वर सबसे नीचे की मंज़िल तक पहुँचा दिया।

नीचे से मँझली दीदी की आवाज़ सुनायी पड़ी। वे बोलीं, खाना लेकर अभी आ रही हूँ भाई। बाबू साहब को पुकारो।

मीनाक्षी बोली, मझली भाभी मैं ग़रीब की लड़की हूँ, भोर समय ही

उठना पड़ता है। बाबू साहब ज़मींदार हैं, उनकी नींद खोलने लायक जीव रखना पड़ेगा।

मँझली बहू की धीमी हँसी का शब्द सुनायी पड़ा।

कंकर उठ कर कमरे से बाहर आया। माली एक कुर्सी खींच कर मेज़ पर चाय रख चला गया। मुस्करा कर दोनों की नज़रें मिलीं। कंकर बोला, सबेरे सबेरे अच्छा मुँह देखा। दिन अच्छी तरह कटेगा। माँग में सिन्दूर किसने भरा, छलनामयी ?

हँसते हुए मीनाक्षी धीरे से बोली, तुम्हारी मेज़ पर लाल स्याही सूख गयी थी, उसी को लगा लिया है।

और वह सुनहरी किनारे की रेशमी साड़ी ?

तुम्हारे सन्दूक़ की चाभी तो मेरे आँचल में रहती है।

सन्दूक़ ! कुछ रुपया-पैसा नहीं था ?

नहीं रहता तो क्या केवल भाषण देकर जीवन-यात्रा चलती है ?

पर मुझे तो तलाश करने पर कुछ नहीं मिलता ?

मीनाक्षी बोली, छिपे खाने में था, स्त्रियों को छोड़ कर उसका किसी को पता नहीं लग सकता।

कंकर हँसा।

डरने की कोई बात नहीं है, अभी भी बहुत रुपया है। तुम्हारी माँ के बहुत से गहने हैं। सब खोज लिये हैं।

क्या कह रही हो ? फिर तो अब साम्यवाद के प्रचार करने की सुविधा मिल गयी। हे ईश्वर, सब तुम्हारी कृपा है। सब मिला कर कितना है, बताना तो।

परिमाण नहीं बताऊँगी।—मीनाक्षी बोली, मैंने आज से तुम्हारे खर्च का भार लिया।

कंकर बोला, तुम्हारे इस ग़ैरक़ानूनी अधिकार ग्रहण करने का हेतु क्या है ?—कह कर उसने चाय की चुस्की ली।

मीनाक्षी बोली, स्वाधिकार-प्रतिष्ठा।

अगर ग्राह्य न हो ?

तो नारी-हरण और श्लीलता-हानि का अभियोग होगा।

ठीक, उसका हरजाना कितना होगा ?

जीवन-स्वत्व।—कह कर मीनाक्षी हँस उठी।

इसी समय दोनो हाथों मे खाने का थाल लेकर मँझली दीदी आ गयीं। कंकर ने उठ कर उनकी ओर एक कुर्सी बढ़ा दी। थाली मेज़ पर रख प्रसन्नमुख वे बोलीं, देवर भाभी में केवल बातों की छूरी का खेल हो रहा है। पहले सुनूँ आज कितने बजे की गाड़ी है ?

कंकर बोला, रात के साढ़े दस बजे।

ठीक, तब रात को भी खाकर जाना होगा। मैंने उन्हे बाज़ार भेजा है। इधर रसोई चढ़ा दी है। अब बताओ क्या झगड़ा चल रहा है।

मीनाक्षी बोली, चाभी लेकर आँचल में बाँध ली थी, उसी लिये पुलिस बुलाने चले हैं। आप इसका ज़रा ठीक से निपटारा कर दें मझली भाभी।

किये देती हूँ।—कह कर उन्होंने अपने आँचल से दस रुपये के कई नोट निकाल कंकर के आगे रखे। बोलीं, यह दो महीने का किराया—इसे आप जिस तरह चाहें खर्च करें, और ननद के आँचल में रहने दें अपनी चाभी। क्यों, ठीक है न ?

कंकर बोला, आपसे किराया भी लूँगा और डेरा भी डालूँगा, यह कैसे होगा ?

मँझली भाभी बोलीं, आपके ब्याह के पहले तक यह इन्तज़ाम है। यह आपका माहवार है, घर का किराया नहीं। ब्याह के बाद सब चुका देना, ख़ुशी से ले लूँगी।—कह कर मँझली भाभी ख़ुश होकर जाते जाते कह गयीं कि कंकर के लिये वे एक पात्री खोज निकालेंगी।

*

* *

शाम के बाद मझली भाभी ऊपर आयीं। उनकी आँखों में हँसी थी, चेहरे पर खफ़गी और मन में गुदगुदी। उन्होंने आकर बाथरूम में कान लगाया। भीतर नल से पानी गिरने का निरन्तर शब्द और तरुणी की अकेले गुनगुनाहट सुनी, दरवाज़े की सेंध से फूलों की सी साबुन की मधुर गंध आ रही थी।

उन्होंने हँस कर कहा, देवरानी, गुलाब की पखुड़ियों पर इतनी कलाकारी क्यों हो रही है ?

अन्दर से जवाब आया, वह बात नहीं है दीदी। एकान्त में नार्सिसस अपना रूप देख कर स्वयं ही मुग्ध हो रहा है।

वह किस अवस्था में है यह देखने की इच्छा होती है।—कह कर मझली भाभी आँख बन्द कर चुपचाप हँसने लगीं।

सच ? ललित कला की कल्पना-मूर्ति का सचमुच दर्शन करना चाहती हैं ?

औरतें सब कुछ कर सकती हैं। खट् से दरवाज़ा खुल गया। पर पलक मारने भर की देर के लिये। रूप और देह के अद्भुत प्राचुर्य से मझली भाभी की आँखें विस्मित हों कि तब तक दरवाज़ा फिर फट से बन्द हो गया। वह स्तब्ध खड़ी रह गयीं।

अन्दर से कलकंठ में प्रश्न हुआ, हो गया न ? ओ दीदी, जवाब नहीं दे रही हैं ?

मझली भाभी बोलीं, हाँ।

क्या सोच रही हैं ?

निश्वास छोड़कर उन्होंने जवाब दिया, सोच रही हूँ कि मैं अगर मर्द होती।

भीतर से बिल्लौर के बर्तन के चूर चूर होने की तरह की उच्छृंखल हँसी की आवाज़ नल की आवाज़ के साथ मिल कर मँझली भाभी के कानों में पड़ी। जवाब में वे फिर बोलीं, जल्दी निकलो, आज तुम्हें सजाऊँगी।

कुछ देर बाद बाथरूम की रोशनी बुझी, नल की आवाज़ रुकी और दरवाज़ा खोलकर मीनाक्षी बाहर निकली।

ओंठ फैला कर हँसती हुई मँझली भाभी बोलीं, शायद अपनी आँखों को अपना रूप अच्छा लगता है ?

मीनाक्षी बोली, नहीं भाभी, रूप से अधिक रूप का अहंकार मुझे प्रिय है।

बाल बच्चे होने पर यह रूप रहेगा ?

और बढ़ेगा।—मीनाक्षी बोली, उस समय जगद्धात्री देवी उर्वशी हो जायंगी।—कह कर वह कमरे में घुस गयी।

पीछे पीछे भाभी आयीं। माली कमरे की रोशनी और पंखा खोल कर चला गया। स्निग्ध हवा में बैठकर मीनाक्षी बोली, औरतों के नहाने में बड़ा परिश्रम लगता है। मैं अगर सम्राट् नेपोलियन की बहिन होती तो एक हब्शी नौकर रखती जो मुझे दोनों वक्त स्नान कराता।

हाय दैया, मर्द !

हँस कर मीनाक्षी बोली, नेपोलियन ने भी आप ही की तरह कहा था, मर्द ? जवाब में बहिन पॉलिन ने ताज्जुब से पूछा, भैया, हब्शी क्या मर्द होता है ?

भाभी बोलीं, हाय राम तुम कैसी बेशरम हो ! आओ आज तुम्हें अच्छी तरह सजा दूँ।

किस तरह सजायेंगी ?

जैसे पुष्पशय्या पर कन्या को सजाया जाता है।

ठीक, पर भौंरा कहाँ है ? फूल की पंखुड़ी-पंखुड़ी पर कौन गुनगुनायेगा ?

उसकी कोई चिन्ता नहीं, कोई चिन्ता नहीं—भाभी बोलीं, रात भीगते ही वह मिल जायगा। जाकर देखोगी कि मोहिनी मूर्ति देखने की आशा में पथ के किनारे ही वह बैठा है।

ज़रा अनमनी होकर मीनाक्षी बोली, क्या पता शायद विरहियों ने रास्ते को ही घर बना लिया हो।

भाभी खिलखिला कर हँस पड़ीं। बाद में बोलीं, दिन भर वर का जो बखान किया है कि देखते ही प्यार करने की तबियत होती है।—कह कर उन्होंने शृङ्गार की सामग्री निकाली।

मीनाक्षी आत्मगोपन कर बोली, अच्छी तरह जानकर प्यार करेंगे या नहीं इसमें सन्देह है।

क्यों ? लगता है दोनों भाइयों की एक सी आदत है।

हूबहू।—मीनाक्षी बोली, चोर चोर मौसेर भाई। यह शाहखर्च तो वह त्यागी। एक की आँख रास्ते की ओर तो दूसरे की आसमान की तरफ।

तुम्हें बहुत प्यार करते हैं ?—कहते हुए भाभी उसके बाल बाँधने बैठ गयीं। दो मिनिट में ही जरी व फीते लगाकर चोटी कर दी।

मीनाक्षी ने जवाब दिया, प्यार करते तो क्या रूप को बिगाड़ने की कोशिश करती ?

प्यार करना सिखाया क्यों नहीं ?

बाप रे—मीनाक्षी बोली, वह मर्द हैं। जितना बाँधती हूँ उतना ही बंधन काटते हैं। पिंजड़ा खोले हाथ में खाना लिये बैठी रहती हूँ। वह झट से खाना कुटक भाग जाते हैं पर फन्दे में नहीं फँसते।

हँस कर भाभी बोलीं, ठीक, अबकी आखिरी फन्दा फेको। आज ऐसा सजाये देती हूँ कि फन्दे में फँसना ही पड़ेगा।—कह कर उन्होंने बड़ी तन्मयता से सजाना शुरू किया।

मीनाक्षी बोली, तब हो चुका ! सिंगार ही सिंगार हाथ लगेगा, और कुछ नहीं।

अच्छा देखो कैसा सजाये देती हूँ। छोटे देवर का भी सिर चकरा जायगा।—कह कर भाभी ने उसे राजपूती ढंग से रेशमी साड़ी पहना दी। छाती का आँचल दाहिनी ओर गया। इस रूप में पहचानना मुश्किल था।

पर सावधान ।—मीनाक्षी हँसते हुए कहने लगी, देवर का सर चकराने से काम नहीं चलेगा। रास्ता लम्बा है, ऐसा हो जिससे मंज़िल तक पहुँच सकूँ ।

भाभी ने हँसकर उसकी ठुड्डी दबा दी। बोलीं, बुराई क्या है, मूल से सूद प्यारा लगेगा।

मीनाक्षी ने पूछा, पैरों में नूपुर मंजीर नहीं हैं ?

वह आजकल का फैशन नहीं है भाई ।

फैशन बड़ी चीज़ है और पुरुष के हृदय की धड़कन के साथ ताल देना कुछ नहीं ? तब तो कमर की ज़ंजीर भी खोल लें।

इस बार भाभी ज़रा कविता कर साधुभाषा में बोलीं, चन्द्रहार निकाल देने से नितम्बिनी का क्या मूल्य रह जाता है। अरी पगली, औरत की ऐसी सुन्दर देह में भी रक्त-मांस के सिवा और कुछ नहीं है, पर इसके गोल मटोल लावण्य को अलंकार से और भी मनोहर किया जाता है। माया तेरे यौवन में है, लालसा तेरे वस्त्रों में है, मोह संचारित हुआ अलंकार से ।—यह कहकर भाभी मीनाक्षी का बड़ा आदर करती हुई प्रसन्न हो उठ खड़ी हुईं। मीनाक्षी ने उनका हाथ पकड़ कर कहा, देखा तो, गुलाब के शरीर पर चित्रांकन आप ही ने किया, मैंने नहीं।

भाभी ने उसका चिबुक हिलाकर कहा, देवी जी, ज़रा आइना देखती रहो, तब तक मैं रसोई से फ़ुरसत पा लूँ। तुम लोगों की गाड़ी का वक़्त हो गया। कहकर हँसती हुई वे कमरे से बाहर चली गयीं।

उनके चले जाने के बाद एक अप्रत्याशित घटना हो गयी। साड़ी पहने दुलहिन के साज में मीनाक्षी निकल आयी, चलने से पायल बजने लगी और वह आवाज़ उसके ही कानों में मधुर लगी। मीनाक्षी एक मंज़िल से दूसरी मंज़िल में चहलक़दमी करती घूमने लगी।

साजबाज और श्रृंगार से किस स्त्री को वैराग्य होता है ? फिर भी इस अजीब हालत से देह थक गयी। ऐसा साज बाज उसे बर्दाश्त नहीं होता,

नारी जीवन में ऐसे बन्धन की वह कल्पना नहीं कर सकती। धरती उसके मुँह पर व्यंग कर बोल उठी, मीनाक्षी, यह तुमने क्या किया? पर उसने तो कुछ नहीं किया, मात्र नारी प्रकृति का चिरकालीन परिचय दे डाला था। जीवन में कौन चीज़ सत्य है? सब कुछ ही तो—मीनाक्षी सोचने लगी, एक से दूसरे का विच्छेद नहीं है। स्वभाव के मूल से ही परस्पर विरोधी भाव उठ आते हैं। एक ओर अविराम रूप से विप्लव है तो दूसरी ओर रक्षणशीलता रिवाजों का आँचल बराबर थामे रहती है,—ऐसा क्यों होता है? जीवन-व्यापार का सुस्पष्ट उद्देश्य कौन सा है? प्रतारणा उसके जीवन में कहीं है नहीं, कुलवधूत्व का ज़रा भी आकर्षण उसे खोजने से नहीं मिलता, गहने और शृंगार से उसे स्वाभाविक वितृष्णा है, फिर भी यह मन की विलक्षणता! मानो नया नया लग रहा है। नया, वैसा ही जैसा चराचर विश्व होता है, अत्यन्त यंत्रणादायक। अच्छा लगता है, पर आदत नहीं है, उससे परिचय नहीं है,—इसलिये उसका त्याग करो। नूतन कहने से ही वह बुरा है, उसे स्वीकार नहीं कर सकूँगी, इसलिये उसे तोड़ दो, उसे हटा दो, लाञ्छित करो। मीनाक्षी को विप्लव में ही शान्ति थी, शृङ्खलाहीनता और अनियम में ही उसके प्राणों को स्वाधीनता थी, आचार-व्यवहार न मानकर चलने में ही सहज गति मिलती। पर नूतनता आकर उपद्रव क्यों मचाती है? क्यों आकर उसकी स्वाधीनता का नाश करना चाहती है? क्यों उसकी प्रकृति को विडम्बित करना चाहती है? मीनाक्षी टहलते टहलते सोचने लगी, नाश करते करते नाश का ही नशा चढ़ गया था, विप्लव का प्रचार करने के लिये सब जगह छाती फुला कर रहने का अभ्यास ही उसके जीवन का ढंग हो गया था, अब क्या उसे विप्लव के विरुद्ध भी विद्रोह का प्रचार करना होगा? अन्त में अपने विरुद्ध भी अप्रीतिकर भाव लाना होगा? वह ध्वंस की ओर ही देखेगी, गिरे हुए पत्ते ही पिस जायँगे, पर उसके पीछे के पथ पर नहीं देखेगी कि नव-वसन्तकाल के नये अंकुरों की सृष्टि हो चली है?

अप्रत्याशित बात हो गयी। मीनाक्षी ने दालान तक की रोशनी जला दीं। माली ने सफाई करने के लिये कमरे खोल रखे थे, उसने जाकर हर कमरे में रोशनी जला दी। रोशनी जला कर उसने एक बार अपने को देखा। शृङ्गार नहीं, गहने कपड़ों को नहीं, रूप और यौवन भी नहीं—एक बार अपने ही को देख ले। वह गृहाङ्गना का साज किये मीनाक्षी थी,—कि दोनों के रासायनिक मिश्रण से कोई तीसरी ही स्त्री खड़ी थी? अपने को साफ़ तौर से देखने के लिये उसने उस मंज़िल के रहे सहे कमरों में घुस कर रोशनी जलायी। पर एक ही पल के लिये, दूसरे ही क्षण डर कर वह चिल्ला उठी।

पलँग पर कंकर जाग रहा था। पता नहीं वह लौट कर कब आ गया था। विस्मय से आँखें फाड़े वह मीनाक्षी की ओर देख रहा था।

और वह भी पल भर के लिये। पलक मारते मीनाक्षी ने हाथ बढ़ा कर रोशनी बुझा दी। कंकण बज उठा।

कमरे के अन्दर की हवा मानो स्तब्ध हो गयी थी, साँस मानो रुकी हुई थी। कंकर धीरे-धीरे बोला, आओ।

मीनाक्षी ने उत्तर नहीं दिया। अँधेरे में समझ में नहीं आया कि वह खड़ी है या पैर दबा-दबाकर भाग गयी।

कंकर ने फिर पुकारा, मीनाक्षी?

स्तब्ध, निश्चल!

मीनू?

पर जवाब न पाकर कंकर उठा। मीनाक्षी को खींच कर अपने पास ले जाकर पलँग पर बैठाया। उसके बाद बोला, बात क्यों नहीं करतीं मीनू? यह क्या, बदन जैसे पत्थर हो गया है। इतना पसीना कैसे आ रहा है मीनू? एकाएक जैसे तुम ब्याहली लड़की हो गयीं—जैसी नम्र, वैसी ही शर्मीली।

मीनाक्षी अस्पष्ट कंठ से बोली, मुझे क्षमा करो।

क्षमा करूँ ? क्यों ?

मैं पहले समझ नहीं सकी।

कंकर बोला, तुम्हें ऐसा बढ़िया किसने सजाया ? क्षमा चाहने की बात तो बाद, मैं सोचता हूँ कि ट्रेन में चढ़ने पर मेरी ऐसी सोने सी सहधर्मिणी को डाकू न छीन ले जायँ। मीनू, यह सुहागरात का शृङ्गार ट्रेन में जाकर बर्बाद करोगी ? ठहरो, रोशनी जला कर एक बार तुम्हें अच्छी तरह देख लूँ।

मीनाक्षी ने व्याकुल हो उसे पकड़ लिया,—न, तुम्हें देखने नहीं दूँगी। बाहर वाले जितना चाहें देखें, तुम मत देखो।

यह क्या ? क्यों ?

तुम्हारे लिये नहीं सजी हूँ, काँकर। मेरा विश्वास करो, एक विचित्र लोभ वश होकर यह दैन्य है। तुम्हारे लिये सजूँ, तुम्हारा इतना बड़ा अपमान नहीं कर सकती।—कह कर मीनाक्षी पलँग पर से उतर कर कमरे से निकल गयी।

ककर मुस्कराता उसके बचपन को देखता रहा।

इसके बाद मीनाक्षी पास नहीं आयी। साथ में भोजन नहीं किया, पास खड़ी नहीं हुई। रसोई में जाकर बोली, यह तो बड़ी गड़बड़ी हो गयी। अब बताइये कैसे मुँह दिखाऊँ ?

भाभी चुपके से बोलीं, एक बार अच्छी तरह दिखा आओ, उसके बाद ही आसान हो जायगा।

आपको पता नहीं देवर चुपचाप आये थे। पहले पता नहीं था, एकाएक साफ पकड़ गयी। भाग्य से कमरे में अँधेरा था, इसी लिये पूरी तरह नहीं देख पाये। हँस कर जैसे ही रोशनी जलाने जायँ कि मैं भाग आयी।—यह कह कर मीनाक्षी गद्‌गद कण्ठ हँसने लगी।

जाने का समय हो आया। मँझले भाई ने ऊपर जाकर कंकर से बिदा ली। कह गये कि पता मिलने पर वे बराबर किराया भेज दिया करेंगे

और जब तक इस मकान में रहेंगे उतने दिन इस मकान की चल अचल सम्पत्ति की देखभाल करते रहेंगे। उनके चले जाने के बाद माली ने आकर हर कमरे में ताला लगा दिया। कंकर ने उसे खासी रक़म बख्शीश में देकर उसके सर पर चपत लगायी। माली ने उसके पैर छुए।

मोटर पर चढ़ने के पहले मीनाक्षी के बिदा लेने की चेष्टा करते ही भाभी का चेहरा बदल गया। वे अकुंठित गले से धीरे धीरे बोलीं, इतनी बार इशारा किया पर भाई तुम हमारा विश्वास ही न कर सके।

मीनाक्षी उनकी ओर देख कर सहसा स्तब्ध खड़ी रह गयी।

सस्नेह मुस्कराते हुए भाभी बोलीं, मुझे बुद्धू समझती थीं, पर मैं तो जानती हूँ कि तुम लोग बच्चे हो। तुम्हारा यह खेल अगर न समझ सकूँगी तो उम्र में बड़ी क्यों हुई। मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हारा सारा भय, सारा संकोच दूर हो। अच्छा चलूँ।—कह कर विमूढ़, चकित और अपमानित मीनाक्षी की ओर से मुँह फेर कर वह चली गयीं।

कंकर ने गाड़ी से उतर मीनाक्षी को खींच कर गाड़ी पर बिठा दिया और आप उसके पास बैठ गया।

चलो, हावड़ा स्टेशन।—ड्राइवर को आज्ञा दी।

मीनाक्षी ने चुपचाप सब गहने उतार कर चमड़े के बैग में रख लिये; उसके बाद कंकर की धोती के किनारे से अपने मुँह का रंग और पाउडर पोंछ डाला। सोचने लगी कि साड़ी और जम्पर कैसे बदला जाय।

कंकर बोला, भाभी ने हमारा जाल पकड़ लिया, यही न ? वह तो बड़ी सीधी, बड़ी स्वाभाविक बात है। औरतों की नज़र बड़ी खतरनाक होती है, वे जो देखती हैं उससे ज्यादा पैदा कर देतीं हैं। तुम्हें भी थोड़ी सीख मिल गयी। ज़िन्दगी उपन्यास ही नहीं है, इसमें थोड़ा नाटकीय अंश भी है ! क्या कहती हो मीनू ?

दस

स्थिर निर्विकार मुख से मीनाक्षी रास्ते के दोनों ओर ताकती स्तब्ध बैठी थी। कंकर की बात के उत्तर में सिर्फ इतना बोली, कपड़े की दुकान दिखाई पड़े तो गाड़ी रोकना।

आज इस बनारसी लिबास में ही रहो न—कंकर हँस कर बोला, दोस्त लोग देखने पर ख़ुश होकर यह तो कहेंगे कि लड़के को कम से कम एक दिन के लिये बिना दाम बहू मिल गयी। घूँघट सर से हटा दो।

पर मीनाक्षी ने ध्यान नहीं दिया, कपड़े की दूकान देख कर उसने गाड़ी रुकवाई और कंकर से कहा, जाओ, एक मोटी चादर और जैसी तैसी एक साड़ी खरीद लाओ।

पाँच मिनट में ही कंकर ने साड़ी और चादर लाकर हाज़िर की। गाड़ी फिर चली।

क्षुब्ध स्वर से कंकर बोला, राजपूतानी का छद्मवेश अच्छा लगा था, फिर भी सर पर अभी तक नज़र नहीं पड़ी थी। 'गलित वेणी लोलनी'—पर इसे नहीं उतारने दूँगा।

क्यों?—मीनाक्षी ने प्रश्न किया।

नींद की झोंक में तुम्हारी वेणी छाती पर रख लूँगा। स्वप्न में देखना चाहता हूँ कि साँप शरीर पर चढ़ा है। मीनू, तुम्हारी हँसी सहसा कम क्यों हो गयी?

इस बार मीनाक्षी बोली, एक भली औरत को धोखा दे आयी, इसके लिये तुम्हें पछतावा नहीं है?

कंकर हो हो कर हँस पड़ा, चालाक की चालाकी पकड़ी गयी, यही न? भावज बन कर जब घर में घुसी थीं तब नहीं सूझा था? बुद्धू बन गयीं! यह बात अच्छी तरह समझ लो कि दुनिया में सिर्फ हम ही अक्लमन्द

नहीं हैं। पछतावा ? किस बात का ? जब जुआ खेलने बैठे हैं तो हारजीत दोनों को बराबर .खुशी से लेना होगा !

पर काँकर, छोटी जो पड़ गयी ?

धोखा देने में बड़ी बनने क्यों गयी थीं ? सरल मन से यह क्यों नहीं मानतीं कि हम पति-पत्नी भी नहीं, देवर-भाभी नहीं, हम गंधर्व हैं। किसी की परवाह नहीं करते; हम शून्यलोक में विचरण करते हैं, मनुष्य की अदालत में हम सफ़ाई नहीं पेश करते।

मीनाक्षी बोली, अगर वे नफरत करते ?

कंकर बोला, तो सर झुका लेते। मनुष्य की श्रद्धा और घृणा ? उनका कुछ मूल्य है ? धोखे से श्रद्धा पाने की अपेक्षा सचाई से घृणा पाना बहुत बड़ा है, मीनाक्षी। डाकू को श्रद्धा की जा सकती है पर चोर की गंदगी बड़ा घृणास्पद है।

मैं बाहरी हूँ।—मीनाक्षी बोली, मेरे साथ शायद फिर उनकी मुलाक़ात न हो पर किरायेदार के समीप जो तुम्हारा चरित्र कलंकित हुआ ?

इतने ही से यदि वे मेरे चरित्र का विचार करें तो ऐसे किरायेदारों को निकाल दूँगा, इसकी कोई परवाह नहीं। मीनाक्षी, इसे कभी अन्याय मत समझो, इसे स्वभाव का खेल कह सकती हो। जो सहज है, स्वाभाविक है, जो पृथ्वी का सनातन नियम है, उसे कलंक कहा जायगा ? महामन्त्रपाठ का प्रमाण पत्र पाकर जो गृहस्थ जीवन के अंधकूप में बैठ कर अश्लील असंयम में दिन बिताते हैं वे होंगे बड़े, और हम, जिन्होंने विशाल भूमि पर खड़े होकर जीवन पर विचार किया है, प्राणों के गली कूचे खोज कर रत्न का उद्धार करते घूमे—वे कलंकित हो जायँगे ? बहुतों की सेवा का आराम मैंने क्यों छोड़ा ? तुमने घर का मोह छोड़ दिया ? रुपये पैसे की कमी नहीं थी, शराब पीकर जुआ खेल कर वेश्याओं के अड्डे में या कुछ भले घर की लड़कियों को नष्ट कर दिन बिता सकता था, शकल भी उस क़ाबिल थी, और तुम श्रीमती मीनाक्षी, तुम्हारे शरीर की आग में बहुत

से पतिंगों के पर जल सकते थे या किसी अमीर के लड़के से शादी कर लड़के-बच्चे लेकर विलासी जीवन बिता सकती थीं—पर हमें जीवन क्यों पसन्द नहीं ? हममें यह असन्तोष क्यों हैं, क्यों यह निर्विकार रूप से दुनिया घूमने की वृत्ति ली है ? जवाब दो, मीनाक्षी।

मीनाक्षी बोली, शायद यह भी एक तरह का विलास है कंकर।

कंकर बोला, विलास, पर यह प्रकृति-धर्म का विलास है ? इस धर्म में निधन स्वीकार करूँगा पर अन्य धर्म नहीं मानूँगा। गृहस्थ जीवन के विरुद्ध मैंने विद्रोह की घोषणा नहीं की है, पर जो जीवन कल्पना-विहीन है, स्वल्प में तुष्ट होता है, उच्चाकांक्षाशून्य है, जिस जीवन में तरंग नहीं, आवर्त नहीं, विपर्यय नहीं—उस जीवन के विरुद्ध हमारी विद्रोह-घोषणा है। चोट खाकर जो कायर केवल रोते हैं, व्यर्थता में जो बिना रीढ़ के झुक जायँ—उनको मैं कभी माफ नहीं कर सकता। मीनाक्षी, जो लोग आत्मीय, कुटुम्ब, बालबच्चे लेकर चार प्राणियों को खिलाकर भलमनसी का जीवन बिताते हैं उन पर श्रद्धा करता हूँ, पर भलमनसी का जीवन ही एकमात्र जीवन नहीं है, दुःख में और विपत्ति में बृहत्तर मानव-जगत् को केन्द्रित कर जिन्होंने जीवन का विस्तृत रूप नहीं देखा है उसे मैं पूर्ण रूप से श्रद्धा न दे सकूँगा।

मीनाक्षी ने जवाब न दिया, हावड़ा स्टेशन में घुस कर गाड़ी टिकट-घर के पास आ खड़ी हुई।

कुली ने चमड़े के दोनों बैग उतार लिये। गाड़ी से उतर कर कंकर ने मोटर का किराया चुकाया। कुली ने पूछा, किस गाड़ी से जायँगे ? कंकर बोला, तुम थोड़ी देर बाद आना, ज़रा सोच कर बतायेंगे।

मीनाक्षी बायीं ओर के ज़नाने वेटिंग रूम में गयी और पाँच मिनट के बाद पूरी तौर से सामान्य कपड़े लत्ते पहने निकल आयी ? चमड़े का बैग खोल कर बनारसी साड़ी रख दी। बोली, छुट्टी मिली, इतनी देर बाद भूत ने छोड़ा।

कंकर बोला, अब ठीक। 'सबसे पीछे, सबके नीचे, सर्वहारा के बीच।' कहाँ चला जाय बताओ तो मीनू ?

मीनाक्षी बोली, जिधर तबियत हो। रुपया है, सोना है, स्वास्थ्य है और हृदय में साहस है—जिधर ख़ुशी हो चलो !

कहाँ का टिकिट ख़रीदा जाय ?

दिल्ली, बम्बई, मद्रास, आसाम—कहीं का भी।

यही ठीक।—यह कह कंकर आगे बढ़ा और लिलुआ के दो सेकेंड क्लास टिकिट ले आया।

मीनाक्षी बोली, लिलुआ के टिकिट! यह क्या किया? इतनी दूर जाओगे?

कंकर मज़ाक़ में बोला, अब दुनिया में न रहेंगे, संन्यासी हो जायँगे।

वहाँ क्या कोई आश्रम है ?

वह देश अद्भुत है ! वहाँ स्वर्ग है। रुपये का आठ मन चावल, शेर बकरी एक घाट पानी पीते हैं। कण्व मुनि का आश्रम है, वहाँ शकुन्तला मिलेगी।

हँसी दबा कर मीनाक्षी बोली, चलो, यह अच्छा है, मैं दुष्यन्त को देखूँगी।

कुली से दोनों बैग उठवा कर दोनों प्लेटफार्म पर चले। साढ़े दस बजे रात की गाड़ी थी, छूटने में देर न थी।

ट्रेन के डिब्बे के पास आकर मीनाक्षी बोली, सच सच बताओ कहाँ जा रहे हैं ?

तुम कहाँ जाना चाहती हो ?—कंकर ने पूछा।

सच बताऊँ ?

झूठ भी कह सकती हो।

मैं घूमना चाहती हूँ। रोज़ नींद से जाग कर मानो नये देश में आ पहुँचे। बीच बीच में थक कर रुक जायँगे, फिर चल पड़ेंगे। यों कि देखते देखते देखने का अन्त ही न हो।

और कुछ नहीं ?

और कुछ भी ।—लोगों की भीड़ की ओर देख कर मीनाक्षी बोली, और भी कुछ, पर कहते शरम आती है ।

साफ साफ कहो ।

वही करूँगी । तुम्हारा सा अद्भुत सहारा । जिसमें ज़िम्मेदारी की समझ न हो, बुरे भले की विवेचना न हो—जिसका निष्ठुर निर्लिप्त स्वभाव किसी भी आपद् से, किसी भी विपत्ति से न डरे । तुम्हारा निभृत साथ ।

नमस्कार, कंकर बाबू ।

कंकर सहसा घूम पड़ा ।

अरे, कंकर बाबू ? कहाँ चले ?

आप ही कंकर बाबू हैं ? नमस्कार ?

क्यों भाई कंकर ? कहाँ तक ?

कैसे रहा कंकर ? बहुत दिनों बाद मुलाकात हुई ।

अरे कंकर, पगले, कहाँ भाग चला ?

ब्रेवो कंकर, गुड ईवनिंग ।

गद्यकवि कंकर ? कहो बंधु कैसे रहे ?

देखते देखते दोस्तों का झुण्ड कंकर को घेर कर खड़ा हो गया । कंकर ने उन सबके सवाल का जैसा तैसा जवाब देकर छुटकारा पाना चाहा । बोला, तुम आप लोग सब कहाँ चले ? देखता हूँ कि छोटे बड़े मझोले सभी तरह के साहित्यिकों का दल है । जाना कहाँ होगा ?

काशी में साहित्य-सम्मेलन है । चलेगा ?

कंकर बोला, साहित्य-शाखा-विहारी कौन है ?

भुजंग भूषण भंज ।

अरे बाप, वही बड़े दाँत वाले महाशय ? तांत्रिक साहित्य के वे वाम-मार्गी ? देख कर डर लगता है ।

एक साप्ताहिक के सम्पादक ने निवेदन किया, आइये न काँकर बाबू, आपके रहने से ख़ूब—

एक साहब ने हाथ पकड़ कर खींचा। सब ही लोग अनुरोध करने लगे। कंकर ने पूछा, आप सब जा रहे हैं ?

ज़रूर। वहाँ अबकी दक्षयज्ञ होगा। भुजंग भंज का अभिभाषण होगा। विषय है—'आधुनिक साहित्य का जाल।'

रवि बाबू का आशीर्वाद मिल गया है ?

हाँ, दो लाइन। 'तुम लोगों के सम्मेलन की पूर्ण सफलता की कामना करता हूँ।'—इति–'श्री' हीन—रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

खाना पीना कैसा रहेगा ?

ओः काफ़ी इंतज़ाम है। इसी लिये तो इतनी भीड़ है। आधुनिक साहित्य को कौन कौन गाली देगा ?

भुजंग भंज, अनुकूल हाती, यादव मौलिक, हरिकेशव हालदार, कुशल खास्तगीर, करंजाद्दा कारफरमा—सब बड़े बड़े रथी महारथी हैं। गदायुद्ध में ख़ूब धूल उड़ेगी, सर सलामत लौट सकें तब है।

तो ठहरो, पहले इजाज़त ले लूँ।—कहकर कंकर गाड़ी में मुँह बढ़ा कर मृदु कंठ से बोला, मीनाक्षी, मुझे ले जाने का लालच इन्हें क्यों है, समझीं ?

ओठ काट कर मीनाक्षी आहिस्ता से बोली, समझी, तुम्हें ले जाने से मेरा भी सामीप्य मिलेगा, इस आशा से। उनमें कवि कितने हैं ?

वे तो सभी कवि-प्रतिभा वाले हैं।

तब तो हमारी आफ़त है। कोई गल्प-लेखक भी है ?

सभी।

तब तो मेरी साड़ी के आँचलपर कहानी लिखेंगे। चरित्रहीन कितने हैं ?

कंकर बोला, बेचारे बड़े ग़रीब हैं, चरित्रहीन होने लायक़ पैसे उनके पास नहीं हैं। थोड़ी-बहुत अश्लीलता मात्र करते हैं।

नक़ाब भलमनसी की है ?—मीनाक्षी ने पूछा।

हाँ, इसीलिये ख़तरनाक हैं।

अच्छा तो है, चलो न, ज़रा मज़ा रहेगा।—कहकर मीनाक्षी गाड़ी से उतर आयी। पीछे से उसकी देह और रूप पर घुसपुस होने लगी। चमड़े के दोनों बैग लेकर मीनाक्षी को घूरते कंकर के दो भक्त चलने लगे। ऐसे अनुगत भक्त संसार में बड़े दुर्लभ होते हैं।

इंटर क्लास का डब्बा रिज़र्व कराया था। दूसरी कोई औरत नहीं थी, मीनाक्षी ही अकेली मक्खी रानी थी। बदन चादर में लिपटा था, सिर पर घूँघट,—कंकर के सिवा और किसी के समीप मीनाक्षी घूँघट नहीं खोलती थी,—फिर भी उसी में साहित्यिक दल ने तृषित दृष्टि से देख लिया कि काले बालों की वेणी रुपहले जरी के फीते से सजायी गयी है। काले आकाश में बिजली की चमक है। एक नये कवि को कविता का मसाला मिल गया। चाल कैसी राजहंसिनी सी है। वनहंसिनी सी! एक कवि ने उसकी ओर देखा। गल्प-लेखक ने सोचा, गजेन्द्रगामिनी है,—पर नहीं, उस तरह की स्थूलांगिनी तो नहीं है। उम्र कितनी है यह पता नहीं लगा,—मीनाक्षी कपड़े से मुँह ढाँके थी। एक ने सोचा आग है। पर सारा शरीर चादर से ढका था, जो देख कर नशा होता उसे देखने का उपाय नहीं था। दोनों चरण कवि के हृदय के रक्त से लाल रहते हैं, दोनों काले नेत्रों में कवि को अतल गहराई में डूब मरना होता है। मीनाक्षी गुड़ीमुड़ी होकर दोनों पैर ढके बेंच के एक कोने में बैठी बाहर को ओर ताक रही थी। उसने प्रतिज्ञा कर ली थी कि दूसरी ओर मुँह नहीं फेरेगी और बदन पर से चादर नहीं हटायेगी। ज़रा भी हँसेगी नहीं, आग की एक चिनगारी भी न देगी।

सीटी बजी और गाड़ी चल दी।

कंकर ने सबके बीच में स्थान लिया, अर्थात् जिसके साथ ऐसी विचित्र रूपिणी हो उसे सबके बीचोबीच जगह न देने से प्राणों की तृप्ति कहाँ?

रूपवती तरुणी साथ रहने से संभ्रान्त समाज में जैसी अहेतुक खातिर होती है, आई० सी० एस० पति के साथ जाने से औरतों में जिस प्रकार पद-मर्यादा बढ़ती है, उसी तरह साहित्यिकों के दल में गद्यकवि कंकर का—कंकर के प्रति उनकी छिपी ईर्ष्या, आक्रोश और अवहेलना रहने पर भी—उन्होंने आदर सहित बैठाया। एक ने तो कटाक्ष से मीनाक्षी की ओर देख कर ठंडी साँस छोड़कर कहा—कंकर। मैंने निश्चय किया है कि तुम्हारी कविता पर एक लेख लिखूँगा। यह महिला कौन है भाई?

एकाएक मीनाक्षी के अधर दिखायी पड़े, मानो 'पक्वबिम्बाधरोष्ठी' हो। वयस्क समालोचक फौरन पुलकित होकर बोले, कंकर, 'जगज्योति' मासिक पत्र में तुम्हारी पिछली कविता पढ़कर बहुत आनन्दित हुआ। आखिरकार समझ में आ गया कि गद्य कविता की भी संभावना है।

जिन साहित्यिकों में उसकी निन्दा हुआ करती थी, जो लोग संक्षिप्त समालोचना की चोट देते रहते—वे ही आज कंकर के सहयात्री थे। पर पहिया किस रास्ते घूम गया इसका पता लगाना कठिन था। कंकर को घेर-कर अंधस्तुति शुरू हो गयी। जो अत्यन्त निरादर से मौखिक सौजन्य द्वारा कंकर की रचना पर बहुत दिनों से अभिभावकत्व दिखाते आ रहे थे स्वयं उन्हीं धनंजय तलापात्र ने मीनाक्षी की ओर अलक्ष्य रूप से ताकते हुए कंकर से बातचीत शुरू कर दी।

इधर मनस्तत्त्व का विश्लेषण शुरू हो गया। कवि तथा साहित्यिकों की बातचीत का ढंग मीनाक्षी के अस्तित्व के स्पर्श-दोष से दूषित हो उठा। कोई तो अति विनय, कोई शिवेलरी, कोई बुद्धि-कौशल, कोई बात में या काम में कोशिश कर मननशीलता का परिचय—पारस्परिक प्रतियोगिता में इस तरह दिखाया कि मीनाक्षी को घूमकर देखना पड़ा। मीनाक्षी को जानने की चेष्टा और उनके बताने का आयोजन हुआ।

मीनाक्षी ने दृष्टिपात कर जानना चाहा कि यह किस जाति के जीव हैं और उन्होंने बताना चाहा कि हम साधारण मानव से विशिष्ट हैं, हम

[illegible] मानव-भाग्य-विधाता लोगों का दल हैं। हमारी कलम की चोट से वसन्त ऋतु रोमांचित हो उठती है, सामान्य स्त्री विप्लवकारिणी नायिका बन जाती है, कामुकता प्रेम हो जाती है और जीवन काल्पनिक स्वप्न हो जाता है।

गाड़ी अंधकारपूर्ण रात्रि को भेदती चली जा रही थी। ट्रेन की गति और हिलना डुलना और भीतर बाहर के अंधकार ने मिलकर कल्पनाश्रयी साहित्यिकों के दिमाग में एक नशा पैदा कर दिया। किसी की आँखों में रस का आवेश था, किसी में मादकता थी, किसी का बोहीमियन मन पंख खोलकर दोनों ओर के जंगलों में उड़ने लगा था, कोई गंभीर आलोचना में डूब रहा था, कोई जीवन-व्यथा में तो कोई अपनी विद्वत्ता-वर्णन के अतिरंजन में मस्त था।

मीनाक्षी ज़रा घूमकर बैठी। एक हाथ बाहर निकालकर सिर का घूँघट ज़रा खींचा। हाथ की सुडौल मसृण कोमलता से उन लोगों में मनस्तत्व का आलोड़न जाग उठा। मानो चन्द्रमा के घूमने से समुद्र में ज्वार-भाटा आने लगा।

कवि शशीकान्त ने रूमाल से मुँह पोंछा, नवीन चटर्जी ने कुरते के बटन बन्द किये, हरिचरण ने सिर के बाल ठीक किये और हलधर गुप्त ने हँसकर मुँह फेर लिया। जो सबसे तरुण थे, श्रीमान् अनिल राय, वे बड़े तपाक से खड़े होकर बोले, यहाँ बहुत लोग उपस्थित हैं, चलती गाड़ी में ही एक साहित्य-सम्मेलन न हो जाय?

मुँह घुमाकर कंकर बोला, विषय क्या रहेगा अनिल बाबू?

रख लो 'युद्धोत्तर साहित्य का स्वरूप।'

मीनाक्षी ओठ सिकोड़ कर मुस्कराई। कंकर बोला, अपना वक्तव्य आरंभ करें, अनिल बाबू?

तिरछी नज़र से श्रीमान् अनिल राय ने मीनाक्षी के मुस्कराते, मुँह की ओर देखा। नायिका के मुँह पर सुधा संकेत देखकर तरुण कथा साहि-

त्यिक शिखा की तरह चमक उठा। बोला, हम लोगों ने निश्चय किया है कि यहाँ आप ही भाषण करेंगे। हम सब एकमत हैं।

अग्रज के समान धनंजय तलापात्र बोले, बोलो न कंकर, सुनते सुनते सो जायँ।

खड़े होकर कंकर ने कुरते की आस्तीन समेटीं। एक बार नज़र चुरा कर मायावी मोहिनी की ओर देखा। अधर पर हँसी की रेखा, सिर के ऊपर की बत्ती से हल्की सी रोशनी सिर के बालों से छन कर उन्हीं अधरों के मरण-तीर्थ पर पड़ रही थी—यही यथेष्ट था; उसके रक्त के कण कण में एक प्रमत्त उत्साह की बिजली दौड़ गयी।

उपस्थित भद्र मण्डली—कंकर ने मौनरूप मीनाक्षी का अनुमति-जनक इशारा पाकर आरंभ किया,—युद्धोत्तर साहित्य के मूल में तीन विषय हैं। नव्य अर्थनीतिशास्त्र, साम्यवाद और मनोविश्लेषण। इन तीन विषयों ने मनुष्यलोक में उथल पुथल ला दी है। गत महायुद्ध तक प्राचीन पृथिवी जीवित थी, उसकी मृत्यु के पश्चात् नव जीवन आज है। मैंने अर्थशास्त्र में देखा कि पृथ्वी दो दलों में बँटी है—एक दल धनी है, दूसरा दल दरिद्र; साम्यवाद में पृथ्वी के सर्वसाधारण लोग एकत्रित मिले,—वे समस्त वर्गों के श्रमिक सम्प्रदाय वाले हैं, वे उन लोगों के विरुद्ध एक महासमर की ओर अग्रसर हुए हैं जो पूँजीवाद का सहारा लेकर क़दम क़दम पर संसार का विनाश ला रहे हैं। मनोविश्लेषण में मुझे संशय, अविश्वास, नास्तिकता और अश्रद्धा मिली। ध्यान, धारणा, नीति, धर्म, प्रेम, मानवता—सभी एक एक कर संकटग्रस्त हुईं। विज्ञान की प्रचण्ड उन्नति के साथ साथ सार्वभौम निरीश्वरवाद आ गया। घर उजड़े, समाज टूटा, मन टूटा। आधुनिक शस्त्रास्त्र, हवाई जहाज़, रेडियो, टेलिविज़न, सिनेमा, मुद्रण यंत्र, उग्र राष्ट्रीयता—इन सब से सभ्यता दूषित हो गयी। जीवन द्रुत और मरण द्रुततर हो गया। पृथिवी अनाविष्कृत और विशाल थी, पर अब अत्यन्त क्षुद्र हो गयी, शरीर से शरीर छिलने

लगा। यह हुई युद्धोत्तर साहित्य की पृष्ठभूमि। आज साहित्य-रचना के लिये कोई निर्दिष्ट सिद्धान्त और मार्ग नहीं, क्योंकि इन सब परस्पर विरोधी जटिल आदर्शवाद के प्रबल संघर्षों में मनुष्य के मस्तिष्क में प्रतिदिन अनन्त समस्याएँ और उद्भ्रान्त चिन्ताओं की विडम्बना दिखाई पड़ती है। साहित्य के चिरन्तन सिद्धान्त, मानव का आदिम रोमांस, नर-नारी का चिर-कालीन सम्पर्क, समाज की सुप्राचीन शृङ्खला—सब कुछ आज आपद्ग्रस्त हैं। बन्धुगण, आधुनिक भारतवर्ष आज योरप का शिष्य हो गया है। राजनीति, शिक्षा-प्रणाली, विज्ञानबुद्धि, सामाजिक आदर्श, न्याय संगत विचारधारा—यह सब समुद्र पार की चीज़ें हैं। किन्तु गुरु की दशा जब इस प्रकार दिग्भ्रान्त है, शिष्य की अवस्था बड़ी पतली है। मनोविज्ञान और साम्यवाद के विरुद्ध एक दूसरी ही प्रबल शक्ति संग्राम में उतर पड़ी है, वह है पूँजीवाद का ही एक हिंसात्मक संस्करण, उसका नाम है फ़ासिस्ट। आधुनिक योरपीय सभ्यता की दीवार बारूद पर खड़ी है—एक ओर असन्तुष्ट वंचितों का दल जनसामान्य का समान अधिकारवाद चाहता है, और दूसरी ओर फासिस्टवाद से प्रभावित पूँजीवाद का स्वेच्छाचार पृथ्वी का अधिनायकत्व चाहता है—इन दोनों के संघर्ष से प्रचण्ड विनाश-शक्ति पैदा हो उठी है। आधुनिक साहित्य में इसी लिये वीभत्स मलिनता की भाप फैल गयी है। आधुनिक साहित्यिकों को इसी में से जीवनदायक पदार्थ निकालना होगा। भविष्य की जो प्रतिभा आज भी सुस्पष्ट नहीं हुई है, उसकी रचनाओं में मात्र दुःखवाद, निराशा, वेदना, उपेक्षित प्रेम, भ्रान्त धर्मबुद्धि, उद्भ्रान्त आदर्श, जटिल समस्याओं का आलोड़न—इत्यादि विषय न रहेंगे। उसके शक्तिवान् जीवन का आदर्शवाद संसार में शृङ्खला और शान्ति लायगा। हमारे कंकालों पर वे नूतन मानव-सभ्यता का निर्माण करेंगे। युद्धोत्तर साहित्य के प्राणों में से हमें यह संकेत मिल रहा है। प्रगतिशील साहित्य का पथ इसी ओर है।—यह कह कर कंकर बैठ गया और मीनाक्षी को ख़ुश करने के लिये साहित्यिकों ने तालियाँ बजायीं।

श्रीमान् अनिल राय उछल पड़े और बोले, ख़ूब, बढ़िया, युगान्तर-कारी ! रामाचारी भुजंगभूषण के बजाय कंकर बाबू को ही साहित्य विभाग का सभापति बनाना उचित था। धनञ्जय भाई, आपकी क्या राय है ?

प्रवीण धनञ्जय सुँघनी सूँघ कर बोले, ऐं ?

आपको भाषण कैसा लगा ?

अपने मुँह पर हाथ फेर कर धनञ्जय तलापात्र बोले, मुझसे पूछते हो ? हुँः। माने—देखता हूँ कंकर ने कुछ लिखा पढ़ा है। अच्छा है !

कंकर बोला, अख़बार के सिवा और कुछ नहीं लिखता पढ़ता धनञ्जय दादा।

ट्रेन बहुत दूर चल चुकी थी। रात बहुत बीत गयी। कितने स्टेशन निकल गये पता नहीं। साहित्य-सम्मेलन बुरा नहीं जमा था।

कवि शशीकान्त बोले, भुजंग भंज का सभापति भाषण किस विषय पर है यह जानते हैं धनंजय दादा ?

धनंजय बोले, बहुत संभव है कि जो लोग धोखा देकर वर्तमान साहित्य में प्रसिद्ध होना चाहते हैं उन पर कटूक्ति हो !

और जिनमें कुछ मौलिक है ?

अगर है, तो वे कहेंगे कि आधुनिक साहित्य में दुर्नीति है।

सामाजिक अथवा यौन दुर्नीति ?

दोनों ही। प्राचीन साहित्य की शुचिता आधुनिक लेखक मानते नहीं। वे अश्लील हैं, असंयत—उनकी रचना माँ बहिनों के हाथों में नहीं दी जा सकती है,—यही विषय लेकर यादव बाबू आन्दोलन खड़ा करेंगे।

उनका पक्ष कौन-कौन समर्थन करेगा ?

उनमें प्रधान हैं प्रसिद्ध समालोचक बुलडाग साहब। वह अकेले ही काफ़ी हैं।

श्रीमान् अनिल राय ने प्रार्थना की, साहित्य में दुर्नीति के सम्बन्ध में अपनी राय बतायेंगे ?

कंकर मुस्करा कर बोला, यह बिल्लियों का झगड़ा है। उसमें औरतों को मज़ा आता है। वह ज़नाना तर्क है।

मीनाक्षी ने मुस्करा कर मुँह पर कपड़ा लपेट लिया। पर एक महिला की मौजूदगी में महिलाओं पर इस प्रकार के एक आकस्मिक आक्षेप से साहित्यिक चौंक पड़े।

नवीन चटर्जी बोले, क्या आप कहना चाहते हैं कि स्त्रियाँ ही यह विवाद उठा सकती हैं?

कंकर बोला, मैं कहना चाहता हूँ कि स्त्रियाँ ही नरक का द्वार हैं, इस लिये उनके विचार का भार स्त्रियों के ही हाथ अच्छा है। पुरुषों को बहुत काम हैं।—यह कह कर उसने मीनाक्षी की ओर कटाक्ष किया।

दबे गले से हरिचरण सरखेल बोले, यदि आपकी सहचारिणी को इस विषय पर बोलने का आमंत्रण दूँ तो आपको आपत्ति होगी?

ज़रा भी नहीं।—कंकर ने मीनाक्षी की ओर मुख़ातिब होकर कहा, श्रीयुक्ता सहचारिणी देवी, साहित्य में दुर्नीति के बारे में आपको एक जोशीली वक्तृता देनी होगी। तशरीफ़ लाइये।

द्रुतगतिशील सम्मेलन-गृह स्तब्ध हो गया। विस्मित, विमूढ़ साहित्यिकों के गिरोह ने अवाक् होकर देखा उनकी कवि-कल्पना मानो प्राणवन्त हो उठी।

कंकर बोला, आप सब लोगों से परिचय करा दूँ। यह हैं मीनाक्षी देवी एम० ए०। इनका पेशा है शिक्षक का, इन्होंने ही देश में मोन्टेसोरी प्रणाली की शिक्षा जारी करने के लिये बहुत से अँगरेज़ी अख़बारों में लेख लिखे हैं—पर गुमनाम। भारतवर्ष में इस समय पैंतीस करोड़ आबादी देख कर इन्होंने अपनी दुनिया नहीं बसायी। इनका एक परिचय है कि यह प्रसिद्ध समाजवादी हैं, इनकी प्रकृति में साम्यवाद का बीज भी है; इनका और परिचय है कि यह सुगायिका हैं, रवि बाबू के साहित्य की भक्त हैं।

सुहासिनी युवतीमूर्ति देख कर धनंजय तलापात्र के मन में भी मानो

उभार उठी। वह उत्साहपूर्वक बोल उठे, कंकर, तुम ऐसे बदज़ात को इनके साथ देख कर एक दुर्भावना होती है।

मुस्करा कर मीनाक्षी ने जवाब दिया, आपको घबराने की कोई बात नहीं। अब तक मेरा चमचमाता परिचय सुना, पर अन्दर ही अन्दर मैं भी बदज़ात हूँ!

साहित्यिक लोग मन ही मन फूल कर चिल्ला उठे।

मीनाक्षी ने शुरू किया—

प्रियवरेषु, इस सभा में सभापति नहीं इसलिये धन्यवाद। अब तक जिन लोगों ने मेरी तारीफ़ की उनको भी साधुवाद। मालूम पड़ता है कि स्त्रियों के मन में साहित्यिकों का वास है, इसीलिये सुख्याति पाकर तृप्ति होती है, और साहित्यिकों के मन में जो स्त्रियों का निवास है, उसका प्रमाण है कि वे ललितकला में आनन्द पाते हैं। ललितकला की अधिष्ठात्री देवी भारती हैं—जो सतीत्व का आदर्श नहीं मानतीं। साहित्य की दुर्नीति की जड़ यहीं है।

हियर, हियर—

मीनाक्षी बोली, दुर्नीति और तथाकथित अश्लीलता ही साहित्य का प्राण है। यह दोनों ही जिस प्रतिभा के हाथों सुन्दर हुई हैं उसे ही हम कहते हैं सत्साहित्य। राम की बहू राम के साथ गृहस्थी करने लगी, यह बात कहते ही कहानी मिट्टी हो जाती है। पर महाकवि वाल्मीकि ने कहा, नहीं, राम की बहू को रावण ले भागा, तब होगा साहित्य। द्रौपदी के साथ अर्जुन घर-बार करता तो ठीक होता, पर वेदव्यास बोले, न, एक औरत का पाँच आदमी मिल कर दखल करें तो लिखी जाय महाभारत। ग्वाले का बिस्तर छोड़ कर श्रीमती राधा यमुना-तट पर व्यभिचार करने गयीं—ऐसी दुर्नीति के आनन्द का कीर्तन सारा भारत गाने लगा। हैमलेट की माँ देवर के साथ दुर्नीति में डूब गयी—ऐसे शेक्सपियर को सबने आदर दिया। और आगे आजकल के समय में बढ़ चलिये। नाम न लूँगी, पर ग़ौर

कीजिये, यौन दुर्नीति की ढेर की ढेर अश्लीलता को जिन्होंने प्रश्रय दिया उसकी ही सारे देश ने बड़ाई की। सब ही ने कहा, यही तो उच्च कोटि की कला है। इसका सबब क्या है? इसका सबब है कि स्वयं देवी भारती दुर्नीति-प्रिय हैं, इसका सबब मानवी सृष्टि के मूल में चरम अश्लीलता का विशाल अग्निकुंड है—उससे आपके भुजंग भंज और बुलडाग साहब कोई नहीं बचे हैं।

हियर, हियर,—ख़ूब, और बोलिये—

मीनाक्षी बोली, प्रिय सखागण, पति-पत्नी, अथवा माता-पुत्र को लेकर एक तरह का भिन्न साहित्य है ज़रूर, नर-नारी की स्थूल देह को लेकर भी एक तरह के फूहड़ साहित्य का प्रचार किया जाता है—पर इन दोनों की जगह कहीं नहीं है। फूहड़ साहित्य सभी लिख सकते हैं पर दुर्नीति साहित्य लिखने में प्रतिभा चाहिये। नीति का प्रचार कर साहित्य का संस्कार नहीं होता, पर रस के आदर्श का प्रचार करने से वह बहुत काम देगा। मॉडल पास रहने से मूर्ति बनाना आसान होता है। यह बात आप लोग जानते हैं कि उच्च कोटि की दुर्नीति और अश्लीलता को केन्द्रित कर संसार के सर्वश्रेष्ठ आर्ट की सृष्टि हुई है—इस बात को स्वीकार करने में कोई शर्म नहीं है। फिर भी मैं कहूँगी कि इनके व्यवहार करने की एक शिक्षा और योग्यता है। चीज़ एक ही है—पर एक घूरे पर जाती है, दूसरी रस-साहित्य के महलों में। जो लोग बारूद को काम में लाना जानते हैं वे अँधेरी रात में आसमान में फूल खिला देते हैं, पर जो नहीं जानते वे हाथ जलाकर अस्पताल चले जाते हैं। अच्छे लठैत को लाठी चलाते देख कर आनन्द आता है पर अनाड़ी के हाथों लट्ठमलट्ठा ही होता है। बन्धुगण, दुर्बल कामुकता देख कर घिन लगती है, पर बलिष्ठ अश्लीलता से समस्त प्राण पुलकित हो उठता है।— यह कह कर मक्खी रानी तालियों की गड़गड़ाहट में अपनी जगह पर जा बैठी। साहित्य-सम्मेलन में तरंग उठा दीं, मानो जीवन-मरण को दोलायमान कर दिया हो।

भक्तों के दल में प्रशंसात्मक आलोचना आसानी से रुकना ही नहीं चाहती थी। क्योंकि सुन्दरी और स्वास्थ्यवती युवती के मन का प्रतिवाद करने का साहस इनमें था नहीं।

*

* *

रात दो बज गये, पर सोया कोई नहीं। धनञ्जय तलापात्र सुँघनी सूँघ कर ऊँघने लगे, और दूसरे साहित्यिक बारी बारी से इधर ताकते हुए मन ही मन विप्लवी नायिका को सामने रख गल्प और कविता लिखने लगे। यह एक ज्ञान है, युवती के मुँह से दुर्नीति का समर्थन उनमें से बहुतों के लिये बिलकुल अनोखा अनुभव था। इस अनुभव को किस प्रकार काम में लायें, इसी सोच-विचार में वे अन्दर ही अन्दर डूबने-उतराने लगे।

अधमुँदी आँखों से एक बार धनञ्जय बोले, सब कुछ तो समझ लिया पर बात कुछ ठीक समझ में न आयी, समझे हरिचरण?

हरिचरण फुसफुसा कर बोला, इसमें खास समझने की क्या बात है धनंजय दादा?

तुम क्या समझो, यही समझो कि उनका साथ—

जी, कंकर को तो आप जानते ही हैं,—फिर अब बाप की दौलत हाथ लग गयी है। यानी, मेरा मतलब है—

तुम क्या कहना चाहते हो सो समझता हूँ। पर क्या जानते हो?—कह कर धनञ्जय ने असीम उदासीनता से चेहरे के भावों को छिपा कर कान में कहा, लड़की की बातचीत जो भी हो पर चरित्र—

हरिचरण बोला, शायद वैसा अच्छा नहीं है।

धनञ्जय की छोटी छोटी आँखें मानो चमक उठीं। वे बोले, न, मैं वह सब शक नहीं करता, पर जानते हो—

क्या, बताइये?

उस छोकड़े पर मेरा बड़ा स्नेह है।

अगर स्नेह है तो आपने उस थियेटर के साप्ताहिक में कंकर की व्यक्तिगत निन्दा गुमनाम क्यों लिखी?—हरिचरण ने पूछा।

समझते क्यों नहीं? —धनञ्जय बोले, स्नेह करता हूँ इसीलिये तो डाटता हूँ।

अखबार में बुराई करना शासन है, धनंजय दादा?

असीम उदारता से धनंजय तलापात्र बोले, सच कड़ुआ होता है तो तुम खफ़ा क्यों होते हो?

हरिचरण हँस कर बोला, कालेज के प्रिंसिपल की चुराई आपकी थीसिस जब हर अखबार में पकड़ी गयी,—उस समय तो आपने कड़ुए सच का प्रचार नहीं किया?

देखता हूँ तुम आहिस्ता आहिस्ता बड़े घमंडी होते जा रहे हो।—थोड़ा उत्तेजित होकर धनंजय बोले, बड़ी उम्र न होने से यह बात नहीं समझोगे कि जहाँ पेट का सहारा हो वहाँ होशियारी से रहना होता है।

हरिचरण खामोश हो गया।

कुछ देर बाद धनंजय बोले, शायद उन लोगों ने अब शोर बन्द कर दिया,—वह देखो, युवक लोग सोने की कोशिश कर रहे हैं। अच्छा हरिचरण, क्या तुम समझते हो कि कंकर उससे शादी करेगा?

हरिचरण बोला, करना न करना उसके लिये एक ही बात है।

तो हालत क्या होगी?—यानी भविष्य की बात कह रहा हूँ।

आजकल रुपया ही सामाजिक समस्याओं का इलाज है।

पर व्यक्ति-परिचय?

पैसे के ज़ोर से बनेंगे।

पारिवारिक बन्धन और शान्ति?

नवीन व्यवस्था में नये परिवार बनेंगे। जो लौंडे विलायत से मेम ब्याह कर लाते हैं वे कैसे घर गिरस्ती करते हैं?

ब्याह तो होता है ?

हरिचरण बोला, अगर वह ब्याह होता है तो यह उससे कम नहीं है।

धनंजय ने आँख बन्द कर दबी आवाज़ से कहा, समझा, पर इतने युवकों के सामने कंकर को बैठा कर ऐसी अश्लील भाषा में लड़की लेक्चर कैसे दे गयी हरिचरण ? और इस पर भी कंकर सह गया ? प्रेमिका का यह घोर दुराचरण कोई प्रेमी सहता है ?

वह शिक्षा का नतीजा है। शायद आपको अभी भी इतना प्रकाश नहीं मिला है, इसलिये आपको चोट लगी।

अपने मुँह पर सहसा हाथ फेर कर संशय और अविश्वास की रेखाओं को पोंछ कर धनञ्जय बोले, क्या जानो, साहित्यिक होकर मुझमें यह गंदा कुतूहल न होना ही उचित है। पर मेरा मन कहता है कि ········यानी, तुम क्या कहते हो ?

मुस्करा कर हरिचरण बोला, आप पकड़ में नहीं आना चाहते। मेरे ही मुंह से स्वीकार करा लेना चाहते हैं—क्यों ? लड़की यदि संभ्रान्त समाज की वेश्या भी हो तो कुछ आता जाता नहीं—उसका व्यक्तित्व ही साहित्यिकों की कल्पना की चीज़ है।

थोड़ी ही देर के लिये सन्देह और अश्रद्धा से धनंजय का मुँह विकृत हुआ, पर उसके बाद ही थोड़ा मुस्करा कर हरिचरण की पीठ ठोंकते हुए उच्छ्वसित होकर बोले, तू आजकल बड़ा शरीर होता जा रहा है हरिचरण।

हरिचरण हँसता हुआ उठ कर दोस्तों में जा बैठा। मन ही मन कटाक्ष कर बोला, तुम्हें समझता हूँ धनंजय तलापात्र।

मीनाक्षी की आँखों में नींद नहीं है, ककर के मुँह पर तन्द्रा की छाया भी नहीं। मीनाक्षी उन लोगों की ओर से घूम कर उसके साथ अनर्गल बकवास कर रही थी। उसकी बातों का अन्त ही नहीं, जैसे नदी के प्रवाह में लहरें समाप्त नहीं होतीं। गाड़ी धड़घड़ाती तीर की तरह चली जा रही थी। दोनो ओर जंगल के अँधेरे में प्रेतकाय वृक्षों का समूह सनसनाता

पीछे छूटता जाता था। द्रुतगामी ट्रेन के हचकोलों, पहियों के शोर और हवा के अल्हड़ प्रलाप में मीनाक्षी की अनर्गलता में एक प्रकार की चंचल प्राणमयता संचारित हो उठी।

इधर वे लोग एक एक कर कवि-कल्पना के नशे में धीरे धीरे तन्द्रा में आच्छन्न होते गये। जिसके कारण मधुमक्खियों का गुञ्जन था वह तो पास ही बैठी थी, दिन के प्रकाश में उससे समझा बूझा जायगा—आज की रात आराम से सो लेने से शरीर और मुँह कल नारी के मनोरंजन योग्य होंगे। धनंजय अपनी नाक में अंतिम बार सुँघनी लेकर चादर में सर लपेट पड़ रहे, साहित्य सम्मेलन का भाषण मन ही मन दुहराते सो भी गये। पाँच ही मिनट में हरिचरण की नाक भी बजने लगी।

वसन्तकाल की रात थोड़ी ही शेष थी, तीन घंटे में ही तरुण प्रभात का प्रकाश दिगदिगन्त में फैल गया। मित्र-मंडली जाग कर इधर उधर देखने लगी—उनकी आँखों में विस्मय और करुणा थी; सहसा वे कलरव कर उठे। उसी कलरव में व्याकुल होकर श्रीमान् अनिल राय धनञ्जय के शरीर को ठेलते हुए चिल्लाने लगे, उठिये, उठिये धनञ्जय दादा, उन लोगों का करतब सुना? भाई वाह!

कवि शशीकान्त विस्मय में भर कर बोले, रात में न जाने कब उतर कर दोनों कहीं चले गये।

साहित्य-रस का प्रयोग कर मौलिक बोले, अनजान देश के दुस्तर अंधकार के दुर्गम लोक में।

ग्यारह

मरुभूमि के सोने के बालों में चुपके से कह गयी
सागर की हवा—
चंगेज़ ख़ाँ का घोड़ा छुटा है मध्य एशिया के बालू के थपेड़ों में
बद्दू स्त्री के हाथों खजूर की शराब पी कर।
व्याघ्र भागा अरण्य से आकाश के आषाढ़ की ओर,
गर्जन कर पुकारता बोला, मेरी आत्मा के साथ
पृथिवी जयी हिट्लर की आत्मीयता है।
सिंह ने अपनी पूँछ काट बाघ की पूजा का उपचार जुटा दिया।
बोला, पशुराज शिशु, शृगाल का अनुकरण।

मेरे भीतर आकर अड्डा जमाया सागर के पक्षी के
असहाय कलरव ने,
और ईगल के डैनों के झपट्टे ने,
उसके साथ बायरन के शोचनीय मरण का निःशब्द
हृदय-विदारक कारुण्य। असुर की मृत्यु!
मैं काँप उठा,
ग्राम के शस्य की भीरुता की गन्ध में,
जलसिक्त मैदान के बाद धूप की नील-बैंजनी मरीचिका में—
मुझे मिला ईश्वर का कंकाल!
शीतार्त दिनों की धूप में उग आयी
आदिकाल के ऋषि मुनियों की फ़सल।

झिलमिली झालर झलक रही है नदी के आलोक और छाया में,
अमरीकन फ़ियोर्ड तट पर पाल चढ़ाये
बैठ गये मछली मारने
मानव के पूर्व पुरुष फँस गये जाल में,
प्रवाल की हड्डियों पर जम गयी उनकी सभ्यता
और ईर्ष्या, और महानुभवता,
बैठ गया प्रेम और रक्त चूस कर आहार केन्द्र ।
मुनि ऋषियों की फसल लहरा रही आलोक प्रकाश में ।

मैं बीज मंत्र जपता पड़ा हूँ घर में,
अहिंसा नहीं, चंगेज ख़ाँ,
ईश्वरभीरुता से मेरी अश्रद्धा और विरक्ति—
मन्दिर की धूप की गन्ध में मिला उत्पीड़ित
मानवता के अन्तिम निश्वास का चिह्न ।
और प्रेम आविष्कृत हुआ झोपड़ी में
हब्शी स्त्री के गूँगे चक्षु में,
कदर्य मांसपिंडमय प्रणयी के अन्ध, पंगु अधर में—
विषाक्त वाष्प के संसर्ग से मृत्यु-तुल्य ठंढा ।
वात्सल्य का उदाहरण
फ्रैंको के रणक्षेत्र में—
पुरुष वेश में माँ, बरफीली हवा के कणों में
और दुस्तर मृत्यु प्रान्तर में
और अन्धकार में—
माँ चली है छाती की ओट प्रदीप लिये
मरणजयी सन्तान के अन्तिम दृश्य में !
सहसा प्रहरी की बुलेट की चोट से छिन्न भिन्न हुई छद्मवेशिनी माँ !

तुम्हें बड़ा अच्छा मौक़ा मिल गया है, न ?—मीनाक्षी आँख घुमा कर बोली, गद्य कविता बिलकुल रक्तबीज की तरह छा गयी, सुनूँ तो बात क्या है ?

कंकर बोला गतिशील गद्यमय जीवन पर कविता का छायापात है।

गद्य कविता माने ?

तेल पानी का गाढ़ आलिंगन।

बहुत ख़ूब ! तुक मिलाने के लिए दिमाग़ परेशान नहीं करना पड़ता, मात्रा गिनने का झंझट नहीं, और सबसे मज़े की बात है,—विचार संगति बिठा कर चलने की मुसीबत नहीं। ख्याति का मार्ग बिलकुल साफ़ है।—मीनाक्षी बोली, साहित्य में एक नया उत्पात लगा ही है।

मेरी कविता तुम्हें कैसी लगती है, मीनाक्षी ?

मीनाक्षी पास आ हँस कर बोली, सच कहूँ ?

निर्भय होकर।

कविता से कहीं ज्यादा तुम मधुर हो। तुम्हारी कविता तो उन्हें अच्छी लगे जिसके लिये तुम लिखते हो, पर मैंने तो स्वयं कवि को पा लिया है।

कंकर बोला, सुन कर वैसा अच्छा नहीं लगा।

मीनाक्षी बोली, गंगा की धार मे जनपदवासी अवगाहन करें, किन्तु मेरे अधिकार में तो साक्षात् गंगोत्तरी है।

बातचीत बिहार के एके छोटे से स्टेशन के वेटिंग रूम में चल रही थी। बेंत की एक बेंच पर सोकर मीनाक्षी ने रात बितायी थी, और कंकर सोया था मेज़ पर। सोने के गहने और नोटों की गड्डी भरे चमड़े के दोनों बैग लापरवाही से पैताने पड़े थे। उन्हें कहीं निर्दिष्ट रूप से जाने की फ़िक्र नहीं थी—दोनों निश्चिन्त, निस्पृह होकर सबेरे से काव्य-चर्चा कर रहे थे।

वेटिंग रूम अजीब लगता है। कितने लोगों का आना-जाना होता है, और कितना अपरिचय है।—मीनाक्षी बोली—और उस बूढ़े वेटर को देखा है—उदासीन, निर्मम—जैसे कोई लम्बे चौड़े हिसाब की बही हो।

तभी एक कुली ने आकर पूछा, आप लोग किधर जायँगे ?

मीनाक्षी बोली, सोच कर कहना मुश्किल है।

स्टेशन मास्टर साहब पूछते हैं।

कंकर बोला, स्टेशन मास्टर साहब से कह दो कि हम लोग पथभ्रान्त युवक-युवती हैं।

मीनाक्षी हँस पड़ी। बोली, थोड़ी थोड़ी राह जानते हैं। अच्छा कुली, यहाँ खाना कहाँ मिलता है ?

कौन चीज़ ?

पूरी, तरकारी, मिठाई, दूध—

मैं ला दूँ ?

बड़ी मेहरबानी होगी, कुछ खाना ला दो। मीनू पैसे दो।

पैसे लेकर कुली चला गया। मीनाक्षी बोली, सचमुच, कहाँ चला जाय, बताओ तो ?

कंकर कहने लगा, रवि बाबू से पूछने पर उन्होंने कहा, 'सब ठाँइ मोर घर आछे आमि सेइ घर मरि खूँजिया।'

मीनाक्षी हँस कर बोली, उन्होने यह बात भी कही है, 'धरणीर एक कोने रहिबो आपन मने ?'

अच्छा मीनाक्षी ! कंकर उत्साहित होकर बोला, ख़ूब बढ़िया तरह रहना चाहिये न ?

लोगों की सुन्दर की धारणा अलग अलग है, तुम्हारी क्या है ?

कंकर बोला, बताना मुश्किल है क्योंकि जीवन सब तरह से आदर्श का प्रतिवाद है। जिन्होंने कहा है 'धरणीर एक कोने रहिबो आपन मने' उन्होने ही एक बड़े भारी शिक्षाकेन्द्र की जटिलता में जीवन बिताया। जीवन क्या है, जानती हो ? विरोधी विभिन्न कर्म और आदर्शों की एक गोलमोल पोटली। काम से वाणी का मेल नही, और मन के साथ प्राणों का मेल नहीं। जीवन एक तरह की बड़ी भारी असंगति और असमन्वय की सूची

है, इसमें कहीं ऐक्य नहीं है, सरलता नहीं है, कहीं भी सुस्पष्ट पक्ष का इंगित नहीं है।

इसी समय स्टेशन मास्टर दरवाजे के पास आकर खड़े हो गये।

कहिये?—ककर ने पूछा।

उन्होने प्रश्न किया, आप कहाँ जायँगे?

कंकर बोला, घूमने निकले हैं इसलिये कहीं भी जा सकते हैं।

वे बोले, घूमने के लिये इस ओर बुरा अवश्य नहीं है, जलवायु भी अच्छी है। पश्चिम की ओर जाने से गया ज़िला मिलता है, पूरब में सोन नदी है, और उत्तर में जंगल हैं। आप लोग मोटर-बस में जायँगे न?

वह कोई बात नहीं।—कंकर बोला, बैलगाड़ी मिले तो भी राज़ी हूँ।

बैल गाड़ी?—स्टेशन मास्टर ने दोनों को सर से पैर तक देखा, तब हँस कर बोले, आप लोग बैलगाड़ी पर क्यों चढ़ेंगे?

मीनाक्षी बोली, हर्ज क्या है स्टेशन मास्टर साहब? लौटने की या पहुँचने की कोई जल्दी नहीं है,—इसके सिवा घूमना आहिस्ता आहिस्ता ही अच्छा है। पैदल जाना भी बुरा नहीं है।

सो क्यों, आपको तकलीफ होगी। अच्छा, बताइये अभी आप किधर जायँगे?

कंकर बोला, यहाँ कुछ दिनों रहने लायक जगह है?

स्टेशन मास्टर साहब बोले, आप लोगों के लायक जगह,—यही समझ लें कि स्टेशन के सिवा और कहीं कुछ नहीं मिलता ऐसा एक भी आदमी नहीं दिखाई पड़ेगा जिससे बातचीत की जाय। हाँ, अगर सोन नदी की ओर जायँ, वह करीब तीस मील है, तो एक छोटा बाज़ार मिल सकता है। आज सनीचर है, सोमवार को वहाँ हाट लगेगी। उधर जायँगे? पर रास्ता बहुत अच्छा नहीं है।

यानी?

समझे नहीं, आप परदेशी हैं, इधर के लोग दरिद्र हैं, रात घनी,

रास्ता भी ख़राब,—भुट्टे के खेत हैं, रेतीली नदी—यह सब पार करके ज'ना होगा।

मीनाक्षी बोली, स्टेशन मास्टर साहब, आप एक बैलगाड़ी का इंतज़ाम कर दें, हम लोग सोन नदी के रास्ते से ही जायँगे।

स्टेशन मास्टर साहब ने अचम्भे से इस दुस्साहसी स्त्री को देखा। यह औरत देशी है—इस बात पर विश्वास करना कठिन है। अश्रद्धा के साथ इसकी प्रशंसा करने की इच्छा होती है। स्त्री के प्रति उनका मन मानो घृणा से भर उठा। उन्होंने अपने मन के भाव को दबा कर कंकर की ओर देख-कर कहा, क्या आपकी भी यही राय है?

जी हाँ।—कंकर ने जवाब दिया। बोला, सब तरह के आराम और सुभीते को खोज कर और दिन का हिसाब लगा कर जो घूमने निकलते हैं हम लोग उनमें से नहीं हैं। आप कृपा कर वही इन्तज़ाम कर दें।

आप लोगों का बिस्तर कहाँ है?

कंकर ने मीनाक्षी की ओर देखा, और मीनाक्षी ने कंकर की ओर। चलने की ही बात वे सोचते हैं, शयन की समस्या उनके मन में नहीं उठती। पर बहुत दफ़ा बहुत सी असुविधाजनक अवस्थाओं में वे जिस कल्पनाशीलता का परिचय दे आये हैं, उसका यहाँ भी व्यतिक्रम न हुआ। दोनों पहले ज़ोर से हँस पड़े। फिर कंकर बोला, वह बात न बताना ही अच्छा है, स्टेशन मास्टर साहब। एक ही मिनट रह गया था कि हावड़ा स्टेशन पर आ पहुँचे, जल्दी में दोनी बैग का ध्यान ही रहा, बिस्तर कहाँ रह गया इसका पता ही नहीं। लगेज का किराया देने के डर से बिस्तर में खाने के बर्तन भी छिपा कर लाया था—जाने दीजिये अब उस बात को।

ऐसी घटनायें होती ही रहती हैं। स्टेशन मास्टर साहब ने विश्वास कर लिया। संकटापन्न व्यक्ति के प्रति अहेतुक सौजन्य दिखा सकने और उसके प्रति कुछ भलाई करने में एक तरह की ख़ुशी होती है। स्टेशन मास्टर साहब बोले, अच्छा मैं गाड़ी का इन्तज़ाम किये देता हूँ। पहुँचने

में एक दिन और एक पहर लगेगा। अगर आज्ञा दें तो मैं आपकी कुछ मदद कर सकता हूँ। मेरा घर यहीं नज़दीक है।

आप क्या यहाँ सपरिवार रहते हैं ?

हाँ, कुछ ऐसे ही। रात भर जाग कर गाड़ी से आये हैं, आइये न हमारे यहाँ ज़रा आराम करके तब जायँ।

खाने से आप खिलाना चाहेंगे ?

तो वह क्या ऐसा बड़ा अन्याय होगा ? आपके साथ खाने पकाने का सामान नहीं है, बिस्तर नहीं, यह अपरिचित देश है, आप लोगों को छोड़ भी कैसे दूँ। आपके चलने से मुझे बड़ी खुशी होगी।

कोट पैंट पहने और सिर पर टोपी लगाये रेल कर्मचारी के सिवा अभी तक इसे और कुछ न समझा। मीनाक्षी ने सहसा मुँह उठा कर उसकी ओर ताका। वह युवक नहीं था, प्रौढ़ भी नहीं,—उसकी उम्र का ठीक-ठीक अन्दाज़ नहीं लगता था। रंग साफ था, पर स्वास्थ्य का तेज कम था। बदन की हड्डियाँ चौड़ी थीं, पर मुख सूखा, कुछ रक्तहीन-सा था। इतनी देर तक नज़र नहीं पड़ा था, अब दिखायी पड़ा, सफेद मैले ज़ीन के कोट में उल्टे छेद में मुहरदार पीतल के बटन लगे थे। इस प्रकार की लापरवाही स्टेशन मास्टर के लिये ठीक नहीं थी।

क्या कहती हो !—कंकर ने पूछा।

नारी की आदिम कुतूहल वासना बोल उठी। मीनाक्षी बोली, चलो, चला ही जाय।

पर अगर इसी बीच आपकी गाड़ी आ जाय !

दोपहर को एक मेल पास करेगी—उसके लिये ये मेरे असिस्टेंट हैं। चार बज कर पच्चीस की पैसेंजर मैं अटेंड करूँगा, तब तक मेरी छुट्टी है। तो चलिये।

तभी पहले वाला कुली खाना ले आया। स्टेशन मास्टर बोले, डेरा पर ले चलो।

वे दोनों आगे आगे चले। मीनाक्षी ने खाने का दोना हाथ में लिया। कुली ने सिर पर दोनों बैग उठाये। अनजान मार्ग में अप्रत्याशित अयाचित आतिथ्य मिल गया। स्टेशन पार कर मास्टर साहब दोनों को रास्ता दिखाते ले चले। स्टेशन के चारों ओर एक साधारण विहारी गाँव था। उसी के एक ओर रेलवे के एक पक्के मकान में सब लोग जा पहुँचे।

*
* *

अन्दर कच्चे आँगन और दालान में तीन चार लड़के-लड़की उछल कूद कर रहे थे। सहसा नवागत दो लोगों को देख कर वे बिजली के वेग से इधर-उधर भाग गये। मास्टर साहब रास्ता दिखा कर उन्हें अन्दर लाये।

मीनाक्षी बोली, उनकी माँ कहाँ हैं मास्टर साहब ?

मास्टर साहब ने विनयपूर्वक हँस कर जवाब दिया, पहले आराम करें, एक एक कर सब कुछ देख लेंगे।

अपरिचित स्थान, अपरिचित लोग, इसलिये बात न बढ़ा कर मीनाक्षी चुप रह गयी। मास्टर साहब ने जल्दी से एक दरी बिछा दी और कुली ने एक ओर दोनो बैग रख कर पास के कुएँ से दो बाल्टी पानी ला दिया।

आप बैठें, मैं चाय भिजवा दूँ।—अरे सुक्खन, हाथ धोकर चाय का इन्तज़ाम कर दे।

दस मिनट में ही पता नहीं किस रसोईघर से दो प्याला गर्म चाय आ गयी। मीनाक्षी बोली, मास्टर साहब, मैं बच्चों को खाना देना चाहती हूँ।

मास्टर साहब बोले, नये आदमी देख वे लोग डर कर भाग गये हैं। इस समय बुलाने से किसी तरह भी न आयेंगे।

वे सब ही आपके बच्चे हैं ?

सर झुका कर उन्होंने जवाब दिया, जी, ऐसा ही समझिये।

कंकर ठठा कर हँस पड़ा। बोला, इसमें कुछ आपको शक है ?

मास्टर साहब उसकी हँसी में शरीक न हो सके। विवश अप्रतिभ दृष्टि से देख ज़रा रुक कर बोले, नहीं—शक क्या है।

उनके व्यथा भरे उत्तर से कंकर की हँसी रुक गयी। चाय के प्याले की ओर देख कर मीनाक्षी बोली, तो फिर खाना आप अपने ही हाथों उन लोगों को दे दें।

उसमें से आप लोग कुछ नहीं खायेंगे ?

तभी कुली ने दोनों हाथों में अंडे और पापड़ लाकर जमीन पर रख दिये। खुश होकर कंकर बोला, हमारे लिये इतने में ही चल जायगा, और खाने की ज़रूरत नहीं है। आप उन लोगों को दे दें।

मास्टर साहब बोले, उठा ले रे सुक्खन, लड़के लड़कियों को बाँट दे। सुक्खन कुली नहीं, मेरा ही नौकर है, हाँ मुसाफिरों का सामान उठा कर दो चार आने कमा लेता है। वर्तन भांड़े ज़रूर नहीं माजता। चाय पीकर आप लोग इस कमरे में चले आयें, यही एक तरह से बैठक है। सुक्खन यहाँ रहेगा, आप लोगों को सब बता देगा। आप लोग आराम करें, मैं ज़रा स्टेशन से—

हाँ, हाँ, ठीक है।

आध घण्टे के लगभग इन्तज़ार करने पर भी बच्चे फिर न दिखायी पड़े, वे सब एक दम देश छोड़ कर भाग गये थे। दोनों मेहमान उठ कर कमरे में गये। सुक्खन कमरे में दोनो बैग रख आया। कमरे में तख्ते और कड़ी लगा कर एक पार्टीशन था; और पार्टीशन के दूसरी ओर रसोई थी, इसमें कोई सन्देह नहीं रह गया। कड़ाही-करछुल, थाली-गिलास की आवाज़ से मीनाक्षी को यह समझने में कुछ बाक़ी न रहा कि झटपट रसोई चढ़ाई जा रही है। पर अभिमान से कोई फायदा नहीं, मास्टर साहब ने ख़ुद अपनी पत्नी से परिचय नहीं कराया। गृहिणी भी स्वेच्छा से छिपी रहीं, ऐसी अवस्था में कुतूहल दिखाना सामाजिक अभद्रता होती,—और जिस सबब से भी हो अन्तरंग सम्पर्क स्थापित करने में जो नाराज़ हों उनके लिये उत्सुकता

दिखाना बिलकुल व्यर्थ है। मीनाक्षी ने इसको चुपचाप स्वीकार कर लिया। कंकर चुपके से बोला, खाना पीना करने के बाद ही निकल पड़ेंगे ?

मुँह फुला कर मीनाक्षी ने जवाब दिया, और नहीं तो मास्टर की स्त्री के साथ बैठ कर प्रेमालाप करोगे ?

बहू का मुँह भी तो दिखायी नहीं पड़ा।

माने ?

माने—परकीया सम्पर्क योग्य है या नहीं—

चार पाँच बच्चे हैं, यह पता है ?

औरतें किसी भी उम्र में उपेक्षा योग्य नहीं होतीं।

तो मैं मास्टर को पकड़ूँ ?

पकड़ के ही तो उसके घर आयी हो !

अपने सतीत्व पर तुम्हारा यह आक्षेप सहन न करूँगी।

तुमने पहले मुझ पर लम्पट होने का आक्षेप किया है।

मीनाक्षी बोली, हमारे बीच बहू ने झगड़ा करवाया। मुझे उसका घमंड असह्य है।

कंकर बोला, तुम्हारी सहनशक्ति की ओर देख कर उन्होंने अपने घमंड का साँचा नहीं बनाया। मैं उनकी ओर हूँ।

मुस्करा कर मीनाक्षी बोली, चुप चुप, वह सुन लेंगी, कर क्या रहे हो ?

ग्यारह बजे तक मास्टर साहब लौट आये। आकर देखा कि मेहमानों ने स्नान कर लिया है। मीनाक्षी ने ग़ौर से देखा कि इस बार वे पूरी तौर से गंजी धोती पहने देशी वेश में थे। वह बोली, आप भी स्नान कर लें, मास्टर साहब।

हाँ, ज़रा देर और। आप लोगों को बड़ा कष्ट हुआ।

कंकर बोला, आप निश्चिन्त रहें, अंडा और पापड़ अभी तक हज़म नहीं हुए।

वे नम्रतापूर्वक बोले, आप मेहरबानी कर कमरे में ही रहें, नहीं तो बच्चे किसी तरह पास नहीं आयँगे। मैं उन्हें नहला दूँ।

अच्छी बात है, हम कमरे मे ही हैं, बल्कि दरवाज़ा भेड़े देते हैं।—यह कह कर मीनाक्षी ने सचमुच दरवाज़ा भेड़ दिया।

दरवाज़ा तो बन्द हो गया, पर रसोई की ओर कान लगाये वे लोग अकेले में बातचीत बन्द किये रहे। सामाजिक परिधि में वे कहीं नहीं थे, इसी लिये निर्जन गली घाट में मनुष्यों के समाज के बाहर उनका मन अच्छी तरह खुलता। मन में ऐसा आता कि वे घर में रहनेवाले मानव नहीं हैं, चलना-फिरना बन्द होने पर उनके मन में मैल भरने लगता और चलते-चलते वे अपने को खोज पाते, रुकते ही वे चौंक उठते।

तख्त पर शरीर फैला कर मीनाक्षी बोली, आदमियों में आकर रहने से डर लगता है, बताओ तो क्यों ?

उसके एक हाथ पर सर रखे लेट कर कंकर बोला, तुम्हारे मन में पाप है।

ऐहै पुण्यात्मा, क़ीमत चुकानी ही पड़ती है, यह याद रखो। सच कहती हूँ कि तीसरा व्यक्ति आते ही अपनी ओर आँख पड़ती है कि हम कौन हैं ? हम क्या हैं ?

कवित्व करते हुए कंकर बोला—हम दोनों अनादिकाल से हृदय-उत्स से युगल प्रेम के स्रोत में डूबे आ रहे हैं। तुम रवि बाबू की इतनी भक्त हो और उनके काव्य में से मतलब की बात नहीं खोज पातीं !

समझी। पर वह हमारे लिये क्या दवा बतायेंगे जानते हो ?

क्या ?

मीनाक्षी बोली, लड्डौषधि !

कंकर हँस पड़ा। उसके बाद बोला, अच्छा तुम क्या चाहती हो ?

मीनाक्षी बोली, 'धरणीर एक कोने रहबो आपन मने।'

मुझे लेकर या छोड़कर ?

जिस हाथ पर कंकर का सर था, उसी हाथ से कंकर का सर ज़ोर से दबा कर मीनाक्षी बोली, 'धन मान नहीं, कुछ प्रेम मात्र।'

समझा, अर्थात् मैं भी रहूँगा पर कविता में जो 'मात्र' है उसके माने क्या होते हैं पता है? उसके माने होते हैं धोबी की सूची, ग्वाले का हिसाब, बनिये की रक़म और नन्हे बच्चों की बीमारी में डाक्टर के यहाँ भागना।

यह न हो सकेगा, मुश्किल है। उससे अच्छा है छोड़ दो, रोती रहूँगी। पर घर बड़ा भयानक है।—मीनाक्षी उत्तेजित होकर बोली।

कंकर बोला, मेरी राय मे उससे अच्छा है कि थोड़ा कवित्व करके ज़िन्दगी बिता दो।

वह कैसे?

हल्के स्वर की बातें करे, हल्की चाल चले। अत्यन्त गुरु गंभीर जीवन-यापन करने से काम नहीं चलेगा मीनाक्षी। काम का जीवन ही बेकार है, वैसे ही जैसे आँखों पर पट्टा बाँध कर बैल की तरह घूमना होता है।

मीनाक्षी बोली, पर शहद की मक्खियाँ भी तो छत्ता लगाती हैं, कंकर?

वह अपनी गुनगुनाहट के आनन्द में। वे भी पूर्णिमा की रात को मधु खाकर भाग जाती हैं—चाँदनी में मस्त होकर झूमती हैं।

और मक्खी रानी?

वह मायाविनी निरुद्देश्य शून्य में उड़ जाती है। नये मधुचक्र की सृष्टि के विचित्र पथ को खोजती घूमती है।

तो मक्खी रानी के हृदय की मुसीबत नहीं है?

पुरुषों के रहता है हृदय, स्त्रियों में होती है प्रकृति।

बातों ही बातों में दरवाज़े की आवाज़ हुई। मीनाक्षी हड़बड़ा कर उठ बैठी। बाहर से मास्टर साहब ने कहा, अब आप लोग आयें, आसन बिछ गये हैं।

जी, आये।—मीनाक्षी ने उत्तर दिया। उसके बाद दोनों निकल आये। सोलह उपचार से तीन थाल सजाये गये थे। जिसके हाथों इस तरह सफ़ाई से तीनों थाल सजाये गये थे, दुःख है कि अन्नपूर्णा के वे दोनों हाथ आँखों

की ओट रहे। पर तीन आसनों की ओर देख कर मीनाक्षी ने हँसी रोक ली। एक फटी दरी का टुकड़ा था, दूसरा कमरे की खिड़की का एक पल्ला, और तीसरा किसी दैनिक अखबार का एक ताव था।

मास्टर साहब बोले, धूप इतनी है, इसी लिये आप लोगों के लिये दूध के बजाय दही का इन्तज़ाम किया है। और वह यहीं की मिठाई है, यहाँ दूध का रिवाज बहुत है। मछली, गोश्त, अंडा—जो तबियत हो खायें। दाल खाकर ठंडक आयेगी। उधर केला, नीबू, चीनी है।

मीनाक्षी बोली, इतने थोड़े वक़्त में इतना आयोजन देख कर ताज्जुब होता है।

कंकर बोला, इसी का नाम होता है गृहलक्ष्मी।

मास्टर साहब बच्चों की तरह हँस पड़े, बोले, गृहलक्ष्मी किसे कहते हैं पता नहीं।

दोनों ने जिज्ञासु दृष्टि से उनकी ओर ताका। बातचीत में सबेरे से वे मानो बराबर ही एक विशेष प्रश्न को बचाते रहे थे। उनकी सकौतुक हँसी में मानो एक सुदूर हँसी का आभास मिलता हो। पर वे मुस्करा कर सिर नीचा किये खाने के लिये उद्यत हुए, बात आगे न बढ़ाई।

बच्चों का खाना-पीना हो गया?

जी हाँ।

पर उनमें से कोई पास नहीं आया।

छोड़िये—मास्टर साहब बोले, समझते हैं कि आप लोग शेर भालू हैं। चुपचाप खा-पीकर बाँस के बगीचे में भाग गये। आप लोग चले जायेंगे, तभी घर में घुसेंगे।

दोनों हँसे। खाते-खाते कंकर बोला, हम लोगों की गाड़ी का इन्तज़ाम हुआ?

जी हाँ, अभी वह बैलगाड़ी ले आया है। अगर एक दिन रुकना चाहें

तो कोई असुविधा न होगी, पर अगर जाना ही हो तो आप लोगों को अभी निकल पड़ना होगा।

हमें अभी जाना होगा, मास्टर साहब। आपके निस्स्वार्थ आतिथेय से हम लोग सचमुच अभिभूत हैं। हम बड़े गौरव से आपको याद करते रहेंगे।

भोजन के बाद सुक्खन पान-सुपारी ले आया। मास्टर साहब बोले, आप लोग थोड़ा आराम कर लें, गाड़ी अभी आती है। अरे सुक्खन, आप लोगों के कपड़े तह कर बाँध दे। आप लोग कमरे में चल कर तयार हों, मैं अभी आता हूँ, एकदम ही निकलना होगा।—यह कह कर वे चले गये।

कमरे में आकर पान चबाते हुए कंकर बोला, यहाँ आज तुम्हारी हार हुई।

कपड़े बदलने के लिये मीनाक्षी ने दरवाज़ा बन्द कर दिया, बाद में बोली, क्यों ?

तुम्हारा अहंकार था कि किसी से कुछ न लेंगे। आज यहाँ से तुम ले ही चलीं, देकर कुछ न जा सकीं।

मीनाक्षी बोली, जो दे जा सकी उसे मामूली मत कहो, काँकर। कुछ जानना न चाहा, कुछ कहना भी न चाहा, औ परिच्छन्न आत्मीयता से सेवा कर दी—आश्चर्य है !

कंकर ने फिर बात न की। सामने रेल की लाइन पर एक मालगाड़ी मंथर गति से पार हो रही थी। खिड़की में मुँह डाल कर मीनाक्षी बोली, यह जगह कैसी निर्जन है। कहीं गाँव का निशान नहीं, मैदान ही मैदान है। दूर दूर तक—

सहसा खिड़की के नीचे एक गढ़ैया की ओर नज़र पड़ते ही वह विस्मय से बोल उठी, अरे, मास्टर साहब वहाँ क्या कर रहे हैं !—घूमकर घबड़ाई हुई वह फिर बोली, मास्टर साहब का पेट इतना गहरा है ? ठहरो तो, देखूँ ज़रा—

कहाँ जा रही हो ?

आई—

घर से निकलते ही सुक्खन बोला, मा जी, गाड़ी आ गयी।

अच्छा।—कह कर पीछे के दरवाज़े से मैदान में निकल कर मीनाक्षी ने पुकारा, मास्टर साहब ?

मास्टर साहब उस समय कपड़े का एक टुकड़ा पहने एक तलैया के किनारे बड़े इत्मीनान के साथ बर्तन माँज रहे थे। राख से सने हाथ उठा-कर बोले, हाँ, हो गया।

आप यह काम क्यों करते हैं, मास्टर साहब ?—कहती हुई मीनाक्षी तलैया के किनारे जा खड़ी हुई।

मुस्करा कर वे बोले, यह तो मैं ही करता हूँ। पहले बहुत असुविधा होती थी, पर अब आदत पड़ गयी है।

कोई नौकर नौकरानी क्यों नहीं रखते, यह सवाल करने से शायद उनकी ग़रीबी की ओर इंगित करना होगा, फिर भी मीनाक्षी अपनी उत्तेजना और वेदना का दमन न कर सकी। बोली, नौकरानी रखने की सुविधा शायद आपको नहीं है, पर यह काम आपकी पत्नी तो कर सकती हैं।

पत्नी !—मास्टर साहब एक बर्तन धोकर हो हो कर हँसने लगे,—बहुत बढ़िया बात है, ब्याह ही कब किया है जो पत्नी—

मीनाक्षी स्तब्ध होकर विस्मय से ताकती रह गयी, उसके बाद मृदु कंठ से पूछा, तो इतनी देर में खाना किसने बनाया, मास्टर साहब ?

भाई वाह, मैंने ही तो बनाया। देखा नहीं कितनी कमी थी, कैसा गड़बड़ था,—आज आप लोगों का खाना ही न हुआ।

मास्टर साहब, तो फिर बाल बच्चे ?

बर्तन धोने के बाद उन्हें उठा कर मास्टर साहब बोले, जब आ गयी हैं तो ज़रा मेहरबानी कर यह थाम लें, हाथ पाँव धो लूँ।—बाल बच्चे ! वह तो मेरे भाई बहन हैं, एक तरह वे मेरी सन्तान ही के बराबर हैं।

लड़की और एक लड़का सौतेले हैं और दो भाई मेरे सगे हैं। बाप मर गये, दोनों माँ मर गयीं, अब केवल मैं रह गया। छुटपन से आदमी बनाया--बताइये क्या करूँ। अब सारा दिन मेरा अपना है।

बर्तन लिये मास्टर साहब आगे बढ़े।

लीजिये आपकी गाड़ी आ गयी, अब और देरी न करें। मैं कपड़े बदल लूँ।

मीनाक्षी के दोनों पैर मन मन भर के हो गये। उसकी आँखों में कभी किसी भी सबब आँसू नहीं आते थे, पर एक अजीब आवेग को छिपाने के लिये उसने इधर-उधर देख कर स्वस्थ होने की चेष्टा की। हठात् आँखों के सामने दीवार पर टँगा मास्टर साहब का ज़ीन का कोट दिखाई पड़ा—और कुछ न पाकर उसने कोट उतार उसके उल्टी तरफ़ लगे बटन सीधी ओर लगाना शुरू किया। थोड़ी भी सेवा कर सकने पर मानो उसे अपने ही निकट तृप्ति मिल पाती।

मास्टर साहब उस समय भी पास के कमरे में सजते हुए मन ही मन हँस रहे थे। शायद सोच रहे थे, यह महिला उनके बारे में ख़ूब धोखा खा गयीं। एक बार मुँह इधर कर बोले, ब्याह करने का समय ही न मिला—समझीं न? बाल-बच्चों का लिखना पढ़ना, बीमारी, पकाना खिलाना, कम पैसों की नौकरी,—यह सब हुआ ही न? अरे सुक्खन, दोनों बैग गाड़ी पर रख दे।—ओ गाड़ी वाले, अच्छी तरह से पुआल बिछा दे। यह लोग हमारे घर के हैं, होशियारी से ले जाना—समझा?

बहुत अच्छा सा'ब।

नमस्कार, प्रतिनमस्कार, सामाजिक सौजन्य इत्यादि खतम कर तीनों निकले। दोनो बैग गाड़ी में रख कर गाड़ीवान ने बैलों को हाँका। स्टेशन पार कर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के रास्ते उन लोगों को जाना होगा।

लेवेल क्रासिंग पार होने पर मीनाक्षी बोली, मास्टर साहब, हम लोगों को आशीर्वाद दें। एक निवेदन और है, यदि आपकी अनुमति हो--

ख़ूब, कहिये, कहिये—

मैं आपके इस मन्दिर में कुछ निशानी रख जाना चाहती हूँ—

अब शायद मुझे बखशीश देने की पारी है ?

आप ब्राह्मण हैं, आपका जिससे संभ्रम क्षुण्ण हो ऐसा काम मैं न करूँगी। मैं अपनी होनेवाली भावज के लिये कुछ सौग़ात रख जाना चाहती हूँ।

होनेवाली भावज ? ओः समझा, हाः हाः हाः हाः···अरे गाड़ीवान, ज़रा ठहर,—हाः हाः हाः हाः हाः—अजी हज़रत, आप आगे क्यों बढ़े जा रहे हैं ? ज़रा अपनी पत्नी की बात सुन लें—

पास से ही कंकर हँस कर बोला, भाई बहिन का नाटक हो रहा है, इसमें मैं दर्शक भर हूँ, मास्टर साहब।

मुट्ठी में मोती जड़े दोनों झूमके लेकर मीनाक्षी ने झुक कर उनके पैरों के निकट रखते हुए कहा, यह मेरी बड़ी साध है, आपको लेना ही पड़ेगा।

मास्टर साहब बोले, देखिये दीदी, कुछ पाने की उम्मीद से आपकी सेवा नहीं की थी, कुछ मिल गया यह सोच कर अपमान भी न सोचूँगा। जो कुछ दिया है उसे सर पर रखता हूँ। आपकी होनेवाली भावज के लिये या नहीं यह पता नहीं, पर बहन के ब्याह में यह काम आयेगा—यह बताये देता हूँ। उस कलमुँही लड़की की हरकत देखीं ? परसों एक गिलास फेंक कर मारा, यह देखिये एक दाँत तोड़ दिया !—यह कह कर टूटा दाँत दिखा कर वे स्नेह भरी हँसी हँसने लगे।

एक बार फिर नमस्कार कर कंकर गाड़ी पर चढ़ा और मीनाक्षी ने भी उसका अनुसरण किया। गाड़ी आहिस्ता आहिस्ता चलने लगी और उसकी छाजन में से हाथ जोड़े दोनों मुस्कराते मास्टर साहब को देखते रहे। वे तब तक टूटा दाँत निकाले हँस रहे थे।

*

* *

मार्ग समाप्त होने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि मार्ग निरुद्दिष्ट था। सवाल उठ सकता था कि वे चले कहाँ थे ? उत्तर होगा, उन्हें भी पता नहीं। उन्होंने तो मझधार में नाव छोड़ दी थी। वे बहुत दिनों से कलकत्ते में जो तर्क-वितर्क करते रहे, वह उनका वास्तविक परिचय नहीं था, वह पग-पग पर अनिरुद्ध वन्य जीवन चाहते थे। एक कवि था, दूसरी कवि-धर्मिणी---किन्तु आधुनिक समय में जन्म ग्रहण करने से थोड़ा भौतिकवाद के निकट थे। वे रास्ता परख कर चलते थे, कविजनोचित शून्यता में डूबे नहीं घूमते थे। कवि तो थे, पर गद्य कविता के कवि।

मैदान में राह की धूल उड़ाती गाड़ी चली जा रही थी। अन्दाज़ से चार मील चल चुके थे। ऊँचे नीचे रास्ते के हचकोलों से मीनाक्षी फूस के बिछौने पर सो गयी थी। उसकी श्लथ तनुलता में एक विचित्र पर-निर्भरता का कोमल भाव झलकता था। एम० ए० पास छात्रवृत्ति पायी लड़की, अपनी मित्र-मंडली में इंटेलेक्चुअल प्रसिद्ध---किन्तु उसकी यौवनोच्छ्वल श्रान्त देहलता में मानो लिखा हो,---जहाँ चाहे ले चलो, तुम्हीं धर्म हो, तुम्हीं स्वर्ग हो। इस प्रकार पुरुष के आश्रय में लड़कियाँ ही निरुद्वेग हो सकती हैं। कंकर ने स्नेह सहित उसकी आँख पर से बालों का गुच्छा हटा दिया। मुस्करा कर मन ही मन बोला, शायद यह अच्छा लगता है !

यह अच्छा है या नहीं वह शायद ख़ुद भी नहीं जानता। रुपहला जरी का फ़ीता आप ही आप वेणी से खुल पड़ा। फूस के बिस्तर पर सिर के नीचे लगाने के लिये एक तकिया भी नहीं था। धूल भरे दोनों पैरों में महावर का अस्पष्ट निशान था। शृंगार के आडंबर की ओर मोह नहीं था, फ़ैशन की ओर उत्सुकता नहीं---और स्त्रियों के लिये जो सबसे ज्यादा लालच की चीज़ है,---जिसके लिये अक्सर वे मान संभ्रम खोने में भी पीछे नहीं रहतीं,---उन ही गहनों के लिये आसक्ति नहीं। यह पराश्रिता अपनी इच्छा से सजी थी, उसने आनन्द के लिये भिक्षावृत्ति ग्रहण की थी।

स्त्रियों का जो मूलधन है, अर्थात् शरीर की सफ़ेद चमड़ी और नयी उम्र में देह की रक्षा—यह लेकर उसने बाज़ी नहीं जीतना चाही। अपनी तरुण देह को पुरुष का आधार नहीं बनाया, उसे अपने प्राणों की ऐश्वर्यपुरी मे खींच ले गयी जहाँ कि रस का अशेष भण्डार है। इस प्रकार बन्धन खोल देना ही शायद अच्छा है।

दोपहर की तेज़ धूप में पथ निस्तब्ध है, कहीं कहीं अलक्ष्य वृक्ष के शिखरों पर पक्षियो का श्रान्त कलरव है और चैत की हवा के झोंके बीच-बीच में वैराग्य का गान गा रहे थे। मानव-मानवी कल्पान्तकाल की यात्रा पर चले जा रहे थे—महाकाल के समान हाथ में छड़ी लिये बुड्ढा गाड़ीवान अतीत और भविष्य को हाँकता हुआ चल रहा था। एक मैदान को छोड़ कर दूसरे मैदान में, जन्म से जन्मान्तर में। उसके ही पीछे बहुत दूर तक कच्चे रास्ते पर दोनों पहियों के दाग़ ऐसे दिखाई देते थे मानों दो जीवनों के इतिहास पर रेखा खींचते चले आ रहे हों।

इस प्रकार एक संपूर्ण कविता की निद्रा भंग कर रसाभास करने से काम न चलेगा। विप्लवी ने सोचा, जागृति के अर्थ ही होते हैं आलोड़न और उत्क्षेप। चैतन्य को सुला दो, बुद्धि और मस्तिष्क पर पर्दा डाल दो, हृदयाकाश में पूर्ण साधना ला दो,—उसके बाद केवल देखते रहो, देखा ही करो। देखते रहना ही मानो सब कुछ हो।

कंकर ने और सोचा, जो इतने समीप है; मानो निःश्वास की गर्मी से जीवन-मरण का झोंका लगता हो। ऐसे समीप है कि उसके पाने के लिये कोई संघर्ष नहीं; विरह मिलन के लिये कोई आन्दोलन नहीं। और वह भी कितना? संसार की करोड़ों स्त्रियों की यह भी एक सामान्य अवस्था है, यह भी उस विराट आइडिया का एक बूँद के समान भग्नांश मात्र है। वही केशराजि जिसके रहस्य में चिरकाल से पुरुष स्वप्न बनाता आया है; पुरुष की दस्युता को आदरसहित आह्वान करनेवाला देह का वही पुरातन उपकरण; वही लावण्य, जिसके मधुर अवगाहन में आनन्दलोक के ईश्वरत्व को प्राप्त

किया जाता है—उस पुरातन का कहीं भी किंचिन्मात्र व्यतिक्रम नहीं है। फिर भी सहज ही मानो सहज न हो। अति पुरातन का नवीन प्रकाश ही मानो अत्यन्त विचित्र हो। जो कुछ दिखाई पड़ता है वह मानो प्राचीन का ही नया रूप हो। कंकर ने सोचा, वही फूल खिलता है, वही तारा चमकता है, वही नारी-शरीर में अलक्ष्य यौवन का संवाद आता है, पुरुष के हृदय में वही आदिम चिनगारी है—प्रेम है ? प्रेम ही संसार की प्राचीन-तम कहानी है। जीवन जैसे बहुत पुराना हो गया, अति आदिम केवल उसका आधुनिक रूप बार बार प्रकाश पाता हो। विषयवस्तु सनातन काल की हो और उसका रूप-विधान केवल नया आकार धारण करता हो।

पहियों के ऊँचे-नीचे झोंकों से एक बार मीनाक्षी की नींद टूटी। घूम कर कंकर की ओर देखा—उसकी आँखें नींद की खुमारी में लाल थीं। उसे कुछ विश्वास न हुआ। यह कौन रास्ता है, कौन देश है, कहाँ चले जा रहे हैं, क्यों वह इस गाड़ी में लेटी है, यह साथी कौन है, अपना क्या परिचय है—नींद की खुमारी में उसने कुछ विश्वास न किया। नींद की विस्मृति उस समय भी उसकी जाग्रत-चैतन्य अवस्था को आच्छन्न किये थी। मानो सब कुछ सपने की भाँति अविश्वास्य हो, जागरण के समान अलीक। साँस छोड़ कर मीनाक्षी ने फिर आँखें खोलीं।

कंकर !—बहुत देर बाद उसने आँखें बन्द किये ही पुकारा।

क्यों मीनू ?

आँखें फाड़ कर क्या देख रहे थे ?

तुमको देख रहा था।

क्यों ?

कंकर बोला, डाकू एक स्त्री का अपहरण कर अपने राज्य में उठाये लिये जाता था, वन प्रान्तर, नद-नदी पार कर अनजान देश में,—वही सोच रहा था—

मीनाक्षी बोली, उद्देश्य ?

उद्देश्य उद्दुत साफ़।

मीनाक्षी मुस्कराती उठ बैठी। बोली, मैंने समझा था कि डाकू भी मेरे साथ ही सो गया। पहले से मालूम होता तो होशियार रहती, डाकू को ताकने न देती। अच्छा अब हो चुका सो हो चुका, अब सो रहो। मुलायम कंबल ने बड़ा काम दिया।—अरे गाड़ीवान ?

बुड्ढे गाड़ीवान ने मुँह फेर कर देखा। मीनाक्षी बोली, तुम्हारी बड़ी मेहरबानी है, तुम्हारे कंबल से हमें बड़ा आराम मिला।

गाड़ीवान ने अपनी भाषा में समझा दिया कि कंबल उनके ही इस्तेमाल के लिये मास्टर साहब ने दिया था, वह कम्बल और यह पोटली।—कह कर उसने एक साफ कपड़े की पोटली उनकी ओर बढ़ा दी।

पोटली खोलने पर दोनों अचम्भे में पड़ गये। उसमें रात को खाने के लिये पूरियाँ, तरकारी और मिठाई थीं। एक काग़ज़ की छोटी पुड़िया में थोड़ा सा नमक और हरी मिरच थीं, और साथ में एक टुकड़ा नीबू का अचार। मीनाक्षी ताज्जुब से उन चीज़ों को देखती रह गयी।

आश्चर्य, क्यों न मीनाक्षी ?

मीनाक्षी ने एक बार पीछे रास्ते की ओर देखा। मन्थर गति से गाड़ी चली जा रही थी; रुकने का प्रश्न नहीं था और कहीं पहुँचने का उद्वेग नहीं। यहाँ द्रुतगति के कोई अर्थ नहीं, सारी दूरी को मानो बिन्दु बिन्दु करके जाना हो। इसका नाम है भ्रमण; क़दम क़दम पर नया परिचय, प्रत्येक पद पर नवीन आत्मदर्शन हो। मन में क्लान्ति नहीं, पथ की दूरी मस्तिष्क पर थकान नहीं लाती, मार्ग के अन्त होने की उत्सुकता नहीं। यह कौन देश है, किस गाँव के बाद कौन गाँव है, कितने मील के बाद कौन बस्ती है, किस जंगल के बाद कौन नदी है—इन सब चीज़ों का कोई लेखा जोखा नहीं; यही तो भ्रमण है।

कंकर धीरे धीरे पैर फैला कर लेट गया। मुस्करा कर बोला, क्षीर-

सागर न सही पर शय्या अनन्त है—चरणों की ओर सेवारता लक्ष्मी है। अच्छा लग रहा है।

मीनाक्षी बोली, पर नारायण के सिर पर वासुकि का सहस्र फनवाला छत्र कहाँ है?

आधुनिक लक्ष्मी के डसने के डर से वह नहीं निकलते। तुम ही तो नागिन हो।

तो आओ।—कह कर मीनाक्षी उसका सर गोद में लेकर बोली, ज़रा सो लो, रात में अस्त्र-शस्त्र लेकर जागना।

कंकर बोला, पर जगायगा कौन?

नींद आप ही खुल जायगी। सुना है कि रास्ते में साल और महुए के जंगल हैं। महुए की गंध से अथवा बनफूलों के सलज्ज आवेदन से नींद खुलेगी।

हाय राम, यह कैसा कवित्व है!—कंकर सिहर उठा।

तो अपराध क्या हुआ, काँकर?—मीनाक्षी बोली, स्पर्श गुण तो मानते हो? जिसको छुआ है उसके साथ आवाजाही है। गाड़ी के झकोले लगने से हृदय के कगार खसने लगते हैं। पृथ्वी जनहीन है। अपराह्न की लाली से वसन्त अवसन्न हो उठा है। पथ भटका मन सहारे की भूख से जर्जर हो रहा है, श्रान्त शरीर अब शासन का बन्धन नहीं मानना चाहता। ऐसा अवकाश किसे मिलता है?

अर्थात्?

मीनाक्षी ने उत्तर दिया, अर्थात् शास्त्रकार और मास्टर साहब जिसे संयम कहते हैं उसका बाँध पद्मा और ब्रह्मपुत्र के संयुक्त बहाव से बहुत शीघ्र क्षय हो चला है।

कंकर ने पूछा, पर उसके लिये क्या हमारी इस निरुद्देश्य यात्रा की पृष्ठभूमि की ज़रूरत थी?

उसके सर के रूखे घुँघराले बालों पर हाथ फेरकर मीनाक्षी धीरे धीरे बोली, बहस मत करो, पहले थोड़ा सो लो।

कंकर आँखें बन्द कर चुप हो गया।

बहुत देर बाद कंकर फिर बोला, तुम मेरे इतने समीप हो कि बाँध टूटने की ज़रूरत नहीं है।. भोग का आनन्द मेरे शरीर के अणु अणु में व्याप्त है। मेरे प्रत्येक रोम-कूप में आग धधक रही है। अस्थिरता और असंयम—यही मेरा परिचय है, नीति और नियम का बंधन मेरे लिये नहीं है। समझी मीनू ?

फिर बोलने लगे ? अब मुझे शर्म लगेगी।

क्यों ?

मैंने ही तो तुम्हें आमंत्रित किया था।

ग़लत बात।—कंकर बोला, मेरा आसन स्थायी है। उसके लिये न तो आमंत्रण और न विसर्जन की ज़रूरत है। मिलन का चटुल आनन्द और वियोगजन्य वेदना—इनका गुज़ारा वहाँ कहाँ ? तुम्हारे आमंत्रण की अपेक्षा न रखूँगा, तुम्हारी अनियम का इंगित न सुनूँगा। यह सब तो ऊपर रहता है, जहाँ संयम असंयम, अश्रु हास, तर्क वितर्क और लज्जा अलज्जा की आँखमिचौनी रहती है। प्राणों में इनकी तपस्या अविच्छिन्न रूप से चल रही है, स्नायुमंडल में इनका ही विद्युत् प्रवाह अविराम गति से चल रहा है,—वहाँ आदिशक्ति का महाकुंड है। इच्छा क्या होती है ? संयम कौन चीज़ है ?

पर लौकिकता तो नहीं मानेगी ?—मीनाक्षी ने प्रश्न किया।

तो लौट चलो। लौकिकता से अधिक ऊँचा विवेक बुद्धि को समझो, मनुष्यत्व को !—कंकर बोला, पुरुष का असंयम आक्रमणशील और स्त्रियों का आत्मदाहक होता है। एक जलाता है और दूसरा जलता है। बाहर की ओर ताको, मीनाक्षी। सूर्य से सब सृष्टि है, यह मानती हो ? देखो उसी अग्निकुण्ड से कामना की लाल झलक निःसृत होती है, देखो

चैत्र का तप्त आकाश लालसा की तरह विवर्ण है, पलाश के निर्जन लाल जंगलों को देखो, मधुमक्खियों के गुंजन में वसन्तराग सुनो,—और देखो मनुष्य कहीं नहीं है, हमें चरम स्वाधीनता है ! कोई जानेगा नहीं, सुनेगा नहीं, सोचेगा नहीं, तलाश नहीं करेगा। ग़ौर से देखो मीनाक्षी, हमारी इस चौर्यवृत्ति की ओर किसी की लाल आँखें नहीं हैं, आलोचकों की ज़हरीली छुरी नहीं, निन्दा करनेवाला कोई नहीं, कोई आकर रोकनेवाला नहीं।

तुम कहना क्या चाहते हो, काँकर ?

सहसा हँस कर कंकर बोला, कहना यह चाहता हूँ कि बुड्ढे गाड़ीवान को तमाखू का लालच देकर किसी पेड़ के नीचे भेज दो।

मीनाक्षी ने उसके मुँह पर हाथ रख कर कहा, छी छी, तुम्हें ज़रा भी शरम नहीं ? तुम्हारे मुँह की आग से भाग जाने की तबियत होती है। बकवादी, अकर्मण्य।

अच्छा ! कंकर ने उठने की चेष्टा की।

हो चुका, हो चुका, रुको। दुहाई, फिर कभी चैलेंज न करूँगी !—कह कर मीनाक्षी ने मुस्करा कर उसे रोका।

गाड़ी के झूले में झूलते वे चले जा रहे थे। दूर किसी गाँव से किसी के गले की आवाज़ सुनाई पड़ी। उस आवाज़ ने जनहीनता को मानो और गंभीर कर दिया।

मीनाक्षी ?

क्यों ?

इस तरह के अवकाश में भी यदि विप्लव न उपस्थित कर सके तो कविता लिखना व्यर्थ ही है।

किस तरह का विप्लव ?—मीनाक्षी ने पूछा।

कंकर बोला, चिराचरित प्रकृति के विरुद्ध विद्रोह !

विद्रोह ? माने ?

माने, हृदय पर हाथ रख कर देखो। बिलकुल उत्तेजना नहीं है, ज़रा भी चञ्चलता नहीं। यहाँ संयम माने ही विद्रोह होता है मीनाक्षी।

मीनाक्षी हँस कर बोली, अगर मैं तुम्हें मतवाला बना दूँ ?

हँस कर कंकर ने उसकी उँगलियों में उँगलियाँ डाल कर कहा, जानता हूँ, तुम वैसा न करोगी, इसीलिये तो तुम मुझे प्रिय हो।

*

* *

संध्या के समय एक गाँव मिला। दो चार मामूली झोपड़े ही थे। पहियों की चूँ चूँ करते गाड़ीवान ने एक कुएँ के पास ले जाकर गाड़ी खड़ी कर दी। यह गाँव उसका परिचित था। आसपास छोटे छोटे किसानों के घर थे, एक ओर फूस का ढेर था, दो चार आदमी औरतों की आवाज़ें आ रही थीं। नये आदमियों का आविर्भाव देख कर बच्चे शोर करने लगे। गाँव के दो कुत्ते भूँकने लगे। गाड़ीवान ने दोनों बैग उठा कर उन्हें एक बरोठे में ला टिकाया। साथ में दो-एक और प्रेतकाय आदमी हाथ जोड़े आ खड़े हुए। गाँव भर में शोर हो गया, ज़मींदार आये हैं।

फल लगने में देर न लगी। गाँव के चौधरी ने पानी के दो घड़े और चारपाइयाँ भिजवा दीं—साथ में एक हरीकेन लालटेन। गाँव भर में अकेली लालटेन सरकार की सेवा में हाज़िर कर दी गयी। चौधरी एक लोटा भर विशुद्ध गो-दुग्ध लाये।

लड़के लड़कियाँ यह समारोह देख डर कर भाग गये थे, और लोग भी अपनी अपनी राह चले गये। रह गये केवल चौधरी, गाँव का एक स्वयंसेवक, गाड़ीवान और वे दोनों। मीनाक्षी ने पोटली खोलकर लगभग सारा सामान उन लोगों में बाँट दिया। उन लोगों ने रानी जी का प्रसाद माथे से लगाया।

कंकर बोला, तुम्हारा शकट-चालक बहुत शिक्षित है, क्यों ?

मीनाक्षी बोली, यह सब मास्टर साहब का उपदेश है, देख रहे हो न ?

रात का कुछ पता नहीं। अँधेरा और उजाला होने के समय के बीच में काल-ज्ञान होना गाँव में मुश्किल है। गाँव के वृक्षों के घेरे से चारों ओर घना अँधेरा है, इसमें से तरह तरह के पक्षियों और नाना प्रकार के जीवों के शब्द आते रहते हैं, वसन्तकालीन हवा के चलने से पेड़-पत्तों की सरसराहट और दूर पर कहीं बीच बीच में स्यारों की चिल्लाहट के साथ कुत्तों के कण्ठ का प्रतिवाद चलता है।

कंकर बोला, थोड़ी चाय चाहिये रानी साहबा!

चाय! उसके बजाय मेरा सर है।—कहते हुए मीनाक्षी ने आगे बढ़ कर कहा, साहब आराम करेंगे, तुम लोग अब जाओ।

इसी वक्त एक आदमी चार कंबल और मोटी देशी चादर लेकर हाज़िर हुआ। इसमें भी बूढ़े गाड़ीवान की साज़िश है, और मास्टर साहब की दूरदर्शिता है। कम्बल सी चीज़ सभी जगह मिलती है, और देशी चादर प्रायः तिरपाल की तरह थी। मीनाक्षी ख़ुश होकर बोली, ऐसा देश तुम्हें कहीं खोजने से नहीं मिलेगा, समझे काँकर?

चौधरी ने जानना चाहा, कुछ रसोई का इन्तज़ाम होगा या नहीं। मीनाक्षी ने बता दिया, नहीं गरम दूध से ही काम चल जायगा।

दूध का लोटा लेकर चौधरी चला गया और पन्द्रह मिनट में ही गरम दूध, चीनी और पीतल के दो गिलास एक ओर ढँक कर चला गया। दूसरी ओर आग जलाकर स्वयंसेवक और गाड़ीवान दाल-रोटी पकानेमें लगे थे। दोनों बैलों को खिलाने के लिये कह मीनाक्षी आकर खटिया पर बैठ गयी।

कंकर बोला, एक बात समझ में आ गयी कि जो चीज़ हम चाहते हैं वह यहाँ न मिलेगी।

मीनाक्षी बोली, एकान्त चाहा था, वह तो मिल गया?

कंकर बोला,—केवल एकान्त ही नहीं, अपरिचित होकर मिल जाना। इतने ही समय में यहाँ मालिक नौकर का सम्पर्क दिखाई पड़ गया। हम

पूज्य हैं, वे पुजारी—पर अनात्मीय ही रहे, मिल न सके। जहाँ भी जायँगे वहाँ सूरत बीच में बाधक बनेगी, चाल-ढाल अड़चन बन जायगी। इतनी अभ्यर्थना होने से ही इन लोगों के साथ एकाकार होना असंभव है।

अगर ग़रीब बनकर रहें?

तो और भी हास्यास्पद हो जायँगे। तब उनकी करुणा और अवहेलना में जीवन भार हो जायगा; केवल यही बात हो, सो नहीं, वे अपने मन में सोचेंगे कि यह हमारा बनावटीपन है।

किस तरह?—मीनाक्षी ने जानना चाहा।

कंकर बोला, वह देखेंगे कि हमारे ग़रीबी के छद्मवेश को फोड़कर आभिजात्य का इङ्गित चेहरे-मोहरे से, बातचीत से, चाल-ढाल से प्रकाश पा रहा है। हम जितना ही अधिक उनके बीच में जायँगे, उतना ही दूर वे हमसे हट जायँगे, उनके आदर के पीछे स्नेह नहीं है बल्कि ज़मींदार का डर है,—वे जिस दिन यह समझ जायँगे कि डरने की ज़रूरत नहीं है, उसी दिन से हम उनकी कृपा के पात्र बन जायँगे।

तो फिर क्या लौट चलने की सलाह देते हो?

नहीं आगे बढ़ेंगे पर देख-देखकर चलेंगे।

कहीं ठहरेंगे नहीं?

कंकर हँसकर बोला, रास्ते पर ही टिका जायगा, उसमें बुरा क्या है?

तो कविता कहाँ बैठकर लिखी जायगी?—मीनाक्षी ने जानना चाहा।

जितनी देर तुम रहोगी उतनी देर कविता न लिखूँगा।

मीनाक्षी सिहर उठी। बोली, तुम्हारी बात सुनकर डर लगता है। दो में से एक न हो—तुम ऐसी अवस्था सोच सकते हो?

कंकर बोला, अरे, इसीलिये तो साहित्य-चर्चा छोड़ दी है।—कहकर वह कम्बल खींचकर खटिया पर पड़ गया।

*

* *

दो महीने के बाद दोनों फिर प्रकट हुए। मध्य भारत के रास्ते वे राजपूताना की ओर चले गये थे। उद्देश्य स्पष्ट था। मीनाक्षी का इरादा था कि राजपूताना देखेंगे। राजपूताना होते हुए दोनों काठियावाड़ के पश्चिम निर्जन अरब समुद्र के किनारे गये थे। कंकर ने सोचा था, सागर-तट पर बैठकर सूर्यास्त देखे, देखे प्रथम नक्षत्र का अभ्युदय। मीनाक्षी बोली, मरुस्थल में चित्तौर और उदयपुर देखें, हिन्दू शौर्य और विक्रम के वातावरण में साँस लें। तथास्तु। कंकर बोला, मैं आधुनिक भारत के प्रथम स्वाधीनता-संग्राम क्षेत्र को देखूँगा,—जहाँ नाना साहब, ताँतिया टोपी और रानी लक्ष्मीबाई ने पहले पहल अँगरेज़ों का चक्रव्यूह तोड़ा था। आधुनिक भारत के स्वाधीनता संग्राम का जो तीर्थस्थान है, तथाकथित अंग्रेज़ी इतिहास में जो सिपाही-विद्रोह नाम से कुख्यात है,—उसी पुण्य श्मशान के दर्शन करूँगा। मीनाक्षी बोली, स्वाधीनता का पहला प्रतिवाद एक स्त्री के रक्ताक्त कण्ठ से निकला था, उसी का रक्त लेकर अंग्रेजों ने उसे सारे भारत में फैला दिया है। कंकर बोला, मैं सारा उत्तर भारत देखूँगा, जहाँ हिन्दू सभ्यता का जन्मस्थान है, जहाँ मुग़ल साम्राज्य का समाधिक्षेत्र है। वहाँ निर्जन तेज़ धूप में दिल्ली के क़िले के फाटक पर अंधे फ़क़ीर के एकतारे पर काया का गान सुनूँगा! इस पर मीनाक्षी ने कहा, मैं आगरे के क़िले की अँधेरी सीढ़ी के नीचे अकेली सोऊँगी, कान लगाकर प्रेत और प्रेतिनी का नीरव रुदन सुनूँगी, जहाँ क्षुधार्त आत्माओं का झुण्ड आकर मुझे घेर लेगा। तब कंकर बोला, मैं वृन्दाबन के उस पार सुनसान जंगल में जाऊँगा, जहाँ प्रकृति चिरराधा के वेश में युग युग से आकाश के चिर-घनश्याम की ओर मुँह उठाये हुए हैं।

निरुद्देश्य पथ के समुद्र में उन्होंने डुबकी लगाई, दो महीने बाद वे लोग फिर उत्तर भारत के एक छोटे से स्टेशन पर दिखायी पड़े।

किधर चलोगी? कंकर ने पूछा।

घर क्यों नहीं ?

जहाँ विश्राम लिया जाय ऐसी जगह सोचो।—मीनाक्षी बोली, विश्राम लेने के बाद घर चलेंगे। जाकर काम में लग जायँगे।

अंग्रेज़ी पोशाक पहने एक व्यक्ति खड़े देख रहे थे। कंकर ने बढ़ के उनसे अंग्रेज़ी में पूछा, अप ट्रेन कब है बता सकेंगे ?

कहाँ जाना है ?

विरक्त होकर उसने जवाब दिया, अप ट्रेन से।

घड़ी देख कर वे सज्जन बोले, बारह बज कर पाँच मिनिट पर।

थैंक्स।--कह कर वह लौट आया। बोला, कहाँ का टिकट लिया जाय ?

मीनाक्षी बोली, गाड़ी जितनी भी दूर जाय।

पर तुम तो कहती थीं कि विश्राम की जगह चाहिये। बताओ, कहाँ विश्राम लेना चाहती हो ?

स्थायी विश्राम चाहने पर कहती कि ख़ूब दूर चलो जहाँ विलास के प्रचुर उपकरण हों, पास रुपये रहने से जहाँ चाहो वहाँ आनन्द से रह सकती हूँ। पर वह कुत्सित आनन्द मैं नहीं चाहती, काँकर।

तब ?—कंकर ने पूछा।

कंकर का हाथ पकड़ कर आदर सहित मीनाक्षी बोली, एक ऐसा शान्ति-निकेतन खोज निकालो जहाँ तुम्हारे इस हाथ के सिवा सर रख कर सोने के लिये और कुछ न हो। जहाँ चारों ओर ऐश्वर्य बिखेर हम सब कुछ त्याग कर रह सकें।

इसके माने, मीनाक्षी ?

रात के स्टेशन के प्रकाश में मीनाक्षी एक किशोरी बालिका की तरह पुरुष के हाथ के पास मुँह छिपा कर बोली, सब कुछ नहीं कह सकती, तुम समझ लो !

कंकर के मुस्करा कर अपने हाथ की ओर मुँह करते ही मीनाक्षी ने

लज्जा से मुँह को हाथ से ढक लिया। बोली, आज तक एक दिन भी तुम्हें निकट नहीं पाया, मैं और कुछ न सुनूँगी।

कंकर ने हाथ पकड़ कर कहा, चलो जरा उस बेंच पर बैठें।

बेंच पर बैठ कर सामने की ओर ताकते कुछ देर तक दोनों चुप रहे। अप ट्रेन में अभी भी देर थी। दोनो के शरीर में दिन भर की थकान थी। रोज़ाना सोकर उठने पर वे नित नूतन देश देखते—एक जगह पर एक दिन रुकना यथेष्ट था। कभी धर्मशाला में टिकते, कभी वेटिंग रूम में और कभी किसी अभिजातीय होटल में। पर आज दिन भर में तीन बार यात्रा भङ्ग की थी। सबेरे चाय और जलपान तीन सौ मील दूर एक शहर में किया था, मध्याह्न भोजन और स्नान कुमायूँ के एक जनपद में हुआ, अब रात को यहाँ थे।

कंकर बोला, छी मीनाक्षी, तुम कह क्या रही थीं?

मीनाक्षी तुनक कर बोली, ज़रा सी बात पाने पर तुम लज्जित करना चाहते हो। सच बात ही तो कही थी कि एक दिन भी तुम्हें निकट नहीं पाया।

और यह चार महीने जो दिन-रात तुम्हारे साथ रहा?

चार महीने? लगता है कि चार मिनिट भी नहीं।

छी, मीनाक्षी।

मीनाक्षी ने एक बार उसके मुँह की ओर ताका, सहसा उसके चेहरे पर हँसी की एक झलक आ गयी—जो हँसी केवल मायाविनी ही इस जनहीन स्टेशन के निभृत अँधेरे उजाले में हँसना जानती है,—हँस कर उसने कंकर की पीठ के पास मुँह छिपा कर कहा, अच्छा, अब न कहूँगी, माफ़ करो। मैं बहुत कमज़ोर हूँ।

कंकर बोला, कमज़ोर और तुम? पत्थर की दीवार में सिर टकराने से इतने दिनों में पत्थर भी टूट जाता,—तुममें ज़रा भी कमज़ोरी नहीं है। मीनाक्षी, बेकार बात मत कहो।

मीनाक्षी बोली, बेंच के तकिये पर हाथ डाल लो, उस पर सर रख कर सोऊँगी, नींद लगी है।

हाथ पर सिर रख आँखें बन्द कर वह फिर बोली, तुम्हें लेकर घूमते डर लगता है, कहीं तुम्हें बर्बाद न कर डालूँ।

यह तुम्हारी कैसी बकवास है?—कंकर ने पूछा।

डर लगता है कि कहीं तुम जल कर राख न हो जाओ।

तुम्हारी इस आत्मगरिमा के प्रकाश का हेतु?

मीनाक्षी हँसी, ज़रा अच्छी तरह मेरी ओर देखो।

कंकर बोला, देख रहा हूँ। कितने ही शरीर-विज्ञान के लक्षण हैं, कितने ही प्राकृतिक कार्य कारण हैं। और देखता हूँ, सारे शरीर में एक मनोहर अश्लीलता है, जिसके गुण वर्णन करने में युवक साहित्यिक हो जाते हैं। और जो कुछ है वह आदिकाल से पुरुषों को मूढ़ बनाता, नीचे गिराता आया है।

मीनाक्षी बोली, बस इतना ही?

इससे अधिक ज़रा भी नहीं।

अगर कहूँ कि और भी है?

वह माया है।—कंकर बोला, वह छलना है, वही स्त्रियों का अस्त्र है, वही उनका दैन्य है। कंकण क्यों पहना है, मोहिनी रूप क्यों धारण किया है? आँखों में माया है, इंगित में छलना है, शरीर पर अलंकार हैं, पैरों में नूपुरों का क्वणन है—ऐसी अद्भुत जीव, ऐसी विचित्र, इसीलिये तो तुम लोगों पर पुरुषों का इतना आकर्षण है।

बहुत बातें सीख गये हो।—कह कर मीनाक्षी मुस्कराई।

माने?

माने, विश्राम की जगह अभी भी नहीं दे सके। देखा तो इतना पर पाया उससे भी कम—समुद्र के किनारे बैठ कर केवल लहरें ही गिनीं।

क्या तुम सचमुच विश्राम लेना चाहती हो, मीनाक्षी?

आँखें फैलाकर मीनाक्षी ने सिर उठाया। बोली, हाँ, हाँ, हाँ—चाहती हूँ। नोच नोच कर देख लिया, एक एक तिल तोल लिया, फिर भी सम्पूर्ण पर आँख न गयी। जो कुछ पूँजी थी उसे लगा कर दिग्विजय कर सकती थी, पर तुम्हें पाने में जो सर्वस्व स्वाहा हो—सब कुछ देकर भी जो रह जाय वही देकर तुम्हें पाऊँ यही मन मे आशा है।

कंकर बोला, तुमने तो मुझे सब कुछ दे दिया मीनू।

मीनाक्षी बोली, तुम दंभी हो इसीलिये तुम्हारी इस प्रकार की मिथ्या धारणा है। सब दे दिया है यही सोच कर तुम निश्चिन्त हो? झूठ, झूठ। सारा जीवन भी तुम्हें लेते-लेते अन्त नही होगा, मेरे हाथों में इतना दान है। शरीर ही सब कुछ है यह सोच कर मज़ाक़ उड़ाओगे? मायाविनी कह कर विद्रूप करोगे? हाय रे, यह नहीं देखा कि शेर के बच्चे को खेल में किस मंत्र से भुला दिया? वह क्या केवल देहतंत्र है, या मायामंत्र है?

स्तब्ध होकर कंकर बोला, कहना क्या चाहती हो?

पहले विश्राम के निभृत कोटर में ले चलो।—

मीनाक्षी बोली, नहीं, युद्ध-घोषणा करो, वहाँ जवाब दे सकूँगी।

अर्थात्, वहाँ तुम स्वाभाविक आवरण दूर कर सकोगी, यही न? एक प्रबलतर उन्माद प्रकट करोगी, क्यों?

उससे भी ज़्यादा।—मीनाक्षी बोली, चिता की रचना करूँगी, तुम उसी पर मरणान्तक ज्वाला मे जलोगे। तुम्हें वह दिखाऊँगी जो तुमने कभी नहीं देखा, वह बताऊँगी जो जान न सके। जनता के बीच घूम कर मुझे तुमने क्लान्त किया है। लोकलज्जा के घेरे में बाँध कर मुझे पंगु कर दिया है, सभ्यता के विधिनिषेध में तुमने मुझे अवश कर दिया है। एक बार साहस कर उस पटभूमि के सामने ले चलो, जहाँ मुझे लज्जा, भय, मान—कुछ न रहे, जहाँ के निरुद्देश्य निर्वासन में सारे बन्धन बिना किसी रोक-टोक के अलग कर देना ज़रा भी कठिन न होगा—उस स्वर्ग में ले जा सकते हो काँकर?

हाँ, ले जा सकता हूँ।

तभी अपना सच्चा परिचय दे सकूँगी। यह बता सकूँगी कि इतने दिनों जो जीवन बिताया है, वह केवल बृहत्तर परिचय की भूमिका मात्र है।—यह कह दृढ़ होकर मीनाक्षी सिर ऊँचा कर बैठ गयी।

कंकर ने खड़े होकर कहा, अच्छी बात है, तुम्हें उस स्वर्ग में ले जाऊँगा।—कहते हुए वह टिकिट लेने चला गया।

तब गाड़ी आने का घंटा बज गया था।

रात के अन्त में कुलियों के शोर से उनकी नींद खुली। सिर से चादर लपेटे मीनाक्षी कंकर की गोद में सर रखे गुड़ीमुड़ी सो रही थी, और कंकर खिड़की पर सर टिकाये सो रहा था। दोनों की नींद टूटी।

यहाँ उतरना होगा मीनू।

न। कह कर मीनाक्षी ने नींद भरी आँखों से उसे और लपेट लिया।—उतरने न दूँगी।

कंकर बोला, उतरना ही होगा भाई।

मीनाक्षी बोली, ओः तुम्हारी गोद बड़ी गरम है। ऐसी नींद न खोलना काँकर, बड़े अच्छे हो। रात कितनी है?

सबेरा हो गया।

झूठ बात। अभी तारे हैं, चिड़ियाँ नहीं बोल्तीं—अभी रात है, थोड़ा और सो लो।

सबेरे का उजाला देखना चाहती हो? उठ कर देखो।

मीनाक्षी फिर भी लिपटी पड़ी रही। वह सबेरे का प्रकाश नहीं है, चाँदनी है।

किन्तु यह सारी कविता कुलियों के शोर से नष्ट हो गयी। वे गाड़ी में आकर शोर करने लगे, कुली चाहिये, कुली।

कंकर ने उनकी ओर देख हाथ जोड़ कर निवेदन किया, प्रियतमा

कहती है कि अभी भी सबेरा नहीं हुआ है, इसलिये हम लोग नहीं उतरेंगे! वह कहती हैं कि आसमान पर तारे हैं, चिड़ियाँ नहीं बोलतीं—

मीनाक्षी हँसती हुई उठ बैठी, बोली, बस भी करो। अरे कुली, सामान होशियारी से उठा लो।—

कंकर की ओर देख कर बोली, बाप रे कितनी ठंडक है! कहाँ आ पहुँचे हैं?

मुँह निकाल कर देखो, हिमालय के पैरों के नीचे आ पहुँचे हैं। चलो, यहीं से अज्ञातवास के लिये चलेंगे।

प्रसन्न होकर मीनाक्षी बदन झाड़ कर उठ खड़ी हुई। बोली, चलो, देखना चाहती हूँ कि हिमालय तुमसे अधिक विशाल है या नहीं। हमारा अज्ञातवास ही विराटपर्व होगा। पर काँकर, यह तो दार्जिलिंग की तरह साहबी हिमालय नहीं है।

कंकर बोला, आँख मल कर चारों ओर देखो। यह गेरुआ पहने महा-योगी का तपोवन है। इसी लिये इसका नाम है 'हर की पैड़ी'।

कंकर की कमर में हाथ डाल कर ललित कंठ से मीनाक्षी बोली, मैं यही चाहती थी।

तो चलो धर्मशाला तलाश करें।

कुछ कदम चलते ही एक अप्रत्याशित घटना घटी। समीप ही से सुनाई पड़ा, कंकर कुमार?

पूर्वजन्म के किसी गह्वर से मानो किसी ने पुकारा हो। कंकर ने मुँह फेर कर देखा। पहचानने में ज़रा देर लग गयी। अंग्रेजी पोशाक पहने सौम्यरूप एक वयस्क युवक थे। सिर पर टोप नहीं था, गले में नेकटाई नहीं, उसके बजाय कमीज़ का कालर लौटा हुआ था। मोटी ज़ंजीर में बँधा एक बढ़िया कुत्ता साथ में था। हँसते हुए कंकर ने आगे बढ़ कर उनका हाथ अपने हाथ में ले कर कहा, आपकी सूरत पहचान में नहीं आती मृगेन दादा। आपके तो बाल पक गये।

बेवक्त नहीं पके, यथाकाल एवं यथासमय पके हैं—पर तुम यहाँ इतनी दूर ? हठात् ?

आप भी तो हठात् मिले ? मैं तो आश्चर्य में पड़ गया। मैं अपनी साथिन के साथ परिचय करा दूँ। इनका नाम मीनाक्षी देवी है, और यह हमारे मृगेन दादा हैं, डाक्टर मृगेन चौधरी।

परस्पर नमस्कार-विनिमय हुआ। मृगेन बोले, कहाँ ठहरना होगा, कुछ निश्चित है ? कंकर को तो छुटपन से जानता हूँ, थोड़ा पागल सा है। आप बताइये मीनाक्षी देवी ?

मीनाक्षी मुस्करा कर बोली, धर्मशाले में ठहरना ठीक होगा। दरवाज़े नहीं खिड़की नहीं, चितकबरी दीवारें—गिरहकट, साधू, आदमी, जानवर—वहाँ सब एकाकार रहते हैं। आपको क्या धर्मशाला पसन्द नहीं है ?

बड़ी बड़ी आँखों से मृगेन्द्र ने इस रहस्यमयी की ओर देखा। तब बोले, समझा, आप भी वैसी ही हैं! अब ज़रा भी घबराने की बात नहीं है। दोनों ताल-बेताल का इन्तजाम मैं ही करूँगा। चलिये मेरे घर।

यह कैसे होगा मृगेन दादा, हम लोग तो गली कूचे घूमने फिरने के लिये आये हैं ?—कंकर बोला।

अच्छी बात है, जो चाहे करो। आहार निद्रा का केन्द्र केवल मेरे यहाँ रहेगा, उसके बाद जो तुम्हारी तबियत हो।

मीनाक्षी बोली, आपको बहुत तकलीफ़ होगी।

मृगेन्द्र बोले, अगर तकलीफ़ हो भी तो क्या आप उसका प्रबन्ध न कर सकेंगी ?

मीनाक्षी ने एक बार भर उठा कर उनकी ओर देखा। वह मुख स्नेहसिक्त, मित्रभाव से उद्दीप्त और नम्रता से मधुर था। बोली, तो चलिये, पर आप स्टेशन किस लिये आये थे ? आपका काम तो रह गया?

मृगेन्द्र ने एक बार पटरियों की ओर देखा, उसके बाद हाथ में लगी घड़ी की ओर देखा। बोले, यह गाड़ी देखने आया था, और कोई काम नहीं है।

शायद किसी के आने की बात थी, डाक्टर साहब ?

हाँ, पर आना नहीं हुआ। आप लोग चलें।—कह कर मृगेन्द्र कुत्ते को लिये प्लेटफार्म से बाहर की ओर चले। साथ में वे लोग भी चले।

एक छोटी-सी मोटर खड़ी थी। कंकर और मीनाक्षी पीछे की सीट पर बैठ गये। मृगेन्द्र ख़ुद ही गाड़ी चलायेंगे। कुत्ते को उन्होंने पास बैठा लिया।

गाड़ी चलते चलते कंकर ने पूछा, आपसे सात बरस बाद मुलाक़ात हुई, मृगेन दादा। विलायत से कब वापस आये ?

मृगेन्द्र बोले, यही दो बरस हुए। पिछले वर्ष अमेरिका में था! हाँ, लगभग सात वर्ष ही हो गये।

कंकर ने मज़ाक़ करते हुए पूछा, आपका वह अनुभंङ्ग का प्रण अभी भी है, मृगेन दादा ?

मृगेन्द्र ने हँसते हुए कहा, बाल पक गये रे पगले, वह बातें अब छोड़ दे।

मीनाक्षी हताश होकर बोली, ओह, आधा आनन्द तो मिट्टी में मिल गया, सोचा था कि जाकर भाभी के साथ ख़ूब बातें होंगी। ताल बेताल को लेकर चल दिये, शायद जाकर झोला डंडा फैला हुआ भोलानाथ का घर देखने को मिलेगा। वाह, कैसी सुन्दर नीली नीली नदी है! आप बड़े सुन्दर देश में रहते हैं।

मृगेन्द्र बोले, हाँ प्रकृतिक दृश्यों में यह देश बड़ा सुन्दर है। नदी और पहाड़ों की इस तरह की शोभा भारतवर्ष में और कहीं नहीं है। रहते रहते साधु संन्यासियों के सारे अड्डे देखने को मिलेंगे—धूनी जला कर गाँजे का दम लगाते रहते हैं, रहने खाने की कोई चिन्ता नहीं। किसी का कोई पता ठिकाना नहीं, पर कहलाते सब महाराज हैं।

कंकर ने पूछा, पर उन्हें खाना कौन देता है ?

मृगेन्द्र बोले, कौपीन लपेट कर और गेरुआ पहन कर क्या इस देश में खाने की चिन्ता है ? और देशों की तरह भारत ग़रीब नहीं है।

तब तो इस देश में चिरकाल रहा जा सकता है डाक्टर साहब ?—कहते हुए मीनाक्षी और लोगों के साथ ज़ोर से हँस पड़ी।

दोनों ओर जंगलों की जटाओं से जटिल पहाड़ों के बीच होकर स्वप्न-लोक के समान रहस्यमय पथ सर्पिल गति से जा रही थी। शीतल मधुर पवन बह रही थी। प्रातःकालीन सूर्यकिरणों से आकाश नीला और निर्मल हो रहा था, मार्ग के समीप पत्थरों के बहने से नील नदी कलरव कर बह रही थी। कहीं बबूल के जंगल थे, कहीं निर्जन तपोवन में साधारण सी कुटी थी। बीच में ही देहरादून के रेलमार्ग की लेवेल क्रासिंग को पार कर मोटर उत्तर को ओर चली।

मीनाक्षी बोली, ऐसे स्वास्थ्यकर देश में तो आपको क्या मिलता होगा डाक्टर साहब ? आप प्रैक्टिस कहाँ करते हैं ?

मृगेन्द्र बोले, तो डाक्टरी कहाँ करता हूँ ?

फिर ?

चलिये न, देखेंगी कि जंगल पेड़ के पौधे लाकर घर में भरता रहता हूँ। लैबरेटरी है, वहाँ उनकी परीक्षा होती है, जिसे बैक्टीरियलाजी कहते हैं। हम बिलकुल जंगली बन गये हैं। समझीं मीनाक्षी देवी ?

बहुत-सा जंगल पार हो गया था। रास्ता ऊँचा-नीचा था। इस ओर बस्ती मामूली-सी थी। नदी के बहाव से हटने पर आदमियों का आना-जाना बहुत नहीं दिखायी पड़ता था। दूर दूर पर छोटे-छोटे एकाध सरकारी बँगले थे—कोई पैमायश का दफ़्तर था, कोई जंगल विभाग का केन्द्र था और कोई पुलिस अफ़सर के रहने का था। इसी बस्ती के एक निभृत बँगले के पास आकर मृगेन्द्र ने मोटर रोकी। बोले, यही मेरा घर है।

अन्दर से वर्दी पहने दो नौकर निकले। बँगले के सामने एक लान था, उसी से लगा फूलों का एक बगीचा था। इसके सिवा पाम, पीपल,

नीबू, अनार इत्यादि के वृक्ष थे। फूलों की क्यारियों में कहीं सफेद और कहीं लाल गुलाब थे। किसी में बड़ी-बड़ी चन्द्रमल्लिका, किसी में बैंगनी सूर्यमुखी,—और उन्हीं के बीच-बीच में वायलेट के बड़े-बड़े गुच्छे थे। चारों ओर मन्थर नीरव था।

सब लोग अन्दर गये। पाँच छः कमरे थे। सभी कमरे सजे हुए थे, पर मनुष्य की गन्ध भी कहीं नहीं थी। कमरे के अन्दर से ही दिखायी पड़ती थी एक ओर हिमालय की तलहटी, दूसरी ओर अन्तहीन विशाल जंगल,—बीच-बीच में बबूल के जंगलों का घनापन और दो-चार पालतू जानवरों का आना-जाना। अन्दर आकर मृगेन्द्र ने अपने कुत्ते को छोड़ दिया, वह एक बार अतिथियों के पैर सूँघ कर चला गया।

बीच में एक बार मृगेन्द्र आकर बोले, सारे कमरों में पूरा सेट है, कौन-सा कमरा लोगे?

काँकर ने मीनाक्षी की ओर ताका, मीनाक्षी ने मुँह झुका लिया। पर वह क्षण भर के लिये। वैसे ही मृगेन्द्र बोले, जान पड़ता है दोनो दो कमरे चाहते हो, क्यों?

मीनाक्षी सर झुकाये बोली, वैसा ही कर दीजिये।

अच्छा। ओ बिशुन, दो कमरे दोनों के लिये होंगे। तो आप लोग तैयार हो। बैजनाथ, चाय लाओ। यह कमरा आप लें, इस कमरे में ड्रेसिंग टेब्ल है। और यह तुम्हारा है, समझे काँकर? ए बिशुन, गुसलखाने में गरम पानी दो। अच्छा सब ठीक है। कमरे से लगा बाथरूम है,—हाँ, बाथरूम का दरवाज़ा उधर से बन्द रखना, यहाँ जानवरों का बड़ा उत्पात रहता है।

जानवर!—मीनाक्षी चौंक कर बोली। तब तो मैं इस कमरे में अकेले न सो सकूँगी, डाक्टर साहब! अच्छा हो यह कमरा उन्हें ही दें।

*

* *

अतिथि लोग दोपहर का भोजन करके घूमने निकले थे, वे शाम को लौटेंगे। घूमने में उत्सुकता उधर होती है जिधर बस्ती हो, जिधर शहर या और तरह तरह की देखने की चीज़ें हों। पर इधर उनके लिये कुछ नहीं था, केवल प्रांत और पर्वत थे, अरण्य और झरने। इस लिये दोनों कितनी दूर जा सकते थे इसका हिसाब मृगेन्द्र ने मन ही मन लगा लिया था। अतिथियों ने आज उन्हें ख़ूब आनन्दित किया था। उनकी उम्र काफी हो गयी थी, प्रायः चालीस के समीप, फिर भी आज के दिन वे इस निर्वासित विलुप्त जीवन के घेरे को छोड़ कर उसी नवीन यौवनकाल के आनन्द-मुखर दिनों में लौट गये थे। उसे आज कितना ज़माना हो गया था!

चाय के लिये बैठनेवाले थे कि पास ही दिखायी पड़ा कि एक ताँगा पत्थरों के टुकड़ों को पहियों से चूर-चूर करता हुआ उनके ही बँगले की ओर बढ़ता आ रहा है। अच्छा, तो वे पैदल नहीं लौट सके! किन्तु फिर उन्हे कुछ सन्देह हुआ। चाय का प्याला मुँह के पास से हटा कर वे आगे बढ़े और जो विस्मयजनक दृश्य उनकी आँखों के आगे आया उससे थोड़ी देर के लिये वे स्तब्ध हो गये।

ताँगा सीधे बँगले में घुस आया। पीछे की ओर एक महिला बैठी थीं। मृगेन्द्र मुस्कराते हुए बढ़ कर बोले, ताज्जुब है, तुम अकेले आ गयीं?

महिला भी मुस्कराती हुई गाड़ी से उतरीं और बोलीं, विप्रदास शर्मा की लड़की किसी चीज़ से नहीं डरती। टेलिग्राम ठीक वक्त से मिल गया था?

पाकर ही तो तड़के स्टेशन गया था।

तुम्हें बड़ी तकलीफ़ दी। बताओ तो क्या करती, पाँच मिनिट की देर से गाड़ी छूट गयी। सारी रात स्टेशन पर बैठी रही। सबेरे गाड़ी मिली।

मृगेन्द्र नम्रता से बोले, तुम्हें बड़ी तकलीफ़ हुई होगी, कल्याणी?

कल्याणी हँस कर बोली, चलो, सुन कर आश्वस्त हुई, अभी तक थोड़ी सहानुभूति तो है। पर यह चिरकाल तक रहेगी?

महिला की माँग के बीच चौड़ी सेंदुर की रेखा थी, हाथों में सौभाग्य-सूचक आभूषण थे, साड़ी का किनारा अधेड़ अवस्था के अनुसार था, सीधी-सादी पोशाक। उम्र बत्तीस-तेंतीस।

सामान्य असबाब उतार कर ताँगा चला गया। जो विप्रदास शर्मा की पुत्री हैं और जो किसी से नहीं डरती हैं वे लगभग तीन वर्ष पहले एक बार यहाँ आयी थीं, इसलिये यहाँ के सभी उनसे परिचित हैं। मृगेन्द्र बराबर सिकुड़े रहे क्योंकि किसी तरह का सामाजिक सौजन्य करने से अकृत्रिम तिरस्कार मिलना अवश्यम्भावी था। मुँह-हाथ धोकर कल्याणी एक बार सारा बँगला घूम आयी, दीवार पर टँगी तस्वीरों को देख देख कर कुछ देर रुकी खड़ी रहीं, उसके बाद आकर चाय की मेज़ पर बैठ गयी। बोलीं, मृगेन दादा, कुछ भी बदला नहीं, सब कुछ वैसा ही है। तुम भी वैसे ही हो।

मृगेन्द्र ने शान्त कण्ठ से बातचीत आरम्भ की, तुम्हारा मुँह बहुत उतरा हुआ है। शरीर में रंग ही रंग है, ख़ून नहीं।

बीमारी भी तो कुछ नहीं है, डाक्टर साहब। और तो और कभी सिर भी नहीं दुखता।—कहकर कल्याणी हँस पड़ी। उसकी हँसी में अपने प्रति प्रच्छन्न व्यंग ध्वनित हो उठा।

बिशुनलाल ने गरम चाय और काँच की दो तश्तरियों में खाना लाकर मेज़ पर रख दिया। चाय की प्याली उठा कर कल्याणी बोली, तुम मामूली से कुछ बदल गये हो।

कैसे ?

सिर के बाल सफ़ेद हो आये हैं। इसी लिये चेहरा थोड़ा बदल गया है।

मृगेन्द्र हँस कर बोले, ज़िन्दगी को जल्दी से ख़र्च कर देना ही तो अच्छा है, कल्याणी।

कल्याणी ने मुँह फेर कर दूर मैदान की ओर देखा और बोलीं, पर जल्दी जल्दी खतम कर देना तो और भी मुश्किल है।

चाय की चुस्की लेकर मृगेन्द्र बैठे रहे। बातें कम नहीं थीं, पर मानो

कहने की राह नहीं मिल रही थी। और जो कुछ भी हो, दोनों की बात-चीत में आन्तरिकता का एकदम अभाव था—इस प्रकार का तनाव था—जिसे ढीला करना बड़ा मुश्किल था। मानो यह मनोभाव स्पष्ट होना चाहता था कि एक पक्ष आक्रमणशील है और दूसरा आत्मरक्षणशील,—कौन चोट किस समय किस तरह आयगी, उसी की सम्भावना सोच कर उसके योग्य प्रत्युत्तर मन ही मन सोचा जा रहा हो। यह यंत्रणा पहुँचनेवाला अवश्य था पर यह संकट अनिवार्य था।

आजकल सुधीश कैसे हैं कल्याणी ?

कल्याणी ने मुँह फेर कर देखा और हँसी। बोली, यह जानने के लिये क्या तुम बहुत व्यग्र हो ?

व्यग्र होना बिल्कुल स्वाभाविक है—मृगेन्द्र आहत होकर बोले, उम्र में चार बरस छोटा होने पर भी वह मेरे अत्यन्त प्रिय मित्र हैं। उन्हे मैंने लिखना-पढ़ना सिखाया है, छुटपन से एक्सरसाइज़ कराई, उनके कारबार में मूलधन का इन्तज़ाम किया—

रुक क्यों गये ?

रुक गया कि कहीं तुम्हें चोट न लगे, कल्याणी।

ज़रा क्रोध प्रकाश कर कल्याणी बोली, सच बात सुन कर चोट लगेगी ? तब तो बेकार ही तुम्हारे पैरों के पास बैठ कर सत्शिक्षा का पाठ लिया था। मैं जानती हूँ कि अन्त में तुम यह बात कहते कहते रुक गये कि संसार में जो तुम्हें सबसे ज़्यादा प्रिय था उसे भी तुमने उस प्रिय मित्र के हाथों में दे दिया। यही न ?

सिर नीचे झुकाये संयत कंठ से मृगेन्द्र बोले, ठीक ही कहती हो कल्याणी। मैंने ही तुम्हारा ब्याह कराया। तुम दोनों मुझे जिस तरह प्रिय हो, तुम्हारे तीन लड़के बच्चे भी उसी तरह प्यारे हैं। वे अच्छे तो हैं ?

गर्दन हिला कर कल्याणी ने बताया कि वे अच्छे हैं।

मृगेन्द्र बोले, मैं सुधीश को प्यार करता हूँ क्योंकि इतना उदार चरित्र

का व्यक्ति कभी मुझे दिखाई नहीं पड़ा। तुम्हारे यहाँ आने में भी उसी उदार विवेचना का ही परिचय मिलता है।

कल्याणी चाय का प्याला रख सहसा उठ कर अन्दर चली गयी। उसके बाद ही लौट कर बोली, उदार विवेचना? तुम्हें क्या पता नहीं कि वे भी सारी जिन्दगी के लिये ठगे गये? मृगेन दादा, तुम्हारा आदेश पालन करने के लिये मेरी मृत्यु कितनी ही बड़ी क्यों न हो, पर एक निरपराध देवचरित्र का आत्म-बलिदान, जिसने सदा तुम्हारा अत्याचार सहा और एक बार भी प्रतिवाद नहीं किया, उसे क्या आज तुम्हारी बेकार की प्रशंसा से कोई शान्ति मिलेगी।

मृगेन्द्र बोले—सुधीश तुम्हें बहुत चाहता है कल्याणी।

कल्याणी मधुर कंठ से हँस पड़ी और बोली, अर्थात्, कहना चाहते हो कि मेरी क्षतिपूर्ति हो गयी? डरने की बात नहीं है, तुम्हारे घर में घुस कर ज़बरदस्ती तुमसे कुछ नहीं लूँगी, मृगेन दादा। कल्याणी की शिक्षा तुम्हारे ही पास हुई है, वह संभ्रम न खोएगी। फिर भी बात तो रह ही गयी ब्रह्मचारी महाशय। बचपन में बात करने में शरम लगती है, पर अब बच्चे बड़े हो गये हैं। आज अगर कहूँ कि तीन सन्तान होने के बाद भी तुम्हारी कल्याणी ने अपने देवतास्वरूप पति को केवल वञ्चित ही किया है तो तुम्हारे उस प्रिय मित्र की क्षतिपूर्ति कौन करेगा, यह तो बताओ। साधु भाषा में अगर कहूँ कि तुम्हारी बात मान कर मैंने अपने नारीत्व को क्षुण्ण किया है, तो उसका जवाब कौन देगा?

मुँह लाल कर मृगेन्द्र बोले, तुम बच्चों की माँ हो कल्याणी,—किसी की गृहलक्ष्मी हो। तुमने तो कभी कोई ग़लत बात नहीं की?

वह तुम्हारे आदेश से! कल्याणी का गला मानो एक तरह की सर्व-प्लाविनी उत्तेजना से भर उठा हो,—मैं सन्तान की माँ हूँ, मैं गृहलक्ष्मी हूँ, मैं साध्वी स्त्री हूँ,—सब कुछ तुम्हारे आदेश से हूँ। मृगेन दादा, आज मुझे अपने निकट किसी वेदना का बोध नहीं है, पर सबसे बड़ी यंत्रणा यही

है कि किसी की अद्भुत एकनिष्ठा का मैं कोई प्रतिदान न दे सकी। वह भी इस वञ्चना को प्रसन्नमुख जानता है, और मेरा सर अपनी ही प्रतारणा मे झुका रहा।

मृगेन्द्र बोले, मेरे आदेश के सिवा तुम्हारे पिता का भी आदेश यही था कल्याणी।

कल्याणी बोली, कुलशील के सम्बन्ध मे पिता के ग़लत आदर्श को तुमने प्रश्रय क्यो दिया था?

विश्वास बाबू का आदर्श ग़लत? मृगेन्द्र चाय की प्याली रखकर सहसा मुस्कराते हुए उठ खड़े हुए,—यह बात सोचने की स्पर्द्धा मुझमें नहीं है। तुम एकमात्र लड़की, कुल-परिचय को उन्होंने तुम्हारे मङ्गल के लिये ही अम्लान रखना चाहा,—इतने बड़े शास्त्रज्ञ ब्राह्मण की ग़लती पकड़ने का साहस मुझमें नहीं है।

कल्याणी बोली, बहुत संभव है यही बात सोच कर ही तुम शान्ति से हो?

मृगेन्द्र टहलते-टहलते बोले, मेरी शान्ति मृत्युपर्यन्त अक्षय रहेगी कल्याणी।

उनकी इस बात के बाद और जवाब न मिला, पर उन्होंने मुँह फेर कर देखा कि आसन्न सन्ध्या की धूमिलता मे काँपती अग्निशिखा के समान एक शीर्ण देह मे दो बड़ी-बड़ी आँखें चोट खाये शिकारी जानवर की हिंस्रता में जल रही हैं।

अरे, आओ आओ,—तुम लोगों का कब से आसरा देख रहा हूँ। कितनी दूर गये थे? तुम्हें इन लोगों की बात बताना ही भूल गया था, कल्याणी।

कल्याणी साँस छोड़ सहज भाव से बोली, यह कौन है?

यह एक जोड़ी ताज़े कच्चे लोग हैं। पागलों की जोड़ी। आओ आओ—

मीनाक्षी और कंकर हँसते-हँसते बग़ीचा पार कर ऊपर आये। मृगेन्द्र बोले, इनका नाम मीनाक्षी है, उनका कंकर—मेरा पुराना विद्यार्थी। और यह हैं मेरे दोस्त की स्त्री कल्याणी ... अ सबेरे इनके ही लिये स्टेशन जाकर तुम्हें घाते में पा गया था।

सब लोगों में नमस्कार-विनिमय हुआ।

मीनाक्षी उस समय भी हाँप रही थी। हँसते हुए कल्याणी का हाथ पकड़ कर बोली, आप नहीं आयीं इसलिये डाक्टर साहब दिन भर कैसे परेशान रहे। आज कुछ भी नहीं खा सके।

सच?—कल्याणी सस्नेह हँस पड़ी। जवाब में मृगेन्द्र ने शिकायत के रूप में कहा, पर यह बहुत अतिशयोक्ति है, मीनाक्षी।

कल्याणी बोली, झूठ है इसी लिये तो बहुत मधुर है।

मीनाक्षी बोली, अच्छा ठहरिये, सबूत देती हूँ। चलिये मेरे साथ। जो कमरा उन्होंने आपके लिये तजवीज़ किया था, वह सबसे अच्छा कमरा है, सबसे ज़्यादा सजा है।

मृगेन्द्र बोले, तुम लोग भी अगर ख़बर देकर आते तो—

कल्याणी बोल उठी, यह क्या, तुम्हारे माथे के नीचे कटा कैसे है भाई? मालूम पड़ता है कंकर ने नोच लिया है?

मीनाक्षी हँसती हुई बोली, उसके नोचने से ख़ून नहीं निकलता, सिर्फ जलन होती है।

तो मैं बताऊँ दीदी, सुनिये।—कहते हुए कंकर आगे बढ़ आया। बोला, कितनी बार मना किया, पर कौन किसी की बात सुनता है, पहले पहल पहाड़ देखने पर यह नाचने लगीं—बस, पाँव फिसला और नीचे—

फिर भी मुझे थामा नहीं, समझीं दीदी?—मीनाक्षी करुण कंठ से बोली, भाग्य से एक पेड़ की जड़ से अटक गयी!

नहीं तो अतल में चली जातीं न?—कहते कल्याणी ने मृगेन्द्र की ओर देख कर मुस्कराते हुए कहा, आदमियों का फिर विश्वास न करना,

गिरते हुए को भी वे नहीं थामते, सिर्फ़ मतलब की बात जानते हैं। उसके बाद, अब आप कहिये कंकर कुमार, घने लम्बे बाल देख कर लगता है कि काव्यरचना करते है। बताइये सच है न?

कंकर के बोलने के पहले ही मीनाक्षी बोल उठी, सावधान दीदी, प्रश्रय न दीजियेगा। ठीक पकड़ा, यह कवि हैं, इसलिये मात्रा-बोध ज़रा कम है, सारी रात कविता सुना कर आपकी भी आफत कर सकते हैं।

ठीक! कंकर बोला, आप ही बताइये दीदी, विलायत जाकर रवि बाबू को भी एक घर की सीढ़ी पर खड़े होकर एक महिला को कविता सुनाना पड़ा था कि नहीं?

वह रवि बाबू थे!—मीनाक्षी बोल उठी।

मैं ही कौन कम हूँ?—कह कर कंकर कृत्रिम क्रोध से बोला, आप लोग ठहरें, कापियाँ ला कर साबित किये देता हूँ। ऐसी कविता उन्होंने भी नहीं लिखी।—यह कह कर वह मुँह छिपा कर भाग गया। सब लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

मृगेन्द्र ने कहा, कल्याणी अब तुम थोड़ा आराम करो। इतनी-सी बातचीत के परिश्रम से ही तुम बहुत थकी दिखायी देती हो।

मीनाक्षी बोली, सचमुच आपका शरीर बहुत कमज़ोर है। बाल-बच्चे तो अच्छे हैं? आप यहाँ कुछ दिन रहिये, यह जगह बड़ी स्वास्थ्यकर है।

कल्याणी बोली, अगर डाक्टर साहब इतने दिन न ठहरने दें?

मीनाक्षी ने एक बार उनकी ओर देखा, फिर एक बार कल्याणी की आँखों की ओर। तब मुस्करा कर उठते हुए कह गयी, यहाँ मेरी अनधिकार चर्चा है।

दोनों निष्प्रभ होकर पुकारते रहे, पर मीनाक्षी भाग गयी।

*

* *

हँसी-मज़ाक़ बिल्कुल सामयिक रहता है। मीनाक्षी को लगा कि इस घर के चारों ओर विषण्णता का गुरुभार है, उसका सबब यद्यपि तलाश करने पर भी नहीं मिलता, फिर भी वह है अवश्य। अक्सर वह दिखाई नहीं देता, पर क़दम-क़दम पर उसका अनुभव होता है। किन्तु वे तो अस्थायी अतिथि हैं। उनके समान लोगों का एक दीर्घ सप्ताह कट गया यही आश्चर्य है। वे तो किसी भी दिन मन की हवा चलते ही पाल उठा कर दूर चले जायँगे।

विषण्णता के साथ ही कुछ ऐसा है जो मानो दम घोटनेवाली काली छाया के समान हो, वह अशान्ति घुमड़कर उठती तो नहीं है पर विश्लेषण करने पर मिलती अवश्य है। यह क्षुद्र संसार एक ऐसी सुनियंत्रित शृंखला से बँधा चलता है कि लगता है कि प्रत्येक व्यक्ति नियमों में चलने वाला क्रीत-दास हो। घड़ी की सुइयों के अनुसार आहार, विहार और निद्रा विधिबद्ध हो; इस नीरव नियमतंत्र को तोड़ते ही शायद बड़ा तूफ़ान उठ पड़े—उसी के आतंक से मानो मीनाक्षी की दम रुकी हो।

मृगेन्द्र सारे दिन लैबरेटरी में रहते हैं, रात में भी काम रहता है। कल्याणी किताबें और मासिक पत्र लिये अपने कमरे में रहती हैं, प्रायः चाय की मेज़ पर भी वे अनुपस्थित रहती हैं, दोनों समय भोजन के वक़्त उन्हें एक बार पाना भी काफी है। और कंकर! उसने इतने दिनों बाद मानो अपनी दुनिया का आविष्कार किया हो। वह केवल भागता रहता है, नज़र बचाता है और इशारे से पुकार कर चला जाता है।

पर इशारा पाने ही से तो उसके साथ जाया नहीं जा सकता है। इस मैदान और पहाड़ी अरण्य प्रदेश में एक छोटा-मोटा समाज बन गया है, उसको मान कर ही चलना पड़ेगा, क्योंकि वह स्त्री है। उसके सिवा नये आदमी की संभ्रमरक्षा के लिये उसको एक ज़िम्मेदारी का खयाल है। उसके लिये कोई चर्चा ज़रूर नहीं होती है, फिर भी उसकी गति विधि पर सजग दृष्टि रहना बिलकुल स्वाभाविक है। और फिर कंकर के साथ वह

जायगी ही कितनी दूर। लौटने के बाद के सवाल पर उसके पैर जाने के लिये नहीं बढ़ते। किन्तु जिज्ञासा का चिह्न बड़ा होकर सामने आता ही है, यहाँ के वातावरण में यह धुँधलापन क्यों है? प्राणों का उत्ताप नहीं है, जीवन की स्वच्छन्दता नहीं,—सिर उठा कर देखने का कोई आश्रय नहीं! सब ओर एक अजीब यांत्रिक सचलता है। नौकर तक धीमे बोलते हैं। मृगेन्द्र के चेहरे पर अत्यन्त स्निग्ध अतिथि-वत्सल मुस्कराहट है, कल्याणी के चेहरे पर मित्रता के अति निर्मल स्नेह का भाव है,—बातचीत में, आचरण में, व्यवहार में, कहीं भी दोष निकालने का ज़रा भी स्थान नहीं,—और मीनाक्षी सोचने लगी, कहीं स्वाभाविकता नहीं, किधर भी मृदु वायु नहीं बहती। लगता हो कि यहाँ के विस्तार्ण मैदान और दिगन्त-हीन आकाश में अलक्ष्य रूप से एक प्रकार की भयानक गरमी पैदा हुई हो, जिसके बाद भीषण आँधी हो।

वे चले तो जायँगे, पर जाने का कुछ बहाना होना ज़रूरी है। इस घर में रहते डर लगता है, निकलने को पैर नहीं बढ़ता। मृगेन्द्र ने कह दिया था कि कम से कम दो महीने के पहले उनके जाने का सवाल ही नहीं उठ सकता; इस बारे में उनसे बहस करना बिलकुल बेकार है, क्योंकि उनका हुक्म ज़रा भी नहीं झुकेगा। दो महीने! वह जैसे इस जन्म की बात न हो। इस भयावह शान्ति और शृङ्खला में साठ यंत्रणादायक दिन हैं? मीनाक्षी ने व्याकुल होकर मार्ग की ओर ताका,—मार्ग वैसे ही अबाध चल रहा था, अन्धकार से प्रकाश की ओर, वही मार्ग मृत्यु से जीवन के कोलाहल की ओर जा रहा था, और वही प्राचीन पथ उसी प्रकार पृथ्वी से विश्व की ओर फैला था। पर उसमें चलने की शक्ति नहीं थी, इस अखण्ड मुक्ति में भी वह वन्दिनी थी।

उस दिन सबेरे माली की अस्फुट आवाज़ सुनकर मीनाक्षी जल्दी से बाहर निकल आयी, और जो दृश्य आँखों के आगे दिखायी पड़ा उससे उसकी बोली बन्द हो गयी। थोड़ी दूर बरामदे में मृगेन्द्र चाय का प्याला

लिये बैठे थे। उनके कमीज़ की आस्तीनें चढ़ी थीं, सर के बाल बिखरे थे और चेहरा मेहनत और थकान से लाल हो रहा था। मुस्कराते हुए उन्होंने मीनाक्षी को बुला कर पास बैठाया।

बाग़ीचे के तमाम फूलों की क्यारियाँ विध्वस्त थीं, सफ़ेद गुलाब, चन्द्रमल्लिका और सूर्यमुखी धूल और कंकड़ पर छिन्न-भिन्न पड़े थे; डालियाँ उमेठी हुई थीं और डंठल टूटे थे। सारा बगीचा शोभाहीन उथल-पुथल हो रहा था।

डाक्टर साहब? मीनाक्षी ने उनके मुँह की ओर ताका।

मृगेन्द्र क्लान्त हँसी हँस कर बोले, कुछ पूछना मत भाई। अरे विशुन, दीदी के लिये एक चाय ला दो।

मीनाक्षी का उद्‌गत प्रश्न मुँह तक आकर काँपता काँपता रह गया। वह स्तब्ध ताकती रह गयी।

विशुनलाल दो प्याले चाय लाकर मेज़ पर रख गया। उस ख़ूब गरम चाय को मृगेन्द्र जल्दी जल्दी पीने लगे। फिर एक बार अस्थिर होकर मीनाक्षी बोल उठी, डाक्टर साहब—?

फिर सवाल?—कह कर डाक्टर साहब हँस पड़े और चाय का प्याला ख़तम कर जल्दी से उठ खड़े हुए।

कोई जवाब नहीं है, डाक्टर साहब?

नहीं, दीदी।—यह कह कर मृगेन्द्र इस स्वल्प-परिचिता सोदरोपमा के सिर पर बड़े स्नेह से एक बार हाथ फेर कर फिर बोले, इसका जवाब जीवन भर न दे सकूँगा बहन, अपने दादा को माफ़ करो। अच्छा, तुम बैठे बैठे चाय पियो,—मुझे थोड़ा काम है।

चर् मर् करते हुए वे अपने परीक्षागार की ओर चले गये। मीनाक्षी के हाथ के समीप चाय ठंडी हो रही थी।

शाम के समय आज चार दिन बाद कंकर लौटा। वह मसूरी गया हुआ था। मीनाक्षी उसे दूर से देखकर कमरे में चली गयी—कुछ बोली नहीं,

अभ्यर्थना भी नहीं की। यह नयी और ज़रा विचित्र सी बात थी। बग़ीचे की हतश्री दशा कंकर की नज़रों में पहले ही पड़ चुकी थी। सारा बँगला मानो गुमसुम था। ऐसी नीरवता में दुश्चिन्ता हो आती है। सन्दिग्ध मन से कंकर ने बरामदा पार कर मृगेन्द्र के कमरे और लैबरेटरी में झाँका, वे नहीं थे। बैजनाथ ने बताया, साहब मोटर लेकर शहर गये हुए हैं।

बड़ी मा जी भी क्या उनके साथ गयी हैं?

नहीं सा'ब्—बैजनाथ बोला, वे अकेले मैदान की ओर घूमने गयी हैं। उनके सिर में आजकल बड़ा चक्कर आता है, वह मोटर पर नहीं बैठतीं। छोटी माई जी घर में हैं।

कंकर कमरे में घुसा ही था कि कुछ पूछने या बताने के पहले ही मीनाक्षी ने बढ़कर उसे पकड़ा और रोने लगी। औरतों के रोने से विचलित हो उठना कायरों का लक्षण है। प्रसन्नमन, हिमालय की तरह अटल भाव से खड़े होकर कंकर बोला, क्यों, तभी कहा था न कि मेरे साथ चलो? न जा सकीं तो रोने से क्या फ़ायदा? वाह, मसूरी कैसा बढ़िया शहर है—कैसा ख़ूबसूरत मोटर का रास्ता है। दूर पर तुषारमण्डित कैलाश है—सूर्योदय और सूर्यास्त के समय उसके ललाट पर सोना चमकने लगता है—

हठात् सन्देह से उसने नाटकीय ढंग रोक कर कहा, थम जाओ, फफक-फफक कर रो क्यों रही हो? औरतों के आँसुओं में भयानक मतलब रहता है, यह मुझे मालूम है? अरे यह क्या हो रहा है? उन लोगों ने कुछ कहा है?

मीनाक्षी बोली, नहीं। हम यहाँ से चले जायँगे।

क्यों, दस-बारह दिन में मुँह तो ख़ूब भर गया है! फिर जाने की बात क्यों?

इसी समय किशुनलाल जलपान के लिये डिश और चाय ले आया। मीनाक्षी ने वह उसके हाथ से लेकर कंकर को खिलाना शुरू किया। भूखे कंकर को लोभ संवरण करना कठिन था। शहद और मक्खन लगा टोस्ट

काट कर बोला, पकड़े रहो, मैं खा रहा हूँ। ओफ़ ओह—चार दिन तुम नहीं थीं, बड़ी असुविधा हुई।

चाय समाप्त कर कंकर ने बिस्तर पर लोट लगायी। मीनाक्षी ने बैग खोल कर आईना, सेफ़्टी रेज़र, साबुन और ब्रश निकाला। फिर पानी लाकर बोली, उठो दाढ़ी साफ़ करो। मुँह जंगल हो गया है।

दाढ़ी साफ़ न करूँ तो तुम्हारा क्या हर्ज है?

तो दाढ़ी रहने दो, मूँछ बनाओ।

हजामत करने से तुम्हें कुछ सुविधा है?

कुछ है—मीनाक्षी बोली, चलो उठो।

कंकर बोला, जानती हो, यह ग़ैरक़ानूनी है?

मीनाक्षी हँसने लगी। बोली, क़ानून तुमसे सीखना होगा? कोई आदमी होता तो खामोश रहती, पर बच्चों से क़ानून सीखने से अच्छा तो गले पर उस्तरा ही चला ले।

नारी की स्पर्द्धा क्षमा करता हूँ!—कह कर कंकर हजामत बनाने बैठ गया।

मीनाक्षी ने बड़े आदर से उसके बालों में हाथ फेरते हुए कहा, खफ़ा न होना, तुम बड़े अच्छे हो, एक बात मानो। वह लोग आ न जायँ—राजा बेटे की तरह आज तुम अपने आप नहा लो। यहाँ से जाने के बाद फिर—क्यों?

विद्रोह क्षमा करता हूँ, जाओ नारी!

मीनाक्षी हँस कर कमरे से चली गई। आँसुओं का इतिहास उससे कहना नहीं पड़ा, किन्तु पश्चिम के मैदान पर रङ्गीन सूर्यास्त की ओर देख कर मीनाक्षी ने मानो अनुभव किया कि ऐसा ऐश्वर्य ऐसे मधुर वर्ण का सामंजस्य उसके हृदय की समस्त सीमा में फैल कर परिपूर्ण हो उठा है। उसे कोई शिकायत नहीं, कोई व्यथा नहीं,—इस घर की समस्त

विमर्षता और विषाद में दबी वेदना जाने किस मंत्र से आनन्द में बदल गयी ।



छिपाने को कुछ नहीं है, साफ़ साफ़ कहना भी बेकार है। ऐसा अबोध कौन है जो दोनों का सम्बन्ध न समझ सके ? फिर भी—मीनाक्षी रात के अँधेरे में अकेली बिस्तर पर पड़ी सोचने लगी, फिर भी नियति को सहस्र धन्यवाद। वे शुचिता और सद्वृत्ति की रक्षा करते चले हैं । कितने अन्धड़-तूफ़ान, कितनी दुर्बलता और परीक्षा के अवसरों का वे इतने दिनों तक अतिक्रमण करते आये हैं। बहुत बार अस्थिरता आयी, बहुत बार इसके असंयम की अलीकता उनकी आँखों के आगे आयी, फिर भी आसक्ति की अग्नि में उन्होंने मुँह नहीं झुलसा। सहज भाव से अद्भुत पर्यालोचना में इसकी प्रधानता को उन्होंने नहीं माना। इसका सबब था। यहाँ पर दोनों के प्रेम का रूप विशाल नहीं था, प्रसिद्ध उपन्यास के नायक नायिका की तरह उनके विरह-मिलन का प्रश्न ही मुख्य नहीं था, अथवा सुलभ समाज-विद्रोह, स्त्री-पुरुष का स्वाधीन प्रेम इत्यादि का प्रचार कर जाना ही उनका काम नहीं था। उनमें झगड़ा नहीं होता था, उनके प्रेम और मिलन के मार्ग में कोई बाधा नहीं थी, आसक्ति को प्रश्रय देने के लिये उन्होंने विद्रोह नहीं किया, विवाह की क्रियाएँ सम्पन्न कर घर बसाना उनके जीवन-इतिहास का अन्तिम पृष्ठ नहीं था,—उनको बहुत काम करने थे। प्रेम उन्हें पहले ही मिला, मिलन उनका पहले ही हो गया,—पर उसके बाद वास्तविक जीवन आरम्भ हुआ। मीनाक्षी सोचने लगी, नवीन जीवन किस प्रकार का होगा ? वह जिस तरह का भी हो, उसकी नींव क्रांतिकारी होगी। घर में वह शरण न लेंगे, जीवन को गृहविहीन करेंगे। असन्तोष को देश-देशान्तर में जगाते फिरेंगे। वे विपत्ति के बीच रहेंगे, दुर्गम में निवास करेंगे, दुर्योग में जायँगे। थोड़े से आनन्द में, दो बूँद

आँसुओं में, ज़रा सी सामान्य वेदना में, क्षणिक संयोग में, अल्पकालीन मोहोन्माद में,—उन्हें कुछ समय के लिये सान्त्वना मिलेगी। दायित्व-बोध की छाया पर वे न चलेंगे, ज़बर्दस्ती आ पड़ने वाले सेवाधर्म को वे हँस-कर टाल देंगे,—वह किसी भी बाध्य बाधकता को न मानेंगे ! विद्वान् लोग विद्या में डूबे रहें, गृहस्थ लोग सन्तान और दुनियादारी के खेल मे मस्त रहें, जन-सेवक मानवसेवा का दम्भ लिये रहें, धनी दरिद्र विवाद-वितर्क में पड़े रहें, और नेता और आलोचक दुर्नीति और शासन-शृङ्खला की बारीकियों में पड़े रहें,—उनका रास्ता अलग है, वे मानो इनकी ओर देखते दिन-रात हँसते चले जा सकते हैं, मानो अनर्गल हँसी इन सब के गांभीर्य को हल्का कर सकती हो, यही प्रार्थना भाग्य-विधाता के आगे है। जितनी दूर नज़र जाती थी, अतीत काल की ओर देख कर मीनाक्षी सोचने लगी, उनका कोई हर्ज नहीं हुआ है, किसी से झगड़ा नहीं हुआ है, किसी के मन में पीड़ा नहीं उठी। पाप किसे कहते हैं, यह उनकी धारणा नहीं; पुण्य किसे कहते हैं, वे यह नहीं जानते। इस अँधेरे में बिस्तर के चारों ओर मानो संसार आ खड़ा हुआ हो,—उसको कोई शिकायत नहीं, कहीं टेढ़ी भौंह नहीं;—निर्विकार भाव से मानो दोनों को स्वीकार कर लिया।

सहसा बाहर की ओर एक आवाज़ सुन कर मीनाक्षी चौंक उठी। चारों ओर निःशब्द था, रात सूनसान। शुक्लपक्ष का चन्द्रमा अस्त हो गया था, उसीका कुछ आभास पश्चिम की खिड़की पर था। आवाज़ कैसी थी, कहाँ से थी, यह कुछ समझ में न आया। उसे याद था कि इस ओर कभी-कभी जंगली जानवरों का उपद्रव होता है। पर दरवाजा बन्द था, इसलिये उधर से कोई डर नहीं था। पड़ोस के कमरे में सोने के पलंग पर जो राजकुमार सो रहा था, उसको बाल पकड़ कर खींचे बिना उसकी नींद न टूटेगी। नौकर-चाकर बगीचे की तरफ रहते हैं, उनकी पिछली नींद है, गरम लोहे से दागे बग़ैर उन्हें होश नहीं होगा और कल्याणी, उन्होंने शाम से ही दूसरी तरफ़ के कमरे में निर्वासन व्रत ले रखा है।

फिर एकाएक आवाज़ हुई। जैसे एक बड़ी नाजुक चीज़ टूट कर चूर-चूर हो गयी हो। एक तरह की अजीब सी झनझनाहट, जिसके आकस्मिक निक्षेप से एक रुदन का-सा संगीत सुनायी पड़ा। मीनाक्षी उठ बैठी।

अकस्मात् फिर एक आर्तनाद सुनायी पड़ा। अत्यन्त मृदु, एक क्षणमात्र का आर्तनाद था। पक्षी का वक्षस्थल शरविद्ध होने से जैसे निमेष भर को वह कातरोक्ति करके एकदम रुक जाता है—वैसा ही क्षणिक, वैसा ही करुण। मीनाक्षी ने रोशनी करने को सोचा, पर अपने अस्तित्व को छिपाने के लिये रोशनी जलाये बिना ही वह खामोशी से दरवाज़ा खोल कर बाहर आयी। कुत्ता दो बार भूँक कर चुप हो गया।

कंकर का दरवाज़ा खुला था। मीनाक्षी अज्ञात आशंका से डर कर पैर दबाये उस कमरे में घुसी। बड़ी धीमी चाल से बिस्तर के पास जा उसने झुक कर आहिस्ता से पुकारा, काँकर ?—अरे यह क्या, तुम जागे थे ?

काँकर बोला, हाँ, तुम क्यों आयीं ?

एक की जल्दी जल्दी चलती रुद्ध साँस दूसरे के मुँह पर लग रही थी। मीनाक्षी बोली, नींद उचट गयी। आवाज़ सुनी ?

दबे गले से कंकर बोला, सुनी।

कैसी आवाज़ थी ?

चुप ! कुछ पूछो मत।

पर मुझे डर लगता है, काँकर ?

कान में काँकर बोला, डर की कोई बात नहीं है, जाओ, सो रहो।

मीनाक्षी बोली, मैं तुम्हें दरवाज़ा नहीं खुला रखने दूँगी ! उठ कर दरवाज़ा बन्द कर लो।

कंकर ने उठ कर दरवाज़ा बन्द कर दिया। मीनाक्षी फिर अँधेरे में चली गयी।

फिर चारों ओर सन्नाटा, खामोशी। घड़ी की टिक टिक आवाज़, छाती के अन्दर की धक् धक्, रात में झींगुरों का चिल्लाना, दूर किसी

जंगली रास्ते पर अनजान प्राणी का विनिद्र अस्पष्ट कण्ठ,—कान लगा कर मीनाक्षी सुनने लगी। यह रात अजीब थी, उससे भी अजीब यह बँगला था,—जैसे यह दुनिया से अलग हो। इसके अन्दर के सारे साज सामान ने इस अँधेरे में एक अजीब सा अलौकिक अनैसर्गिक आकार धारण कर लिया हो। वह बात करते हैं, चलते फिरते हैं, आवाज़ करते हैं,—दिन के समय के सूर्य के आलोक में आत्म-प्रकाश के भय से यह सब जड़ तत्त्व का भान कर निश्चल रहते हैं, रात को इनकी नींद खुलती है, वह सिर हिला कर डराते हैं, अपने अस्तित्व की घोषणा करते हैं।

झनन् झन् झन्—

मीनाक्षी सहसा काठ होकर उठ बैठी। उसे लगा कि यह शब्द मनुष्य का किया हुआ है। उसने एक क्षण के लिये स्विच जला कर देख लिया कि रात से ढाई बजे हैं। झनझनाहट की आवाज़ की अन्तिम ध्वनि उस समय भी रुकी नहीं थी,—जैसे कि पीतल और काँसे के टुकड़ों को पत्थर के फर्श पर लुढ़काया जा रहा हो। मीनाक्षी कमरे से निकल कर पैर दाबे-दाबे बरामदे में आयी! हे रात्रि के देवता, उसके इस कुतूहल को क्षमा करो। कौतूहल के अर्थ ही नारी होते हैं। मीनाक्षी ने उसी तरह चुपचाप चलते हुए उस ओर के बरामदे में जाकर देखा कि डाक्टर साहब की लैबरेटरी की रोशनी जल रही है। खिड़की के पास जाकर रोशनी बचाये मीनाक्षी चुपचाप खड़ी हो गयी।

अन्दर दो व्यक्ति की धीमी आवाज़ आ रही थी।

—तुमने सब तोड़ डाला?

अच्छा किया। तुम्हें शान्ति से न रहने दूँगी।

मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, कल्याणी? मुझे रक्ताक्त क्यों कर दिया?

मीनाक्षी ने साँस रोक एक पल भर के लिये देख लिया कि मृगेन्द्र के माथे पर ख़ून का दाग़ था। आत्म-समर्पण करनेवाले विवश पुरुष की आँखों में मानो आँसू भी दिखायी पड़े।

कल्याणी आँसुओं के कारण विकृत कंठ से बोली, बीस बरस से तुम भी मेरे कलेजे के ख़ून से खेल रहे थे।—यह कह कर पगली ने फिर परीक्षागार के काँच के ढेरों सामान दोनो हाथों से चकनाचूर कर दिये। मृगेन्द्र ने रोका नहीं। मीनाक्षी के प्रश्न के उत्तर में उन्होंने एक बार बताया था कि उनके परीक्षागार में कम से कम दस हज़ार रुपयों के काँच के यंत्रादि हैं।

तुमने अपनी सारी सम्पत्ति मेरी सन्तानों के नाम क्यों की, बोलो?

मेरे और कोई नहीं है, इसी लिये।

आज मैंने—मैंने—कल्याणी घायल हिरनी की तरह आर्तकंठ से बोली, तुम्हारा सब आदेश, सब अनुरोध माना था। मेरे लिये और कौन-सा रास्ता था? क्यों चले आये थे? तीन अमूल्य जीवन क्यों बर्बाद किये? जिस दिन हम कोई न रहेंगे, उस दिन भी तुमने सुधीश की सन्तानों के लिये चरम अपमान की व्यवस्था कर दी!

तुमसे माफ़ी माँगता हूँ, कल्याणी।—रुँधे गले से यह कह कर डाक्टर साहब ने अपना मुँह ढाँक लिया।

माफ़ करूँगी? किस लिये? मेरे सारे जीवन को तुमने तिल-तिल कर विषाक्त कर दिया। माफी नहीं, कोई रास्ता नहीं!—कह कर कल्याणी ने ढेर के ढेर टूटे काँच पर साष्टांग लोट कर मृगेन्द्र के दोनो पैर ज़ोरों से पकड़ लिये! अपने सिन्दूर-शोभित मस्तक को पैरों पर बार बार पटक कर आर्तकंठ से बोली, माफ़ नहीं करूँगी, दया नहीं करूँगी,—नहीं, नहीं—मैं तुम्हारी मौत चाहती हूँ, मैं अपने सतीत्व की रक्षा करना चाहती हूँ,—माफ़ी नहीं, दया नहीं—

तुम मुझे ज़िन्दा नहीं रहने दोगी? तुम मेरी मौत चाहती हो, कल्याणी?

चाहती हूँ, हाँ, चाहती हूँ—कह कर कल्याणी अपनी आन्तरिक असह्य यंत्रणा और अस्थिर वेदना के उच्छ्वास से डाक्टर साहब के पैरों पर सर पटकने लगी।

आँचल का गोला बना कर मीनाक्षी ने अपने मुँह में ठूँस लिया। ज़रा-सी असावधानी से ही एक आर्तस्वर निकल पड़ा था। उसने चुपचाप अपने कमरे में आकर दरवाज़ा बन्द कर लिया। कुछ समय से पता नहीं क्यों मीनाक्षी की वह पहले की स्वभाव की कठोरता क्यों नहीं रही,—सूर्य की गरमी लगने से तुषार का स्तूप जैसे मुलायम होने लगा हो। बिस्तर पर अपना अवसन्न शरीर फैला कर उसे लगा कि उसकी आँखों के जल से रात का अँधेरा मानो और भी अँधेरा हो गया हो। पर यह अविरल अश्रु क्यों? परीक्षागार के दस हज़ार के काँच के यंत्र ध्वंस हो गये, पर इससे उसकी क्या हानि हुई? एक निर्दयी पुरुष के उत्पीड़न से एक चरित्रवती साध्वी स्त्री का जीवन व्यर्थ हो गया, इसकी चोट उसके हृदय पर लगने का कोई संगत कारण नहीं था। एक निरपराध सर्वत्यागी आदर्शवादी पुरुष का एक स्त्री की प्रार्थना से मृत्यु को वरण के लिये राज़ी होना, इससे उसकी आँखों में आँसू आना अत्यन्त भावुकता का परिचायक था। दुनिया के करोड़ों लोगों में केवल तीन प्राणियों के शोचनीय भीषण परिणाम की बात सोचकर उसका मन क्यों विचलित हो? परन्तु फिर भी बचपन हो ही गया। मानो उसके अस्थिपंजर को वेध कर टूटे काँच का एक टुकड़ा घुस गया हो और उसी की असहनीय वेदना से उस निशीथ अंधकार में मीनाक्षी की मुँदी आँखों के कोनों से टपाटप आँसू टपकने लगे।

उसकी आँखों में नींद नहीं थी। दरवाज़े के ठेलने की आवाज़ से उसने आँख खोल कर देखा कि बहुत देर का सबेरा हो गया था। लगा जैसे रात ही सत्य थी, सबेरा सपने-सा लगा।

मीनाक्षी दरवाज़ा खोलो।

उठ कर दरवाज़ा खोलने के बाद मीनाक्षी अनेक क्लान्ति लिये बाहर आकर बैठ गयी। कंकर गंभीर होकर बोला, दीदी के आचरण से मुझे बड़ी चोट लगी है। तड़के अँधेरे मुँह वे अकेली मृगेन दादा की मोटर लेकर कहाँ निकल गयीं, किसी को पता नहीं। नौकर-चाकर उस समय तक सो रहे थे।

मीनाक्षी ने काँपते गले से पूछा, डाक्टर साहब कहाँ थे ?

वे लैबरेटरी में थे। उनके कमरे में साँकल चढ़ा कर क़ैदी बना कर दीदी चली गयीं।

कह गयीं हैं कि वे निरुद्देश्य जा रही है।—कंकर बोला, मृगेन दादा ने शरम से पहले किसी को बुलाया नहीं, पर निरुपाय होकर मुझे बुलाया, मैंने जाकर दरवाज़ा खोल दिया।

मीनाक्षी ने पूछा, दीदी मोटर चलाना जानती हैं ?

हाँ, छुटपन में मृगेन दादा ने ही उनको सिखाया था। जो भी हो, वे दीदी की तलाश में गये हैं। दोनों नौकर भी उनके साथ गये हैं।—कंकर चहलक़दमी करते-करते बोला, मृगेन दादा को एक डर है कि दीदी को मोटर चलाने का अभ्यास नहीं है, हाथ भी ज़रा कच्चा है। प्रायः दो घंटे हो रहे हैं। तुम अब चाय तैयार करो, मीनाक्षी।

किन्तु डरी और काँपती हुई मीनाक्षी दीवार का सहारा लेकर फ़र्श पर बैठ गयी। ऐसा लग रहा था जैसे चारों ओर से अमंगल की काली छाया पंख फैलाये इस बँगले पर उतर आई हो। कंकर ने मीनाक्षी की ओर एक बार करुण दृष्टि से देखा और बाग़ीचे की तरफ़ उतर कर रास्ते की ओर चला गया।

फिर भी पिछली घटना मीनाक्षी के निकट बिलकुल आकस्मिक नहीं थी। वह इसके लिये तैयार थी। दीर्घ काल से जो रुग्ण हो, जीवन जहाँ जीवन के लिये ही भारी हो—उसकी मृत्यु कितनी भी करुण हो, वह एक प्रकार की सान्त्वना होती है, यह भी मानों वैसी ही थी। मीनाक्षी प्रस्तुत ही थी।

लगभग तीन घंटे के बाद कंकर लौट कर जब आ खड़ा हुआ तो वह अकेला नहीं था, कई अपरिचित लोग थे, जिनमें स्थानीय पुलिस के वर्दी पहने चार आदमी थे। समाचार अत्यन्त स्वाभाविक और साधारण था। कल्याणी देवी को तलाश कर लिया गया। मिलने पर भी वह होश में नहीं

थीं। पुलिस की खोज से पता लगा कि मोटर लेकर वह प्रातः भ्रमण के लिये उत्तर की ओर पहाड़ी रास्ते पर निकली थीं ; पर मोटर की स्टीयरिंग वह ठीक से मोड़ न सकीं, जिससे संयोग से अगला पहिया पहाड़ की ओर फिसल गया। गाड़ी उनको लिये हुए लुढ़क कर बहुत नीचे चली गयी। दो-चार पहाड़ी लोगों ने घटना समझ कर कोतवाली में खबर दी और वे लोग साज-समान और आदमी लेकर मौक़े पर गये। क़िस्सा कोताह, गाड़ी चूर-चूर हो गयी थी और बाबू सुधीशचन्द्र की पत्नी मिसेज़ कल्याणी राय प्रचण्ड आघात के कारण ख़ून से लथपथ और बेहोश हो गयीं। शहर ले जाकर डाक्टरी परीक्षा से पता चला कि कल्याणी राय के दिमाग़ की नस टूट गयी और उनके जीने की उम्मीद कम थी। डाक्टर मृगेन्द्र के घर में वे मेहमान थीं, इसलिये मृगेन्द्र बाबू ही पुलिस के साहब की मोटर में रोगी को उठवा कर फ़ौरन दिल्ली चले गये हैं। स्थानीय अस्पताल में प्राथमिक चिकित्सा से रोगिणी की हालत में कोई उन्नति नहीं हुई। ट्रंक टेलिफोन से रोगिणी के पति को समाचार दे दिया गया है। दो नौकर मृगेन्द्र बाबू के साथ दिल्ली गये हैं।

पुलिस के दो अफ़सरों ने आगे बढ़ कर बताया कि डाक्टर साहब ने जाते समय आप लोगों पर ही इस घर की देख-रेख का भार छोड़ा है। फिर भी अगर आप लोग चले जायँ तो हम लोगों पर इसकी रखवाली का ज़िम्मा रहेगा। अपना सामान आप ले जा सकते हैं।

मीनाक्षी ने अंग्रेज़ी में बताया कि वे लोग आज ही यहाँ से चले जायँगे, पर कोई सामान अपने साथ न लेंगे। वह पुलिस के अफ़सर को डाक्टर साहब के कुल मकान की चाभियाँ दे जाना चाहती है।

पुलिस अफ़सर ने एक बार कंकर के आँसू भरे मुँह की ओर देखा, उसके बाद करुण, म्लान हँसी हँस कर बोले, आप लोगों को असंख्य धन्यवाद।

तेरह

प्राचीन टिहरी गढ़वाल के पहाड़ी रास्ते पर फिर उस कथा का सूत्र मिला। अपराह्न के समय नववर्षा की गरज पशुराज की भाँति केशर फुलाकर नीलकण्ठ पर्वत प्रदेश में गूँज रही थी,—जंगल जंगल में उसी का गंभीर गर्जन दूर दूर फैल रहा था।

दूर पर एक मामूली पहाड़ी गाँव छोड़ कर दोनों दक्षिणपूर्व के रास्ते पर चले। सभ्य समाज का आश्रय उनके उपयुक्त न होता, चलतू ज़िन्दगी में उन्हें रस न मिला, वे विश्राम की खोज मे निकल पड़े। जीवन से वैराग्य लेकर नहीं, पर शान्त विश्राम की खोज में। संन्यास की ओर उनकी कोई आसक्ति नहीं थी, केवल स्नायुतंत्र के पीछे एक शान्त, सहज और निरासक्ति का लेप था। फिर भी प्रश्न उठ सकता था कि यह क्या अच्छा हुआ? कोलाहल-मुखर जीवन के मनोरम घेरे से निरुद्देश निकल भागना क्या मनुष्यत्व है?

कंधे से झोली उतार कर कंकर एकाएक खड़ा हो गया। दाहिने हाथ से माथे का पसीना पोंछा और पीछे की ओर देख कर बोला, तुम-सी तपस्विनी पाकर मुझे तपस्वी बनने मे आपत्ति नहीं है, मीनाक्षी।

मीनाक्षी ने साड़ी का छोर कमर में लपेट लिया था, दोनों नंगे पैर धूल से भरे थे। चेहरा श्रम से लाल हो रहा था। हँस कर बोली, पर तुम्हारी तरह का तपस्वी साथ में रहने से तपस्विनी होना तो बड़ा मुश्किल है। हाय रे, क्या हालत हो गयी है! नंगे पैरों चलने की आदत नहीं है, दोनों पैर तो गये! उसी वक्त कहा था न कि वहीं से कुछ खा लो?

कंकर ने पूछा, यहाँ से लौटेंगे कब?

सूर्य दक्षिणायन होने पर।

आकाश में फिर मेघ गरजे। कंकर फिर चलने लगा। मीनाक्षी पीछे-पीछे चली। कुछ दूर चलने पर दोनों फिर रुके। रास्ते के किनारे के एक झरने से मीनाक्षी ने अंजुली में भर कर पानी पिया। चिबुक पर से बह कर पानी की धार ने नीचे उतर कर कपड़ा भिगो दिया। पानी से भीगे हाथ उसने जटा की तरह रूखे बालों पर फेर लिये।

काँकर ?

कंकर घूम पड़ा।

कल्याणी मर ही गयीं, क्यों ?

कंकर बोला, मर तो वे बीस बरस पहले ही चुकी थीं, मीनाक्षी।—यह कह कर वह फिर चलने लगा।

कुछ दूर चलने पर अप्रत्याशित रूप से सहमा जल्दी से आकर मीनाक्षी ने साँस रोक कर कंकर का हाथ पकड़ लिया और काँपते गले से कहा, काँकर ?

तुम्हें क्या हो गया ?

तुम्हारी बात से डर लगता है। क्या तुम कहना चाहते हो कि मेरी भी मृत्यु आरम्भ हो गयी ?—अधीर और उत्सुक होकर मीनाक्षी ने प्रश्नसूचक दृष्टि से अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से कंकर की ओर देखा।

कंकर बोला, पर हमारे बीच संशय और बाधा तो नहीं है ? इन्हें स्वीकार करने से वही तुम्हारा बन्धन बनेंगे। भय आत्मसंशय से उत्पन्न होता है।

अगर तुम छोड़ कर चले जाओ तो ?

तो पकड़ कर रख न सकोगी ?

मीनाक्षी उसके पैरों के निकट बैठ गयी। मुँह उठा कर भग्न क्लान्त कण्ठ से बोली, पर तुम तो विप्लवी हो ?

तुम भी तो उसी विप्लव की शक्ति का अंश हो ! पाज़िटिव के बिना अकेला नेगेटिव तो प्रकाश नहीं करता।—कह कर कंकर ने उसको हाथ पकड़ कर उठा लिया। बोला, चलो, अब रास्ता खतम हो रहा है।

बहुत दूर चलने के बाद मीनाक्षी फिर एकाएक रुक कर खड़ी हो गयी। पुकारा, काँकर ?

काँकर घूम कर खड़ा हो गया।—क्या है, बढ़ आओ।

मीनाक्षी सिर झुकाए चुप रही। मुस्कराते हुए काँकर ने आगे बढ़ कर उसकी ठोड़ी उठाते हुए कहा, फिर सन्देह ? कहो, क्या कहती हो ?

मुसीबत के बारे में नहीं सोचते ? मैं औरत हूँ न, काँकर ?

ठीक है, पर मुसीबत कौन-सी है ?

तुम जानते हो।—कह कर मीनाक्षी ने सर झुका लिया।

कंकर निरुत्तर हो कितनी देर तक उसकी ओर देखता रहा। उसके बाद हाथ बढ़ा कर उसे खींच कर बोला, अपने सब प्रश्नों का उत्तर दोनों की जीवन-यात्रा में पा जाओगी। डरने की क्या बात है ? चलो रास्ता पार हो चला है।

कुछ दूर जाकर कन्धे की झोली रास्ते के किनारे उतार कंकर बोला, ठहरो, मन्दिर की गद्दी पर जाकर पता लगा लूँ।—यह कह कर वह सीधे पक्के दालान में घुस गया।

कुछ देर बाद एक गेरुआधारी व्यक्ति कुंजियों का गुच्छा लिये उसके साथ बाहर आया। उसके पीछे-पीछे दोनों दक्खिन की ओर चले। समीप ही नदी पर घाट बना था और घाट पर पार जाने के लिये एक नाव बँधी थी। तीनों व्यक्ति ने घाट से आगे कुछ दूर जाकर फूलों के एक बगीचे के बीच में बनी कुटी में प्रवेश किया। वहाँ बहुत-सी कुटियाँ थीं। चारों ओर कितने ही संन्यासी अपने अपने आश्रमों में तपस्या में रत थे। उन्होंने निगाह घुमा कर भी न देखा।

अन्दर जाकर उस व्यक्ति ने कुटीर का ताला खोल दिया। कमरा मिट्टी और पत्थर से बना था। अन्दर एक ओर कालिख भरा पत्थरों का चूल्हा था, दो कम्बल, एक बड़ी चटाई और घासफूस का तकिया था।

मालूम पड़ता था कि अभी कोई यहाँ रह रहा था। कमरे की चीज़ों को देख कर मीनाक्षी को विस्मय हुआ। जिन चीज़ों को राह किनारे का जंजाल समझ कर कोई उनकी ओर घूम कर देखना भी नहीं चाहता, वही यहाँ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इस कमरे में अभी एक संन्यासी रहता था, पर जिस दिन उसे मतलब न रहा उस दिन विदा होते समय इस कमरे को अनजान अनदेखे मनुष्य के लिये छोड़ कर चला गया; अवहेलना से लौट कर भी न देखा। मीनाक्षी ने देखा कि इसमें सब ओर दारिद्र्य है अवश्य पर इस दारिद्र्य में कहीं भी असन्तोष और निरानन्द खोजने पर भी नहीं मिलता। उसके स्थान पर चारों ओर जैसे एक गंभीरतर वैराग्य का सन्तोष हो। काठ के बर्तन, पत्थर की बटिया, टूटा शंख, मोटा कंबल, यही चीज़ें मानो यहाँ सब कुछ हों,—मानव सभ्यता का कोई उपकरण होने से यहाँ रसभङ्ग हो जाता, छन्दोभंग होता। इनमें ही खड़े होकर अपने शरीर पर को साड़ी और कुरती जैसे मीनाक्षी के सारे शरीर में अस्वस्ति होकर चुभने लगे।

कंकर बोला, नज़दीक ही पहाड़ है, साँप बिच्छू हो सकते हैं। देखती हो खिड़की और दरवाज़े बन्द करने के लिये कितने ही तख्ते पड़े हैं ?

मीनाक्षी बोली, इधर देखो, रुद्राक्ष की माला है, उधर चन्दन और पत्थर है।

कंकर बोला, आज तांत्रिक विधि से पूजा की जाय तो कैसा हो ? तुम दिगम्बरी बनोगी ?

तभी पथप्रदर्शक व्यक्ति ने चिराग़ जलाने का सामान लाकर हाज़िर किया। दो कम्बल और ले आया। तब बोला, आज पास वाले आश्रम में यज्ञ होगा, रात को आप लोगों को प्रसाद मिलेगा।—यह कह कर उस दिन के लिये जैसे उसने बिदा ले ली।

मीनाक्षी उत्साहपूर्वक बोली, अपना झोला खोलो। छाल के दो कपड़े निकालो। ठहरो, पहले कमरा सजाऊँ।

पेड़ पत्ती बाँध कर मीनाक्षी ने झाड़ू तयार की। कंकर ने घर सजाने का सामान किया। ऐसा दुर्लभ आश्रय मनुष्य के जीवन में कम ही मिलता है। घर यहाँ नगण्य है, परन्तु चारों ओर का वातावरण ही जैसे-दुर्लभ हो। पर्णकुटी के अन्दर का दरिद्र जीवनयात्रा का मोह कुछ नहीं है क्योंकि दरिद्र वरण करना जीवन में गौरव वृद्धि नहीं पाता, परन्तु पुष्प-लतावितानपूर्ण इस प्रकार का आँगन, उसके नीचे तेज़ बहनेवाली स्वच्छ नीलधारा, पर्वत की ऐसी शोभा, तपस्या के उपयुक्त ऐसा मनोरम स्थान—यही सबसे बड़ी प्राप्ति है। इसे वैराग्य का विलास कहो, कवित्व कहो, अवैध आत्मगोपन कहो—मीनाक्षी सब स्वीकार कर लेगी। फिर भी प्रश्न होता है कि उन्हें इस ओर ही आनन्द क्यों मिलता है? दोनों के आजीवन विप्लववाद में ऐसी अद्भुत निरासक्ति क्यों है? वह कुछ जमा करते नहीं, खोजने से लालच नहीं मिलता—यह उत्कट आधुनिकता है या अत्यन्त प्राचीन काल का है—इस सबसे बहस नहीं। पर यह उनके लिये स्वाभाविक है। उन्हें निन्दा से भय नहीं, सभ्य समाज में उनकी आँखों में शर्म नहीं, उन्हें नागरिक जीवन के विपुल उपकरण-बाहुल्य-विलास में आनन्द की सामग्री नहीं मिली—पर इस दारिद्र्य की कल्पना में उन्हें अजस्र रस का भंडार मिल गया।

कुटी का द्वार खुला रहा। दोनों आकर नदी के शीतल जल में उतरे। नदी का प्रवाह अत्यन्त द्रुत था, दोनों ओर गगनस्पर्शी पर्वतश्रेणियाँ थीं और उन पर होकर भैरव गर्जन करते जा रहे थे कृष्णवर्ण मेघ,—सन्ध्या घनी होती जा रही थी। नदी के प्रबल बहाव में उल्टे तैरना कठिन हो गया,—उनकी ठंढ से सुन्न देह मानो बाधा और बन्धन छुड़ा कर बह चली।

वह स्नान अद्भुत था, संतरण अद्भुत था। संभ्रम खोने का भय नहीं, उत्तर देने का प्रश्न नहीं,—स्त्रियों और पुरुषों के बीच वह आरण्यक वन्य प्रकृति जाग उठी। मुक्त केशराशि के साथ ही प्राणों की ग्रन्थियाँ भी

मानो सब खुल गयीं। सारे संसार को डुबा कर अतल तल में बैठ कर जैसे वह देख लेना चाहते थे कि भीतर क्या है। सब चीज़ों के अन्तिम उद्देश्य को मानों वे डुबकी लगा कर निकालना चाहते थे। बहुत देर बहते बहते उन्होंने एक घाट पर के बड़े पत्थर को पकड़ धारा से आत्मरक्षा की। सारा शरीर सुन्न—बर्फ सा ठंढा हो रहा था। कंकर ने हठात् प्रश्न किया, तुम्हारी साड़ी कहाँ गयी?—मीनाक्षी उस अन्धकारप्राय संध्या में नदी मे पड़ी पत्थर की शिला पर चढ़ परेशान खरस्रोता नीलधारा के चारों ओर देखने लगी।



प्राचीन ऋषि लोग जिसका उपयोग करते थे वह वल्कल तो मिला नहीं, पर वृक्ष की छाल से जो कपड़ा बन सका उसी को धारण कर मीनाक्षी को सन्तोष करना पड़ा। कंकर जाकर ढेरों फूल ले आया। सफेद और लाल गुलाब, वनमल्लिका, सूर्यमुखी—और भी कितने ही जाने अनजाने फूलों के गुच्छे। वृक्षों की टहनियों से रेशे निकाल कर पतली लकड़ी के सहारे माला तैयार हुई। मीनाक्षी ने दीप जलाया,—गले की चेन, हार और हाथों की सोने की चूड़ियाँ निकाल कर अलग रख दीं। उसके बाद पत्थर पर घिस कर चन्दन तैयार किया गया। रुद्राक्ष की माला आयी, उसमें से एक लड़ मीनाक्षी ने कंकर के गले में डाल दी और दूसरी लड़ में से उसके दोनों हाथों में लपेट दी। ललाट पर चन्दन लगा दिया। कमर में गुलाब की माला लपेट दी। इस प्रकार पुरुष का शृङ्गार हो गया।

मीनाक्षी, अब तुम तैयार हो जाओ।—कह कर कंकर ने एक नज़र दरवाज़े की ओर देखा। बाहर वर्षा का झर् झर् शब्द हो रहा था और भीतर घृत-दीप की शिखा काँप रही थी। पल भर के ही लिये, उसके बाद ही वह बोली, सब खुला रहने दो—खिड़की दरवाज़े सब। आओ, मैं प्रस्तुत हूँ।

किन्तु कंकर स्वयं ही आगे बढ़ कर बोला, एक दिन गहने पहनने की लज्जा से कमरे से भाग गयी थीं, आज अपने ही हाथों तुम्हें अलंकृत करूँगा। न, बाधा न देना, सब उतार दो, लज्जा दूर कर दो। वैसी ही खड़ी रहो जैसे पौराणिक काल मे तुम विश्वामित्र की ध्यान-दृष्टि के सामने आकर खड़ी हुई थी।

मीनाक्षी तांत्रिक के समान उसका आदेश पालन कर आँख बन्द किये मुस्कराती खड़ी रही।

कंकर ने उसके खुले बालों में कुरुवक पुष्प गूँथ दिये, गले में मल्लिका का गुच्छा लटका दिया। दोनों हाथों मे सूर्यमुखी के स्तवक बाँध दिये। कटितट में लाल गुलाब की लहरी झुला दी। वक्ष युगल पर गौरीफल की झालर बाँधी। दाड़िम के फूल के नूपुर बनाये। तब शान्तकण्ठ से वह बोला, अब एक प्रसिद्ध उपमा का प्रयोग कर सकता हूँ। समस्त आभरण-हीन निरावरण प्रकृति को ऋतुराज ने आकर अलंकृत किया। उसके ही स्पर्श से तुम्हारे सर्वांग में स्तवक स्तवक में फूल खिले। लज्जा का तुमने स्वेच्छा से त्याग किया, पर उसने तुम्हारी लाज ढाँक ली।

मीनाक्षी पत्थर की मूर्ति के समान साँस रोके स्तब्ध खड़ी रही। कपाल और माँग में लाल चन्दन लगा कर कंकर बोला, यह तुम्हारे चिरस्थायी सौभाग्य का चिह्न है—मैंने अपने हृदय के रक्त से यह निशानी लगा दी। अब पुष्प-शय्या की रचना करो।

बाहर आँधी का प्रमाद, मेघों का गुरु गर्जन, घनी जल धार का अविश्रान्त शोर, खुले द्वार से बीच-बीच में बौछार—किन्तु उस क्षुद्र पर्णकुटी के भीतर मानो मोर-मोरनी नाच उठे। आकाश भर में जैसे करुण विरह-वेदना जाग उठी हो, उन्मत्त आँधी में उसकी वाणी दिग्दिगन्त में फैल रही थी,—वर्षा की जल-धारा में, मेंढक के टर्राने में, झिल्ली की झनकार में, विवर्ण अन्धकार की गीली हवा में,—जैसे कोई दुर्भाग्यपूर्ण विप्लव की घोषणा हो रही हो; मानो उस विप्लव का निगूढ़ अर्थ उन्मादिनी प्रकृति

के सर्वाङ्ग में दृष्टिगोचर हो रहा हो, मानो चिरपलातक ऋतुराज के पलायन में वह आँसू बहा रही हो। इसी कारण वसन्त के बाद नववर्षा होती हो।

और भीतर इसके विपरीत था। जिस पुष्प-शय्या की रचना हुई थी वह मानो चिताशय्या हो; धधक-धधक कर जल रहा हो, उस पर चिर-पलातक का अस्थिदाह होगा। अग्निरूपिणी एक बार आगे बढ़ी, द्वार के पास खड़े हो अँधेरी बरसात की ओर आवेशपूर्ण नेत्रों से देख कर अजीब तरह से हँसी, आँधी की गरज की ओर मुँह उठा कर वह मन ही मन बोली, तुमसे डरती नहीं, यह समाचार पृथिवी पर घोषित कर दो—यह कह उसने कुटी का द्वार बन्द कर दिया।

